ईश्वरीय सृष्टि का अद्भुत चमत्कार



एक पुरातन ऋषि का दिव्य जन्म परमपिता परमात्मा की विचित्रता से युक्त, अद्भुत और विलक्षण सृष्टि का उद्घाटन पूज्यपाद गुरुदेव श्रृङ्गी ऋषि कृष्णदत्त जी महाराज के प्रवचनों से हुआ। वह ईश्वर का एक अलौकिक और दिव्य प्रकटीकरण है और सृष्टि के इतिहास की एक मात्र, विलक्षण अद्भुत घटना भी। पूज्यपाद गुरुदेव का जन्म सृष्टि सम्वत् १९६०८५३०४३ माह अश्विन, कृष्णपक्ष तृतीया, विक्रम सम्वत् १९९९, ईसवी सम्वत् २७ सितम्बर १९४२ को, उत्तर प्रदेश के गाजियाबाद जिले के, ग्राम खुर्रमपुर, सलेमाबाद में एक विशेष बालक ने जन्म लिया। बालक जन्म से ही एक विलक्षणता से युक्त था और विलक्षणता यह कि जब भी यह बालक सीधा, शवासन की मुद्रा में, कुछ अन्तराल लेट जाता या लिटा दिया जाता, तो बालक की गर्दन दायें-बायें हिलने लगती, लगभग १५ मिनट वेद मन्त्रोच्चारण होता और उसके उपरान्त सृष्टि के आदि काल से वर्तमान काल तक के विभिन्न कालों के स्वयं और विभिन्न ऋषि-मुनियों के चिन्तन और घटनाओं पर आधारित ४५ मिनट तक एक दिव्य प्रवचन होता। बाल्यावस्था होने के कारण, प्रारम्भ में आवाज अस्पष्ट होती और जैसे-जैसे आयु बढ़ने लगी, वैसे-वैसे ही आवाज और विषय दोनों स्पष्ट होने लगे। पर एक अपठित ग्रामीण बालक के मुख से ऐसे दिव्य प्रवचन सुनकर जन मानस आश्चर्य करने लगा, बालक की ऐसी दिव्य अवस्था और प्रवचनों की गूढ़ता के विषय में कोई भी कुछ कहने की स्थिति में नही था। ग्रामीण, निर्धन और अपठित समाज होने के कारण भूत प्रेत का प्रभाव मानते हुए बहुत-सी चिकित्सा भी कराई गई, पर सब व्यर्थ रहे। क्योंकि बालक की यह प्रवचन क्रिया तो यौगिक थी यह तो सतत् ऐसे ही चलती रही। आवाज जब कुछ स्पष्ट

हुई तो इस स्थिति का स्पष्टीकरण भी दिव्यात्मा के प्रवचनों से ही हुआ। कि यह आत्मा सृष्टि के आदिकाल से ही विभिन्न कालों में शृङ्गी ऋषि की उपाधि से विभूषित और सतयुग के काल में आदि ब्रह्मा के शाप के कारण इस युग में जन्म लेने का कारण बनी। और इस जन्म में अपठित रहने की स्थिति में भी जैसे ही यह शरीर श्वासन की मुद्रा में जाता तो कुछ अन्तराल बाद स्वतः ही योग समाधि की स्थिति बन जाती। जहां इस दिव्यात्मा का पूर्व जन्मों का ज्ञान उद्बुद्ध हो जाता और जैसा काल देखा था उस काल के अनुकूल व्याख्यान कण्ठ आ जाते। क्योंकि, जन्म जन्मान्तरों के संस्कार स्मृति में, अन्तःकरण में विराजमान रहते हैं। और अन्तरिक्ष में उपस्थित सूक्ष्म शरीर धारी दिव्यात्माओं के समक्ष एक सत्संग सदृश्य स्थिति बन जाती, जिसमें इस महान आत्मा का सूक्ष्म शरीरधारी आत्माओं के लिए प्रवचन होता। जिसमें इस आत्मा के पूर्व जन्मों के शिष्य महर्षि लोमश मुनि महाराज, और पूज्य महानन्द जी के प्रवचन भी होते। क्योंकि इस दिव्यात्मा का स्थूल शरीर यहां मृत्यु लोक में स्थित होने के कारण, वहां अन्तरिक्ष में दिव्य आत्माओं के सम्मुख सत्संग में दिया जाने वाला दिव्य प्रवचन, इस शरीर के माध्यम से यहाँ उपस्थित जन मानस को भी सुनाई देते। इन प्रवचनों में ईश्वरीय सृष्टि का अद्भुत रहस्य समाया हुआ है, ब्रह्माण्ड की विशालता, प्रत्येक लोक में जीवन की अनिवार्यता का बोध, सृष्टि का उद्देश्य, पूर्व कालों में विज्ञान की विशालता का दिग्दर्शन, वैदिक संस्कृति का उज्ज्वलतम स्वरूप, आत्मा, परमात्मा और प्रकृति का स्वरूप, विभिन्न कालों का आँखो देखा सदृश्य वर्णन, भगवान राम और भगवान कृष्ण के जीवन की दिव्यता का साक्षात दर्शन, समाज में प्रचलित रूढ़ियों का निवारण करने वाली दृष्टि, क्या कुछ दिव्य नहीं है इन दिव्य प्रवचनों में ? ये किसी भी मनुष्य को, समाज का और राष्ट्र को उच्च कोटि का जीवन जीने का कारण पैदा करने का सामर्थ्य रखते है।

पूज्यपाद गुरुदेव की २० वर्ष की अवस्था तक ये प्रवचन ऐसे ही जनमानस को

आश्चर्यचकित और उनका मार्गदर्शन करते रहे। परन्तु कुछ प्रबुद्ध महानुभावों ने इन प्रवचनों की इस अमूल्य निधि को सुरक्षित रखने के उद्देश्य से सन् १९६२ से शब्द ध्वनांकित यन्त्र (टेप रिकार्ड) संरक्षित करने का निश्चय किया, और यह क्रम पूज्यपाद गुरुदेव के महाप्रयाण ईसवी सम्वत् १५ अक्तूबर १९९२, माह कार्तिक, कृष्णपक्ष चतुर्थी, विक्रम सम्वत् २०४९ सृष्टि सम्वत् १९६०८५३०९३ को हुआ था।

इस अन्तराल पूज्यपाद गुरुदेव के १५०० प्रवचन, टेप रिकार्ड से संरक्षित किये गये। जिनमें सृष्टि के अनन्तकाल की अमूल्य धरोहर निहित है। हम उनको व्यवस्थित रूप से और अनुसन्धानात्मक दृष्टि से पुस्तकों के रूप में प्रकाशित कर रहे हैं। परमात्मा की अनुपम कृपा से प्राप्त, इस अमूल्य धरोहर को जन जन तक पंहुचाने के प्रयास में योगदान देने के लिए, प्रत्येक वैदिक धर्मी को सहयोगी बनना चाहिए। जिससे हम सृष्टि के आदि काल से लेकर आधुनिक काल तक की मानव गाथा को सभी के सम्मुख रख सकें। विश्व कल्याणार्थ की भावना से निहित इस महान ज्ञान की वसुधैव कुटुम्बकम की संस्कृति को प्रसारित कर सकें।

पर्वों का वास्तविक स्वरुप

प्राक्कथन

पर्वण् शब्द से पर्व शब्द की उत्पति होती है। जिसका अर्थ पवित्र दिनों में परिवर्तन करना, अन्तः करण में पवित्र अंकुरों का उत्पन्न होना भी है। पर्व शब्द का अभिप्राय, उत्सव है, जो आनन्दित करें और जीवन को उत्सव, प्रसन्नता से भर दे, जो मानवीय जीवन मूल्यों को मनुष्य के स्वभाव में अंकुरित कर दे, इसलिए वैदिक काल से हीं पर्व जीवन को नैतिकता से सींचने का महत्वपूर्ण और मुख्य कारक रहे है।

भारतीय संस्कृति में मनुष्य को मोक्ष की ओर प्रेरित और मार्ग दर्शित करने के बहुत से कारण, निहित किए गए, पर सबसे महत्वपूर्ण और उत्साहित करने वाले उसके वर्ष भर विभाजित, आयोजित "पर्व" है, जिनमें कुछ सांस्कृतिक, पर्व हैं। दीपावली का जो पर्व है, मानो देखो, वह सृष्टि के आदि से चला आ रहा है। **"सृष्टि के आदि से दीपावली का पर्व आया।-पूज्यपाद गुरुदेव।"** परन्तु कालक्रम में उस पर्व के साथ कुछ और घटी घटना भी उसके साथ जुड जाती है । जैसे दीपावली पर भगवान राम का वन से, लंका विजय के पश्चात अयोध्या में आगमन होना । शिवरात्रि के दिवस महाराजा शिव का राजतिलक होना।

आचार्य कहता है क्या यह जो श्रावणी पर्व पर वेदों का पठन पाठन होता है-पूज्य महानन्द जी। श्रावणी शब्द श्रु श्रवणे धातु से ल्युट् प्रत्यय पूर्वक छन्दसि (वेदार्थ) में स्त्री लिंग में श्रावणी शब्द सिद्ध होता है। जिसका अर्थ होता है सुनाये जाने वाली। क्या सुनाये जाने वाली? जिसमें वेदों की वाणी को सुना जाये। वह **"श्रावणी"** कहाती है। अर्थात् जिसमें निरन्तर वेदों का श्रवण-श्रावण होता रहे। वह श्रावणी है। वसन्त पञ्चमी अपने महापिता का जन्म दिवस आज भी हम मनाते हैं।

"जब हम आश्रमों में रहते थे तो ब्रह्मा जी के जन्म दिवस की प्रथा को प्रायः मनाते

रहते थे। आज भी वो परम्परा चली आ रही है मानो जिसको हम वसंत ऋतु में, वसंतम्वसंत वसंत पञ्चमी कहा करते हैं।-पूज्य महानन्द जी" आज भी भारत में वसन्त पञ्चमी को हम सरस्वती दिवस के रुप में मनाते हैं।

"होलिका, जो प्रकृति कि मानो देखो, पूजा की जाती है। जिस दिवस में देखो, यहाँ याग किए जाते हैं, पञ्चीकरण यागों में मानव सदैव परणित रहता है। मेरी पुत्रियाँ प्रातःकालीन, क्या सांयकाल को मानो देखो, याग के लिए तीन तीन समिधा ले करके, याग में प्रदीति मानो देखो, याग की प्रथा को ऊर्ध्वा बनाने वाली, मेरी पुत्रियाँ मानो देखो, स्वच्छ वस्त्रों को धारण करके मानो उसमें प्रभु के गान गाते हुए, जहाँ याग होता है, वहाँ समिधाओं को ले करके जाते हैं।-पूज्य महानन्द जी"
प्रत्येक पर्व अपना धार्मिक, सामाजिक एवं ऐतिहासिक महत्व रखता है। इसी सन्दर्भ में भारत में विभिन्न पर्वो को उत्सव के साथ मनाया जाता है जिन्हें हम त्यौहार भी कहते हैं। ये पर्व वर्तमान काल में अधिकतर भारतवर्ष में ही मनाएं जाते हैं, यद्यपि इनका सम्बन्ध समस्त पृथ्वी मण्डल से है। ये पूरे देश में उत्साह के साथ मनाए जाते हैं। हमारे देश के प्रत्येक त्यौहारों में प्रमुख कार्यक्रम और सामूहिक समारोह आयोजित किये जाते हैं। इन त्यौहारों अर्थात पर्वों को प्रत्येक को अनूठे तरीके से मनाया जाता है। भारत सभी प्रमुख त्यौहार जैसे श्रावणी पर्व, विजय दशमी, दीपावली, वसन्त पंचमी, होलिका, नवरात्रि, शिवरात्रि, श्राद्ध, देव दानव संघर्ष इत्यादि।

पर्व का एक अर्थ गठबन्धन भी होता है, जैसे ऋतुओं की सन्धि काल में पर्वों का रहा है। भारतीय विभिन्न त्यौहार सामूहिक रुप से,मिल जुलकर मनाते हैं। सभी लोग आपसी भेदभाव को भुलाकर इन त्यौहारों का एक साथ आनन्द लेते है। इसके साथ ही आपसी प्यार और सद्भाव की भावना देखने को मिलती है।

1. श्रावणी का महत्त्व-840811

जीते रहो! देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भान्ति, कुछ मनोहर वेद मन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेदमन्त्रों का पठन पाठन किया। हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है, जिस पवित्र वेदवाणी में, उस मेरे देव परमपिता परमात्मा की महिमा का गुणगान गाया जाता है, क्योंकि बेटा! वे महिमावादी, अनुपम मानो यज्ञोमयी स्वरूप माने गएं हैं। मुनिवरों! देखो, परमपिता परमात्मा के सम्बन्ध में जिस प्रकार भी मानव कल्पना करना चाहता है उसी रूपों में वे परमपिता परमात्मा दृष्टिपात आने लगते हैं। उनको यज्ञोमयी स्वरूप स्वीकार करोगे तो वे यज्ञोमयी स्वरूप दृष्टिपात आने लगते हैं, उसके विज्ञानमयी स्वरूप का वर्णन करने लगोगे तो वे विज्ञानमयी दृष्टिपात आने लगते है। परन्तु उसको क्रिया में लाने वाला, क्रियाशीलता में दृष्टिपात करते हैं तो वे सर्वत्र क्रियाओं का एक मूलक कहलाए गएं है।

यज्ञोमयी पवित्रता

तो मुनिवरों! देखो, वह मेरा देव, परमपिता परमात्मा है उसके जब गुणों के गुणावधान में हम प्रवेश करते हैं, तो जिस भी गुण से उसकी कल्पना करते हैं उसमें वे अनन्तमयी दृष्टिपात आने लगते है। जैसे हमारे यहाँ आज का वेदमन्त्र यज्ञोमयी पवित्रता की चर्चा कर रहा था और यह उच्चारण कर रहा था कि प्रभु यज्ञोमयी स्वरूप है। वह मेरे प्यारे! विज्ञानां भविते देवाः वह यज्ञोमयी स्वरूप माना गया है और यज्ञोमयी में भी पवित्रतम् में उसकी कल्पना की जाती है। वह विज्ञानवेत्ता है, विज्ञानमयी स्वरूप है मानो वह योगेश्वर में योग सर्वस्व है। तो इसीलिए हम उस परमपिता परमात्मा की अपने में आराधना करते चले जाएँ और मुनिवरों! अपने प्यारे प्रभु का गुणावधान करते हुए, उस परमपिता परमात्मा की महती का हम सदैव वर्णन करते चले जाएँ और उसको अपना वरणीय स्वीकार

करते हुए, अपने में उसे धारण करते हुए, संसार सागर से पार हो जाएं।
तो आओ, मेरे पुत्रो! विचार विनिमय क्या है? कि उस परमपिता परमात्मा के गुणों को हमें अपने में धारण करना चाहिए। आज का हमारा वेदमन्त्र क्या कह रहा था। आज का वेदमन्त्र कुछ यागों के सम्बन्ध में चर्चा कर रहा था। मेरे प्यारे महानन्द जी! भी मुझे प्रेरणा दे रहे थे। वेदों के पठन पाठन का जो क्रिया कलाप अथवा उसमें जो यज्ञोमयी स्वरूप का वर्णन आ रहा था वह बड़ा विचित्रतम माना गया है। प्रत्येक मानव यज्ञोमयी अपनी आभा को ऊँचा बनाना चाहता है। हमारे यहाँ, परम्परागतों से यागों का बड़ा चलन और उनमें बड़ा विचित्र विज्ञान सदैव निहित रहा है। प्रत्येक मानव उसके ऊपर कल्पना अथवा अपनी धारा का वर्णन करता रहा है। परन्तु आज का हमारा वाक यज्ञोमयी कर्मणां देवाः यज्ञ के भिन्न भिन्न प्रकार के स्वरूपों का वर्णन हमारे यहाँ प्रायः वैदिक साहित्य में आता रहता है।
आज मैं कोई विशेष चर्चा प्रगट नहीं करूँगा। आज मेरे प्यारे महानन्द जी! अपने कुछ उद्गार प्रगट करेंगे। इनका विचार सदैव प्रेरणादायक और महानता की प्रतिभा का प्रतिशोध कहलाया जाता है। तो आज का हमारा वाक्य क्या कहता है कि हम परमपिता परमात्मा की जिस सम्बन्ध में कल्पना करने लगेंगे। वे प्रायः हमें उसी में प्राप्त हो जाते है। परन्तु आज मेरे प्यारे महानन्द जी! अपने उद्गार प्रगट करेंगे।
पूज्य महानन्द जीः ओ३म् समिधानि श्वन्धना वाचन नमाः गतां रथं या प रथप सर्वा।

श्रावणी पर्व का आधार

मेरे पूज्यपाद गुरुदेव! मेरे भद्र ऋषिमण्डल! मेरे पूज्यपाद गुरुदेव अभी अभी परमपिता परमात्मा के सम्बन्ध में अपने उद्गार प्रगट कर रहे थे। परन्तु मेरे पूज्यपाद गुरुदेव तो सदैव प्रभु के सम्बन्ध में अथवा उसके यौगिक रूपों का वर्णन, परम्परागतों से ही, इनका एक विषय रहा है और उस विषय के ऊपर ही अपना अधिपथ्य करते रहे हैं। जहाँ इनकी विज्ञानमयी, इतनी ऊँची उड़ान परमपिता परमात्मा के सम्बन्ध में प्रायः रही हैं, परन्तु आज मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव को कुछ परिचय देने

आया हूँ और वह परिचय क्या है? कि आज का दिवस रक्षाबन्धन दिवस अथवा श्रावणी कहलाता है। इसको हमारे यहाँ श्रावणी के रूपों में, श्रावणी व्रत भी कहा जाता है। ऐसा हमारे यहाँ, परम्परागतों से कल्पना मानी गई है। इस दिवस को हमारे यहाँ रक्षाबन्धन के रूपों में भी परणित किया जाता है। हो सकता है कि मेरे पूज्यपाद गुरुदेव रक्षाबन्धन के शब्द को न जानते हो। परन्तु इसकी कल्पना की गई है।

परन्तु मैं आज इसकी कल्पना को विशुद्ध रूपों से वर्णन कराने के लिए आया हूँ कि मानव का पर्व इतनी दूरी पर कहाँ चला जाता है। विचार आता रहता है, कल्पनाएँ नाना प्रकार की हैं, कोई तो यह कल्पना करता है कि जब अभिमन्यु ने महाभारत संग्राम के लिए कुरूक्षेत्र में, संग्राम के लिए गमन किया, तो माता कुन्ती के इस बन्धन को बांधकर के प्रस्थान किया। कुछ मानव के हृदय में यह कल्पना रही है कि यह भगिनी और विधाता का एक पर्व है। पुत्रियाँ अपने विधाताओं के भुजों में इस बन्धन की प्रतिकरणास्ते, इसलिए कि मेरी रक्षा होनी चाहिए।

परन्तु इस सम्बन्ध में मेरा कुछ विचार भिन्न रहा है। सबसे प्रथम तो रक्षार्थी परमपिता परमात्मा ही है, जो मानव को, माता के गर्भ स्थल में ही सूत्र में कर देता है। वह सूत्र में प्रतीति होने लगती है। जैसे हमारे यहाँ माता पितरं ब्रहे भोजै के सम्बन्ध में ऐसी कल्पना की जाती है कि वह माता की रक्षा, भोजै की रक्षा, विधाता की रक्षा के लिए है परन्तु रक्षार्थी प्रभु है। मानव एक दूसरे में रक्षार्थी बना हुआ है, परन्तु इस सम्बन्ध में और भी कल्पना करते हैं, तो विचित्र, विचित्र कल्पनाएँ हमारे समीप आने लगती हैं। परन्तु हमारा विचार इन दोनों कल्पनाओं से भिन्न रहता है।

षोड़श कलाएँ

हमने बहुत पुरातन काल में अपने पूज्यपाद गुरुदेव के चरणों में ओत प्रोत हो करके इस विद्या को हमने अपने में धारण किया है। ऐसा प्रतीत होता है कि जिसे आज हम रक्षाबन्धन का दिवस कहते हैं, वह एक पूर्णिमा दिवस जैसे चन्द्रमा अपनी

सम्पन्न कलाओं से परिपक्व रहता है, वह अपनी सम्पन्न कलाओं को ले करके संसार को सौम्य बनाता है। इसी प्रकार मानव के द्वारा भी षोडश कलाओं वाला, यह मानव शरीर कहलाता है, और षोडश कलाओं को जान करके योगेश्वर बन जाता है। मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने यह कल्पना की थी।

यज्ञोपवीत

परन्तु हमारा इन दोनों विचारों से भिन्न भी एक मार्ग है और वह यह है कि आज का दिवस केवल यज्ञोपवीत के लिए कहलाया जाता है। इस दिवस यज्ञोपवीत को ब्रह्मचारी को धारण कराना चाहिए। यह उपनयन संस्कार की पद्धति मानी जाती है, जिसमें उपनयन कराया जाता है, जब आचार्य कुल में ब्रह्मचारी का प्रवेश होता है। तो पूर्णिमा के दिवस ब्रह्मचारी को बन्धन सूत्र में कटिबद्ध कर दिया जाता है और वह बन्धन सूत्र कौन सा है? वह पूज्यपाद गुरुदेव ने मुझे वर्णन कराया कि यह वह यज्ञोपवीत है। जिस यज्ञोपवीत में तीन प्रकार के सूत्रों का वर्णन आता रहता है, और तीन सूत्रों में भी तीन तीन की प्रतिभा आती रहती है और तीन तीन को ले करके इस ब्रह्मग्रन्थि का वर्णन आता है। परन्तु देखो, यज्ञोपवीत में यह ग्रन्थि है, तीन तीन धागे हैं, इनके तीन तीन धागे और बना करके, इस प्रकार नौ बन जाते हैं।

तो हमारे यहाँ इसका अभिप्राय यह है कि पांच ज्ञानेन्द्रियों को जान करके, पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ, मन, काल, दिशा, आत्मा, यह हमारे यहाँ देखो, नौ कृतिका कहलाती हैं, और नौ कृतिका बन जाती हैं। परन्तु देखो, ये तीन में कटिबद्ध कर दी जाती हैं। यह तीनों में कटिबद्ध हैं। क्योंकि कुछ पितरों का स्थान है इसमें। कुछ ऋषियों का स्थान, पितर यागां ब्रह्म वाचो कोई ऋषियों की प्रतिभा है, कुछ परमपिता परमात्मा का ऋण है।

तो मुझे मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने बहुत पुरातन काल हुआ, जब मैं चरणों में ओत प्रोत रहता था, तो इस विद्या का अग्न्याधान करते रहते थे। इस विद्या के ऊपर

सदैव हमारा अधिपथ्य होता और विचारते रहते कि प्रायः वास्तव में ऐसा ही है। तो यज्ञोपवीत का अभिप्राय यह है कि हम यज्ञ के समीप विद्यमान हो जाएं। तीनों गुणों की वृत्तियों को ले करके यह दिशा और काल पञ्चमहाभूत मुनिवरों! देखो, यह तीनों गुणों की प्रतिभा का प्रतिपादन करते हैं। इसका मेरे पूज्यपाद गुरुदेव मुझे वर्णन कराते रहे हैं। रजोगुण, सतोगुण, तमोगुण की प्रतिभा में यह प्रतिष्ठित रहता है। तो जब यह प्रतिष्ठित रहता है तो तीनों गुणावधानम्, यह तीनों गुणों को धारण करने वाला त्रिगुणा कहलाता है और यह जो नौ पदार्थ मैंने अभी अभी तुम्हें वर्णन किए यह तीन गुणों में गुणावधानम् हो रहे हैं। इसी का नाम देखो, अन्न में भी और प्राणों में भी एक विज्ञानमयी धारा बन जाती है, और एक पवित्रता की आभा में मानव रमण करने लगता है।

ऋण

तो इसीलिए आज का हमारा वाक क्या कहता है? परमपिता परमात्मा की आराधना में, पूज्यपाद गुरुदेव मुझे स्मरण कराते रहते हैं, परन्तु विचार यह है कि तीनों गुणों को मानव धारण करे। इसीलिए तीन अप्रेती ऋण कहलाते हैं। देखो, पितर ऋण है, ऋषि ऋण है और देव ऋण कहे जाते हैं। देवता हमारे यहाँ कौन हैं? ऋषि कौन है? ऋषि उसे कहते हैं जो अपने में अनुसन्धान करता हो अथवा विचारक होते हुए, उनकी लेखनी को अपने में अध्ययन करना, अपने में उन्हें धारण करना ऋषि ऋण से उऋण होना है।

इसीलिए मैं उच्चारण कर रहा था कि पितर ऋण, ऋषि ऋण और देव ऋण मेरे अकृतां भविते देवाः शरीर में देव ऋण हो रहा है। इन देवताओं का भी ऋण हमारे शरीरों में प्रवेश करके बाह्य जगत और आन्तरिक जगत दोनों को सुखद बना करके महानता की ज्योति मानव के मध्य में प्रवेश हो जाती है।

उऋणता परमावश्यक

विचारना यह है कि मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव से वर्णन कर रहा हूँ कि आज वह

दिवस है, जब सृष्टि के प्रारम्भ में मेरे पिता ने, परमपिता परमात्मा ने सृष्टि का सृजन किया। तो हमारे यहाँ ये जो आर्य सज्ञनों का मानव समाज है, यज्ञोपवीत को धारण करके, तीनों ऋणों से उऋण होने के लिए प्रयास करना है। इस पर्व की महत्ता आचार्यों ने स्वीकार की है कि तीनों गुणों के ऊपर जीवन को न्यौछावर कर देता है विचित्रता में। जैसे आज जिस स्थली पर हमारी यह आकाशवाणी जा रही है। वहाँ यागों का चलन, यागों को प्रतिभा का वर्णन प्रायः आ रहा था। परन्तु मैं सदैव यह कहा करता हूँ हे याज्ञिक पुरूषो! तुम्हारा जीवन अखडता की ज्योति में परणित रहे। हे यज्ञ वेत्ताओ! तुम्हारी प्रत्येक इन्द्रिय याग में परणित होनी चाहिए। यागां भविते देवाः याग में परणित होनी चाहिए। यागों से सम्पन्न होनी चाहिए। हे यज्ञमान! तेरे जीवन का सौभाग्य अखण्ड बना रहे। क्योंकि तेरे जीवन की प्रतिष्ठा उस महान विचित्र चलन में स्वीकार की जाती है। क्योंकि हे यज्ञमान! तेरे जीवन की प्रतिभा सदैव मानवीयता में प्रदर्शन और महानता की ज्योति पर रमण करने वाली है। हे यज्ञमान! तेरे जीवन का सौभाग्य अखण्ड बना रहे।

याग से जीवन की भव्यता

मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने नाना प्रकार के यागों का चयन अथवा चलन मानो पुरातन काल में ही प्रगट कराया, तो इसीलिए प्रत्येक मानव को अपने जीवन में विचार करके इस मानव पद्धति को महान बनाना चाहिए, विचित्र बनाना चाहिए। जिससे महानता की ज्योति का प्रायः दर्शन हो जाएं। उस दर्शन में प्रवेश करने से हमें एक मानवीयता, भव्यता दृष्टिपात आने लगेगी। तो इसको हमारे यहाँ यज्ञोपवीत करते हैं, जो यज्ञ के समीप लाने का प्रयास करता है। मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने याग की बहुत ऊँची ऊँची विवेचनाएँ प्रगट कीं। परन्तु आज मैं देखो, विशेष चर्चा देने नहीं आया हूँ, केवल यह विचार देने के लिए आया हूँ कि प्रत्येक मानव के हृदय में प्रसन्नता रहनी चाहिए, विचारता रहनी चाहिए। जिससे मानव अपने महान सुख दर्शन को ले करके, इस संसार सागर से पार होने का प्रयास करता रहे।

याज्ञिकवाद

तो विचार विनिमय क्या है? आज मैं विशेषता में विचार प्रगट करने नहीं आया हूँ। विचार यह देने के लिए आया हूँ कि प्रत्येक मानव को याज्ञिक बनना चाहिए। यागां भविते देवाः हे यज्ञमान! तू याग कर्म करता हुआ, अग्न्याधान करता हुआ, अपने रथ में विद्यमान हो करके तू, द्यौ लोक को चल। द्यौ लोक में तेरा विचरण होगा, वहीं तेरी शैय्या लगेगी। यज्ञो भवाः तं ब्रह्मे वाचाः हे यज्ञमान! वहीं तेरे जीवन की प्रतिभा है, तेरे जीवन की महानता है। हम भी अपनी आभा में वरण करते हुए सम्भूति प्रतिभाओं में रमण करते चले जाएं। क्योंकि हे यज्ञमान! मेरा अन्तर्हृदय कहता रहता है, यज्ञमान के प्रति, मेरे हृदय की उत्कण्ठा सदैव बनी रहती है। मैं अपने में यह स्वीकार करता रहता हूँ कि वह प्रभु कितना अनुपम, कितना महान, कितना देवत्व को प्राप्त होने वाला है। वेद का वाक्य कहता है, ऋषि कहता है कि अपनी आभा में मानव को परिणत हो जाना चाहिए। हे यज्ञोमयी श्रेष्ठ! हे यज्ञोमयी प्रतिभा! तू अन्तरिक्ष में विचरण करने वाला है, तू द्यौ लोक में प्रवेश करने वाला है, तेरी महानता का मुझे प्रतीत नहीं कितनी महानता तेरे द्वार पर है।

मैंने अपने पूज्यपाद गुरुदेव से कई काल में यह प्रगट कराया कि यज्ञोपवीत का यह जो दिवस है वह हमारे यहाँ देखो, यज्ञ कर्म करने के पश्चात इसको सदैव अपनाने की प्रवृत्ति बनी रहती है। तो इसीलिए विचार यह है कि मानव को विचित्रता की आभा में परिणत हो जाना चाहिए। परन्तु अपने हृदय से, अपनी कटुता से कोई भी वाक उच्चारण न हो जाएं। जिससे अमानवीयता हमारी वृत्तियों में परिणत हो जाएं।

तो आज का वेद का मन्त्र कहता है पूज्यपाद गुरुदेव अभी अभी वर्णन करा रहे थे, अपनी आभा में प्रगट कर रहे थे कि हमारा जीवन कितना महान, कितना ऊँचा, कितनी विचित्रता वाला होना चाहिए। इस सम्बन्ध में भ्रमण करते हुए एक समय काग भुषुण्डी जी के द्वार पर पहुँचे, काग भुषुण्डी जी से कहा कि महाराज! हमारे

कल्याण का भी तो कोई मार्ग होना चाहिए? किन्तु देखो, उसको पान करते हुए उन्होंने कहा सम्भवा देवो वाचन्नं ब्रह्मवाचो दिव्यं गत्प्रमाणाः लोकां वाचो सम्भवाः। मेरे प्यारे! पूज्यपाद गुरुदेव! मैंने आपको कई काल में वर्णन कराया! आज भी मुझे बारम्बार बाध्य करने लगे कि यह प्रियता मुझे प्रतीत नहीं हो रही है। परन्तु जो क्रिया कलाप, वस्तुओं में रहने वाले अस्सुतम् कहलाते है, परन्तु वह अपने में विचित्रतम का पठन पाठन करते रहते हैं आज मैं आपको ऐसी स्थली पर ले जाना चाहता हूँ जहाँ ऋषि मुनि अपने में मानो प्रतिष्ठित हो करके प्रकाश को अपनाते रहे। प्रकाश को अपनाने में अपनी अपनी धारा का प्रायः वर्णन करते रहे हैं।

एकता में आनन्द

तो विचार विनिमय क्या? हे यज्ञमान! तेरे जीवन का सौभाग्य अखण्ड बना रहे। तू तीनों प्रकार की धाराओं को अपना करके अपने राष्ट्र और समाज को ऊँचा बनाना चाहता है। तू वाचन्नमं सिद्धामि इसका अभिप्राय यह है कि इसको सदैव पान करता रहे, आनन्दित होता रहे और अपने गृह में एक आनन्द का प्रभाव होना चाहिए। जिससे देखो, जीवन की प्रतिभा में एकत्रिता का हमें दिग्दर्शन होता रहे।

याज्ञिक वैज्ञानिक

मैं उस काल में नहीं जाना चाहता हूँ। जब एक पंक्ति में विद्यमान हो करके ब्रह्मचारी जन एक याग कर्म करते रहते थे और उन यागों का प्रश्नः पृथिवीं वसु वाचन्नमं वृधवाचाः हम उसकी आधारभूत सम्भूतियों में रमण करने के लिए सदैव ग्रहण करने लगते हैं। मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने मुझे वर्णन कराया कि आधुनिक जगत की प्रतिभा समाप्त होने जा रही है। मैंने अपने पूज्यपाद गुरुदेव से यह वर्णन कराया तो पूज्यपाद गुरुदेव द्वारा बहुत सी वार्ताएँ उनसे प्रगट होने लगीं। उनकी वार्ता में एक मधु प्रियता थी उनकी वाणी में ओजस् और तेज की प्रतिभा का प्रायः दर्शन होता रहता है। हे यज्ञमान! तू आ, अपने विज्ञानमयी स्वरूप को ऊँचा बना, तू वैज्ञानिक बन, तू विज्ञान के जो तत्त्व हैं उनको ग्रहण करके अपने, जीवन को उज्ज्वलता की ज्योति

पर ले चल। परन्तु इस प्रकार यह ज्योतिवान है, यह जो मानव की ज्योति है यह अभ्युदय होने वाली है। सम्भूति, हमें प्रदान करने वाली है इससे हमारा जीवन एक विचित्र धारा में गति करता रहे।

आओ, देखो, मैंने अपने पूज्यपाद गुरुदेव से यह वाक प्रकट कराया। मैं विशेष चर्चा प्रगट करने नहीं आया हूँ। विचार यह दे रहा था कि आज जो पर्व है यह यज्ञोपवीत उपनयन का पर्व माना गया है। उपनयन संस्कार इसी की आभा में परणित होते थे परन्तु देखो, उसकी आभा में रमण करते करते दूरी चले जाते हैं तो विचारों में भिन्नता हो जाती है, उन विचारों की भिन्नता होने पर नाना प्रकार की भिन्नता का जन्म हो जाता है।

संसार की वास्तविकता

मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव को यह विचार देने के लिए आया हूँ कि हे मानव! हे यज्ञमान! तू अपने याग को पवित्र बना। यह संसार तो परम्परागतों से इसी प्रकार गति कर रहा है, गति करता रहेगा, परन्तु गतियों में भिन्न भिन्न प्रकार की धाराओं का जन्म होता रहता है। उन धाराओं के जन्म होने पर, मानव वृत्तियों में देखो, यह अपनी धारा में अपने को प्रतिभाषित करता हुआ, सान्त्वना को प्राप्त करा रहा है। ऐसा देखो, मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने मुझे कई काल में स्मरण कराया है। परन्तु आधुनिक जगत इस बात पर लगा हुआ है कि कुछ ऐसी प्रायः वस्तु प्राप्त हो जाएँ। जिससे मेरा रुग्ण चला जाए। रुग्णो सम्भवाः देवोः यह रुग्णों का विस्तार रूप में वर्णन किया गया है। इसके ऊपर भी अनुसन्धान की वेदी पर यह मानव प्रवेश होने लगेगा। जागृति की प्रवृत्ति में आना अनिवार्य है जब प्राण गति करते हैं, तो इनकी गति में एक विचित्र वाक प्रतिभाषित हो जाता है। उससे यह प्रसन्न युक्त हो करके अपने जीवन की धारा को एक अभ्युदय के क्षेत्र में ले जाता है। वहाँ केवल ब्रह्म स्वरूप ही दृष्टिपात आने लगता है, उसे हम ब्रह्म सूत्र भी कहते हैं।

परन्तु देखो, इस प्रकार का जो ब्रह्म सूत्र है वह आभा से युक्त कहलाता है। इसमें

कोई सौन्दर्यता, प्रियता नहीं है, केवल अपनी अपनी आभा में रमण करने वाली एक धारा कहलाती है। मेरे पूज्यपाद गुरुदेव! मैंने आपसे कई काल में वर्णन कराया जब इसके सूत्र को ले करके मानव गमन करता है। तो उसके जीवन में भिन्न भिन्न प्रकार की धाराओं का जन्म हो जाता है। और वह जो जन्म लेना है वह हमारे लिए एक महान कठिनता की आभा बन जाती है। उस कठिन आभा में रमण नहीं किया जा सकता। तो मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव से वर्णन करा रहा था कि यज्ञमान के कितने स्वरूप मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने वर्णन कराए हैं। परन्तु सूत्रों में बहुत सी प्रतिक्रियाएँ एक महान और महानता में प्रायः गति करती रहती हैं।

यज्ञ की अनिवार्यता

तो आओ, आज मैं विशेष वाक्यों में नहीं जाना चाहता हूँ। विचार यह देने के लिए आया हूँ कि आज यह रक्षाबन्धन का पर्व माना गया है। यह यज्ञोपवीत का पर्व है। श्रावण पर्व पर प्रत्येक गृह में यज्ञ होना, प्रत्येक विद्यालय में यज्ञ होना और प्रत्येक विद्यालय में यज्ञ होने के पश्चात उसके ऊपर टिप्पणी करना यह तुम्हारा एक मौलिक तत्त्व माना गया है। तो विचार विनिमय क्या है? उस मौलिकता के क्षेत्र में रमण करते हुए यज्ञापवीत हृष्णो पवित्र वाचाः जब मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव के यहाँ पठन पाठन का क्रियाकलाप करता रहता, तो पूज्यपाद गुरुदेव उपनयन कराते थे। यह वही दिवस है, जिस दिवस उपनयन किया जाता है। उपनयन का अभिप्राय यह है कि जिसका उपसंघात बन गया हो, उपधात बन गई हो, परन्तु वही अपने में पूर्णता को प्राप्त होती रहती है। देवा दमन ब्रह्म वाचोः देवं हिरण्यस्थं वृतास्थो सम्भवा देवाः हे पूज्यपाद गुरुदेव! अपने आप अपने में ही प्रतिष्ठा का प्रतिपादन होता रहता है। परन्तु नाना प्रकार के पर्वों की कल्पना करते हुए पर्व की आभा में रमण करते रहना है। आज यह सूत्र यज्ञोपवीत के रूपों में इसी सूत्र की रक्षा देखो, उस काल में होने लगी थी।

यज्ञोपवीत के ह्रास का दुष्परिणाम

जिस काल में यहाँ देखो, यज्ञोपवीत का ह्रास होने लगा। यज्ञोपवीत के ह्रास का सम्बन्ध तो वाममार्ग के काल में आने लगा था। परन्तु देखो, उसके पश्चात यहाँ मुहम्मद के मानने वाले जो प्राणी आये, वह जो रूढ़िवादी आये, उन्होंने इस विज्ञान के तथ्यों को जान करके। उन्होंने आचमन करते करते मानव को इतना विकृत बना दिया कि उसकी कृतियों को सब अपने में पान कर गया। अपने में जब पान कर गया तो मानव आश्चर्य में चकित हो गया। विचार आता रहता है कि पूज्यपाद गुरुदेव मैंने आपसे बहुत पुरातन काल से कहा था, कि आज भी मैं उन वाक्यों की पुनरूक्ति कर रहा हूँ, अपना विचार देता चला जा रहा हूँ और वह विचार क्या है, इसके ऊपर हमारा विचार विनिमय हो रहा था, अन्वेषण हो रहा है, अनुसन्धान की प्रतिभा में प्रत्येक मानव प्रतिष्ठित हो जाता है।

आज मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव को यह वर्णन कराना चाहता हूँ कि उस काल में यज्ञोपवीत को ले करके, अग्नि में दाह करने लगे। वाममार्ग के पश्चात यहाँ देखो, मुहम्मद के मानने वाले भी वाममार्ग के ही पथिक हैं, उसी आधार पर यह अपने जीवन को व्यतीत करते हैं। जब हमें यह विचार आता है कि प्राणियों में सद्भावना, विचारिता रहनी चाहिए। वह अपनी धारा, अपने ज्ञान का श्रेय प्राप्त हो। तो इसीलिए हे मेरे पूज्यपाद गुरुदेव! मैं आपको बहुत सी नवीन वार्ता अवश्य प्रकट कराऊँगा। विचार देना यह है कि हमारे यहाँ, परम्परागतों से अन्वेषण होता रहता है। विचार होता रहता है।

तो मुनिवरों! देखो, वह काल मुझे स्मरण है। पूज्यपाद गुरुदेव को तो प्रतीत है या नहीं, परन्तु वह काल बड़ा विचित्र भयं सम्भवाः देवो ब्रह्मणः वाचन्नमः देवो सम्भवाः उस आभा में मानव परणित होने लगता है। तो विचारना यह है कि आज हम दूर न जा करके उन क्षेत्रों में अपने में रमण करते हुए चले जाएँ, जिन क्षेत्रों की प्रतिभा में प्रत्येक मानव अपने में भाषित हो जाता है। यहाँ मुहम्मद के मानने वालों ने उसके पश्चात जो देव वाले थे उनका अश्वासन बना। अश्वासन बना करके देखो,

उस रक्षाबन्धन की रक्षा नहीं कर सकते। यह प्राणी इतना धूर्त बन गया कि इतने कालों में यह अपनी प्रतिभा का दर्शन नहीं कर सका है, अपनी ओजस्विता का जब परिचय नहीं दिया जा सका है। परन्तु विचारना क्या है कि हम अपने में अपनेपन को धारण करते हुए चले जाएँ। महाभारत काल के पश्चात वाममार्ग में इसका वहिष्कार किया और वाममार्ग ने जब वहिष्कार किया तो आगे आने वाला समाज अपने में क्रीत दास बन गये। अस्तो मगलं व्रहे अपने में भ्रमण करने लगे तो उनकी आभा समाप्त हो गई।

विचार केवल यह है कि हम परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए, देव की महिमा का गुणगान गाते हुए जैसा मुझे मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने वर्णन कराया है। परन्तु पूज्यपाद गुरुदेव को यह परिचय देना हमारा कर्तव्य है कि ये अपने में कितनी घृणा को प्राप्त होते रहे हैं।

आओ, सम्भूति ब्रह्म वाचो सम्भूति अपने में धारण करते हुए इस संसार सागर से पार होने की कल्पना करें। परन्तु देखो, यवनों के मानने वालो ने प्राणियों का ह्रास किया, जिस पर यज्ञोपवीत दृष्टिपात किया, उसी को अग्नि की धाराओं में परणित कर दिया, वही अग्नि के मुख में प्रवेश कर गया। परन्तु देखो, इसीलिए आतंक होने के कारण इतना आतंक छा गया कि मानव अपने में देखो, मुद्रित हो गया, अपने में अपनी कृतियों में उसी यज्ञोपवीत के स्वरूप की रक्षा, बहन अपने विधाता के रूप में कर रही है। मानो केवल अपने में जो दुर्गन्ध न अपृते भवस्वहे, अपनी आभा में परणित होना है।

दुष्परिणामों का विकल्प मात्र यज्ञ

तो विचार विनिमय क्या? मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव से सदैव उच्चारण करता रहता हूँ कि यज्ञ के सम्बन्ध में अपने विचार दीजिए। परन्तु हमारा तो केवल इतना ही विचार है इतनी ही अपने में सामर्थ्य है। तो आओ, आज देखो, प्रभु का ज्ञान गाते हुए, इस संसार सागर से पार हो जाएँ। यह जो संसार हमें निहित हो रहा है यह

मान, अपमान वाला जगत है। इससे मानव प्रायः उपराम हो जाता है। तो पूज्यपाद गुरुदेव! मैं आज कोई विशेष व्याख्या देने नहीं आया हूँ। विचार यह देने के लिए आया हूँ कि यह जो हमें सम्भूति सम्भवा देवो अपने में देवताओं की प्रतिभा का दिग्दर्शन करती रही है, देवताओं की महानता का प्रायः वर्णन आता रहा है, प्रायः मानव अपनी वृत्तियों को अपने में ले जाने के लिए सदैव अपने में भाषित नहीं रहना चाहते। मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने मुझे वर्णन कराया, वर्णन कराते हुए कहा है सम्भवा देवो ब्रह्मा तुम सम्भवा हो, देवमय हो, देवस्य हो, देवस्व को धारण करने वाला अपनेपन में देखो, नहीं रह पाता। मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने मुझे बहुत सी वार्ताओं का परिचय दिया।

आज मैंने भी अपना बहुत सा परिचय दिया है और वह परिचय यह है कि हमें प्रत्येक आभा में रमण करना है, प्रत्येक अपनी धारा को अपना करके जीवन में एक सङ्कल्प करना है, जिससे जीवन एक धारा में परणित होता चला जाएं। मेरे पूज्यपाद गुरुदेव! मैंने कई काल में यह वर्णन करते हुए कहा था कि देखो, यह सम्भवा यह राखी बन्धन के स्वरूप में यज्ञोपवीत का सूत्र रह गया है। क्योंकि मुहम्मद के मानने वालों ने इस यज्ञोपवीत को ब्रह्मचारियों के कण्ठों में से, ब्राह्मणों के, क्षत्रियों के, वैश्यों के कण्ठ में से ले करके देखो, अग्नि में भस्म कर दिए जाते थे और जलं भविते देवाऽहम् वह अपने में धारण करके मानव को निष्क्रिय बनाने का प्रयास किया।

तो परिणाम क्या है? निष्क्रिय बनाते हुए उन्होंने यज्ञोपवीत को पान कराया। यज्ञोपवीत उच्चारण करना भी एक अपराध के रूप में स्वीकार किया जाता था। परन्तु जब इसका वास्तविक स्वरूप हमारे समीप आने लगा तो इनकी विचित्रता का हमें भी दृष्टिपात होने लगा। तो मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने मुझे यह वर्णन कराया है। कि यहाँ जब यवनों के काल में यह संसार अपने ही मानवृहे भविष्यानवृहे यह सब नष्ट भ्रष्ट होने वाला है। मेरे पूज्यपाद गुरुदेव! मैं विशेष चर्चा देना नहीं चाहता।

मैं केवल अपने उद्गान, कैसी दिशा में तुम्हें ले गया हूँ जिस दिशा के ऊपर मैं विशेष चर्चाएँ नहीं कर पा सकता। परन्तु देखो, चिन्तन और मनन करना यह हमारा कर्तव्य है। प्रत्येक मानव को चिन्तन में संलग्न रहना चाहिए, चिन्तित रहना चाहिए, चिन्तामग्न रहना चाहिए, आत्म उत्थान होना चाहिए।

हे मेरे पूज्यपाद गुरुदेव! कहीं यह श्रावणी कहलाती है, कहीं यह विधाता भगिनी का स्नेह कहा जाता है। यही वह सूत्र है जो देवताओं के ऋण से लेकर के पितर ऋण और ऋषि ऋण का ऋणीक बन जाता है। आत्म लोक में प्रवेश करना, आत्मा के ऊपर चिन्तन करना यह आत्म लोक कहलाता है। परन्तु इसमें आत्मा की प्रतिभा सदैव गाती रहती है। तो विचार विनिमय क्या? मैं विशेष चर्चा प्रगट करने नहीं आया हूँ। विचार केवल यह देने के लिए आया हूँ कि आज का जो पर्व है वह क्या है? उस पर्व के ऊपर कितना कुठाराघात हुआ है। इसीलिए अब मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव से प्रार्थना और अपनी आभा में परिणत होना चाहूँगा।

यज्ञोपवीत की अनिवार्यता

पूज्यपाद गुरुदेवः मेरे प्यारे ऋषिवर! आज मेरे प्यारे महानन्द जी! ने अपने उद्गार, अपनी विचारधारा सहित दिये। परन्तु इन विचार धाराओं में कोई विशेष कोई वाक ऐसा नहीं था। परन्तु केवल उन विचारों में एक ही विशेषता मानी गयी। इनका विशेषं बृहे कि वह यज्ञोपवीत प्रत्येक मानव को धारण करना चाहिए। ऐसा इनका विचार रहा, देव ऋण, ऋषि ऋण और पितरऋण यह जो तीनों ऋण है यह सदैव बने रहते हैं। इन ऋणों से मानव को उपराम होना चाहिए। देवऋण, ऋषिऋण, पितरऋण पिताओं की आज्ञा का पालन करना, उनकी सहानुभूति, उनका हृदय, अपने हृदय से आलिंगन करना है। इसका नामकरण महाकृतियों में रम गया है। परन्तु देखो, जब ऋषि ऋण की चर्चाएँ आयीं तो यहाँ ऋषि ने भी इसी प्रकार जब ऋषि ने इसी प्रकार विचारा, यज्ञोपवीत सृष्टि को आदि से हम सब श्रेष्ठ पुरुषों का प्रतीक माना गया है यह प्रतीक एक सहानुभूति है इसी प्रतीक को सृष्टि के प्रारम्भ

से ले करके वर्तमान के काल तक इसी प्रकार गति कर रहा है। गति करता रहेगा। परन्तु महानन्द जी ने अभी अभी प्रगट कराया कि यवन काल में यह हुआ अमुक काल में यह हुआ परन्तु यह काल अपनी स्थलियों पर भ्रमण करते रहते हैं यह काल सदैव अपनी अपनी धाराओं में जैसा कि हमने पञ्च महाभूतों की कल्पना की ऋणों का वर्णन कराया पञ्च महाभूतों की प्रतिभा में हमे ले गएं। परन्तु व्याख्याकार तो इसी प्रकार परन्तु हमारे में ये नियमता और बद्धता होती रहती है नियमता और विचित्रता में सदैव अपने में ही अपनेपन की प्रतिभा का वह सदैव दिग्दर्शन की प्रतिभा आती रहती है रहा इनका यह कि यह यवन काल में मोहमम्द के मानने वालों ने अग्नि के मुख में यह यज्ञोपवीत परणित किया अग्नि में परणित कर दिया यह तो दशा और काल यह रूढ़िवाद परम्परागतों से तो नहीं यह केवल रूढ़ि है इस रूढ़ि के विनाश में केवल देखो, मानव की मानव की मृत्यु विद्यमान रहती है परन्तु इसीलिए यज्ञोपवीत सदैव धारण करते हुए मेरे पुत्र ने यज्ञमान के सम्बन्ध में जो चर्चाएँ की है यज्ञमान के जीवन का सौभाग्य अखण्ड बना रहे पवित्र बना रहे हे यज्ञमान! तू महान बन करके रह हे यज्ञमान! तू संस्कारों का समीर कहलाता है। हे यज्ञमान! तेरी प्रतिभा हमारे हृदयों मे सदैव भासती रहती है परन्तु देखो, हमारा जीवन एक पगडण्डी कहलाता है परन्तु देखो, मेरे पुत्र ने यह वर्णन कराया क्या वही सूत्र यज्ञोपवीत है वही सूत्र मानो देखो, पृथ्वी का माता का जो माता का सूत्र है ओर वही सूत्र मानो विधाता के रूप में है यही भिन्न भिन्न प्रकार के रूपों में परणित रहता है परन्तु देखो, वास्तव में इस दिवस का क्या इस दिवस यज्ञोपवीत है इस पर्व को महानन्द जी ने कहा कि इसको श्रावणी पर्व कहते हैं श्रावणी पर्व का अभिप्राय यह है क्या श्रावणी पर्व का अभिप्राय यह है कि जैसे प्रकृति अपने मानो देखो, ज्ञान और विज्ञान को ले करके नाना प्रकार की वनस्पतियों से श्रृङ्गारित्त होती है इसी प्रकार प्रत्येक मानव को प्रकृति की आभा में रमण करके अपने को नम्र और देखो, महान विचारक स्वीकार करें इस प्रकार मानव के हृदय में यह

आभा बनी रहनी चाहिए क्या प्रत्येक मानव उनकी पवित्र ब्रहे धाराओं को अपनाता हुआ मानो देखो, यज्ञोमयी प्रति भासित रहना चाहिए। तो विचार विनिमय क्या मेरे प्यारे महानन्द जी! ने बहुत से अपने विचार दिए परन्तु इन विचारों पर मैं टिप्पणी करने के लिए नहीं आया हूँ। केवल सूक्ष्म से विचार देने के लिए आया हूँ क्या प्रत्येक मानव को यज्ञोमयी श्रेष्ठ कर्म को अपनाना चाहिए देखो, जिसको वेद विष्णु कहता है हे यज्ञमान! तू मानो देखो, तेरा जो चित्र है तेरी जो धाराएं हैं वो मानो देखो, पृथ्वी से उड़ान उड़ करके द्यौ लोक को प्राप्त होनी चाहिए तू इस प्रकार अपनाने वाला बन हे यज्ञमान! तेरे अङ्ग संग रहने वाले यह जो होता जन है यह तेरी वाणी को पवित्र बनाना चाहते हैं। तू जब स्वाहाः कहता है तो मानो कि तेरी वाणी को पवित्र बनाना चाहते हैं इसी प्रकार जब यही यही रूप जब सूक्ष्म बन करके अन्तरिक्ष में गति करके मानव की त्रुटियों में रमण करता रहता है तो मानो देखो, एक रहने वाला ही रह जाता है तो विचारना यह है कि प्रत्येक मानव को जैसा महानन्द जी ने कहा यज्ञमान के सम्बन्ध में कि वाणी का पवित्र बना रहा है हे यज्ञमान! मेरी भी यह कामना है क्या तेरे जीवन का सौभाग्य अखण्ड बना रहे पवित्रता बनी रहे। जीवन में इस महानता का दर्शन होता हुआ तेरी मानवीयता का प्रसार होने वाला हो तो आओ मैं विशेष विवेचना देने नहीं आया हूँ मेरे पुत्र ने बहुत सी चर्चाएं की है। परन्तु इनके ऊपर हमने विचार दिया आज का वाक यह क्या कह रहा है कि हम परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए देव की महिमा का गुणगान गाते हुए इस संसार सागर से पार होने का हमें प्रयास करना चाहिए। तो इस प्रकार का आज का हमारा वाक यह कह रहा है हे यज्ञमान! तेरे जीवन की सौभाग्यता अखण्ड बनी रहे सुगन्ध युक्त बनी रहे जिससे मानो देखो, तुम्हारे जीवन में एक सम्भूति प्राप्त हो जाए एक देखो, सम्भूतिवादी प्राणी बन जाता हैं तो उसकी प्रतिभा महानता के सूत्रों में रमण करने लगती है। मैंने अपने पुत्र से कई काल में वर्णन कराते हुए कहा था क्या यहां नाना प्रकार के आक्रमणों का समूह होता रहा

है तो मेरे पूज्यपाद ब्रहे वाचन्नमं ब्रह्मा मेरे पूज्यपाद गुरुदेव भी यज्ञोपवीत देते थे और उनके गुरु भी यज्ञोपवीत दिया करते थे विद्यालयों मे ब्रह्मचारियों का यह यज्ञोपवीत का एक पर्व है इसके हमे स्वीकार करना है इसमें हम तीन ऋणों को ले करके चलते है। देव ऋण, पितर ऋण, और ऋषि ऋण यह जो यज्ञ में विचार देते है। इनके ऊपर अनुसन्धान करना अन्वेषण करना अपने को अधिपथ्य हो जाना परन्तु इसी प्रकार असुतम ब्रहे जब मानो अपनी इन्द्रियों को ब्रह्मचारियों को अपनी प्रतिभा सदैव रमण करते रहते थे तो आज का विचार यह क्या कह रहा है कि हमारा यज्ञोपवीताम समधि अग्नि रुद्रा यह तीन सूत्रों वाला है तीन ही सूत्र मानव के शरीर में है तीन ही गुण कहलाते है। तीनों प्रकार की आभा कहलाती हैं मानो देखो, यह जो तीन ही कोण हैं तीन ही मात्रा ओ३म् की हैं यह जो तीन कोण हो रहा है यह मानो देखो, एक विचित्रता में एक गति कर रहा है तो आज का वाक क्या कह रहा है क्या हे यज्ञमान! मैं भी अपने दो शब्दों में हे यज्ञमान! तेरे जीपन का सौभाग्य अखण्ड बना रहे तेरा जीवन महान बना रहे परन्तु आधुनिक काल जैसा महानन्द जी ने वर्णन किया आधुनिक काल का प्राणी यह कहता है कि देखो, अग्नि अप्रता ब्रीहि व्रताम् आज का मानव यह भी कहता है कि यज्ञम भविते देखो, क्या यह घृत का समूह है नष्ट करने का समूह माना गया है। परन्तु मैं यह कहा करता हूँ कि हे भोले प्राणी! यह तो संसार के प्रत्येक वस्तु तुमसे ओझल हो जाती है इसीलिए ऐसी सुगन्धि प्रदान करो जिससे तुम्हारा जीवन पवित्र बन जाए तो हे मेरे प्यारे! आज का हमारा वाक क्या कह रहा है कि हम परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए यागाम भविता देवा यज्ञो भवि असुतो सम्ब्रहे वाचन्नमाः वाचन्न कृती देवाः तो इसीलिए प्रत्येक मानव को अपनी वृत्तियां को जानना चाहिए आज का हमारा यह वाक अब समाप्त होने जा रहा है आज के वाक उच्चारण करने का अभिप्रायः यह कि प्रत्येक मानव को याज्ञिक होना चाहिए सूत्रों में सूत्रित हो जाना चाहिए और सूत्र को अपना करके इस सागर से पार होने का प्रयास होना चाहिए

यह आज का वाक अब समाप्त होने जा रहा है आज के वाक उच्चारण करने का अभिप्राय क्या कि हम परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए देव की महिमा का गुणगान गाते हुए इस संसार सागर से पार होना है यह आज का वाक अब समाप्त होने जा रहा है।

2. श्रावणी पर्व-850830

जीते रहो! देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भान्ति, कुछ मनोहर वेद मन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेद मन्त्रों का पठन पाठन किया, हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, उस महादेव की महिमा का गुणगान गाया जाता है क्योंकि वे जो मेरा अनुपम प्रभु है, वह सर्वत्र माना गया है जितना भी संसार का मानवीय क्रियाकलाप है उस सर्वत्र मानवीयता की आभा में मानो वह मेरा देव दृष्टिपात आ रहा है और वह मानवीयत्व एक याग के रूप में परणित रहता है, मैंने बहुत पुरातन काल में, निर्णय देते हुए कहा था, कि हमारा एक मानव ये कहता है कि हम उस परमपिता परमात्मा की महती में सदैव रत्त रहे और वह जो यज्ञोमयी स्वरूप है यज्ञ बेटा! उसका एक आयतन माना गया है, मानो यह प्रेरणाएं प्राप्त होती रहती हैं, और विचार आता रहता है कि हम, मानो याग के गर्भ में अपने से प्रायः जुड़ जाएं जितना भी सुकर्म है, उस क्रियाकलाप का नाम तो याग माना गया है यज्ञमान अपनी यज्ञशाला में विद्यमान हैं परन्तु वह ब्रह्मचर्य रूप अपने में रत्त हो रहा है और विचार रहा है कि मैं उस परमपिता परमात्मा की, अनुपम, महान ज्योति में मैं सदैव रत्त हो जाऊं।

याग

तो मेरे पुत्रों! देखो, जितना भी सु विचार है सु चिन्तन है हे यज्ञमान! यही तो तेरा याग है। तो यज्ञशाला में देखो, तू अग्नि के समीप तू विद्यमान होता है तो तू वायुमण्डल को ऊँचा बना रहा है वायुमण्डल में परमाणुओं का भरण कर रहा है, जिस परमाणुवाद से मेरे पुत्रों! मानव के जन जीवन का निर्माण होता है अथवा जन जीवन की उपलब्धियां होती हैं जैसे माता के गर्भस्थल में, मानव बनाने की प्रतिभा ही तो याग कहलाता है, और वह याग अपने में विचरण हो करके वही तो मेरे प्यारे! पिता पुत्र के रूप में परणित होता है। तो विचार विनिमय क्या, आज का हमारा वाक यह कहता है यज्ञं ब्रह्म वाचं ब्रहे लोकाः हे मानव! तू शुभ कर्म कर,

मानो तू अपनी अन्तरात्मा के अनुकूल कर्म करने वाला बन, क्योंकि जब तू अपनी आत्मा के अनुकूल कर्म करता है, तो मानो यह तेरा शरीर, तेरा जगत पवित्र बन जाता है तेरे जीवन में एक पुष्पांजलियों की प्रायः एक धारा का जन्म होने लगता है। तो बहुत पुरातन काल हुआ बेटा! जब ऋषि मुनियों का समूह विद्यमान होता रहता था, अपने स्थलियों पर विद्यमान हो करके, ब्रह्मवर्चोसि की प्रायः चर्चा करते रहते थे, नाना यागों की चर्चाएं होती रहती थीं यागां रुद्र भागा ब्रह्म वाचा मानो देखो, यह संसार रूपी एक यज्ञशाला है। तो इसीलिए यज्ञशाला में याग हो रहा है, अग्नि प्रचण्ड हो रही है, हूत किया जा रहा है मानो वही तो साकल्य मानव की प्रतिभा बन करके रहता है। तो मेरे प्यारे! आओ, आज का हमारा वाक क्या कहता है, कि हम अपने में महान और पवित्र बन जाएं।

सूत्र

मेरे प्यारे महानन्द जी! मुझे कुछ प्रेरित कर रहे हैं, मानो इनकी कुछ प्रेरणाएं आ रही हैं, ये मुझे मानो श्रावणी पर्व के उपलक्ष्य में कुछ उद्गीत गाना चाहते हैं। इनकी प्रेरणा है कि वाचप्रहा वाचन मानो यह सूत्र कैसा है? मेरे प्यारे! देखो, यह सूत्र एक महान पवित्रता की एक धारा है। क्योंकि ये जो मानव का शरीर है, इसमें एक एक परमाणु हैं और वह परमाणु सूत्रों में पिरोया हुआ है, तो बेटा! यह मानव शरीर का निर्माण हो गया। यदि उसमें मानो देखो, जो भी प्रवाह गति कर रहा है, जो परमाणु गतियों में गतिशील हो रहा है, बेटा! वह कितना प्रिय सूत्र है। ऐसे ही मानो देखो, समाजिक जब हम पद्धतियों में परणित हो जाते हैं, तो मुनिवरों! देखो, यह शब्द मानो देखो, सूत्र कहलाता है मानो देखो, आप्राणि भवे सम्भवा ब्रहे वाचन्न कृति मानो देखो, मेरे प्यारे! देखो, यह सर्वत्र ब्रह्माण्ड एक सूत्र की भान्ति हैं और यह सूत्र अपना क्रियाकलाप कर रहा है बाह्य जगत के व्यापार में भी मानो एक सूत्र ही अपना क्रियाकलाप कर रहा है प्रत्येक प्राणी बेटा! अपने सूत्र में पिरोया हुआ है उसमें वह अपना क्रियाकलाप हो रहा है उसी में वह जीवन की सत्ता को

प्राप्त करता है। आज मैं विशेष चर्चा नही प्रगट करूंगा केवल आज का विचार हमारा ये कह रहा है कि हम यज्ञोमयी मानो ये संसार एक प्रकार की यज्ञशाला, यज्ञमान यज्ञशाला में विद्यमान हो करके बेटा! अपने जीवन को ऊर्ध्वा में पंहुचाने के लिए, प्रेरणा में लगा हुआ है, संसार के वैभव की चर्चा नही कर रहा है। आत्म कल्याण की चर्चा कर रहा है और वह अपने में महान बनने के लिए सदैव तत्पर होना चाहता है तो मेरे प्यारे! आज मैं विशेष चर्चा नही देने आया हूँ, मेरे प्यारे महानन्द जी! कुछ दो शब्दों की विवेचना करेंगें क्योंकि इनकी सदैव कामना रहती है ये राष्ट्र की चर्चाएं करते रहते हैं, मानवीयवाद की चर्चा भी करते हैं। परन्तु उसमें वेद का अनुशासन में लाने के लिए हैं, हम प्रायः यह कहते रहते हैं अनुशासन एक मानवीयता का एक व्यवहारिक गुण कहलाता है। मानो देखो, अनुशासन में लाना यह तप कहलाता है अब मेरे प्यारे महानन्द जी! दो शब्द उच्चारण करेंगें।

पूज्य महानन्द जीः ओ३म यशश्चां दिव्यं गरुणां सर्वाणि ममत्वां गतेषु शम भवा। मेरे पूज्यपाद गुरुदेव! मेरे भद्र ऋषि मण्डल! मेरे भद्र समाज! मेरे पूज्यपाद गुरुदेव अभी अभी गागर में सागर की कल्पना कर रहे थे, जैसे मानो एक गागर है, उस गागर में सागर को भरण कर रहे थें, और हमें ऐसा प्रतीत होता है क्या गागर में सागर की ही कल्पना प्रत्येक मानव के जीवन में प्रायः आती रहती है। मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने, अभी अभी कुछ सूत्रों की चर्चाएं की, तो श्रावणी पर्व के ऊपर इन्होंने कुछ अपना महत्व प्रगट किया कि मानो यह पर्व क्या है परन्तु इस सम्बन्ध में, मैं आज जब अपने पूज्यपाद गुरुदेव के समीप, परन्तु ये विचार, जो कि संसार में दृष्टिपात आया है इस श्रावणी पर्व के सम्बन्ध में, भिन्न-भिन्न प्रकार की कल्पनाएं रहती हैं।

श्रावणी पर्व

तो आओ, इन कल्पनाओं में एक कल्पना यह रहती है, कि महाभारत के काल में, जब अभिमन्यु युद्ध भूमि में संग्राम के लिए पंहुचे, तो वह वहाँ माता कुन्ती के द्वारा

पंहुचे और उन्होने एक बुद्धिमान एक सूत्र को सूत्रित किया और यह कहा कि जब तक यह सूत्र तुम्हारे भुजों में रहेगा, तब तक कोई तुम्हें विजय नही कर सकता। एक तो मानवीय धारा वह कहलाती है परन्तु द्वितीय यह है क्या मानो देखो, भगिनी, विधाता के द्वार पर जाती है और भ्राता के मानो देखो, वह उसके भुजों में एक बन्धन सूत्र सूत्रित कर देती है और यह कहती है कि मैं जिस समय मेरा प्राण रहा आपको रक्षा करनी है। हे विधाता! मेरा गोत्र परिवर्तन हो सकता है यह द्वितीय कल्पना मानी गई है परन्तु तृतीय कल्पना यह है क्या श्रावणी पर्व पर चन्द्रमा मानो पूर्णिमा का दिवस है, पूर्णिमा के दिवस में, श्रावणी समाप्त हो जाती है और भाद्रपद का प्रारम्भ होने के लिए तत्पर हो जाता है। तो मानो देखो, एक कल्पना यह मानी गई है क्या, श्रावणी पर्व जैसे ही समाप्त हुआ, भाद्रपद का प्रारम्भ हो गया। मानो देखो, पृथ्वी अपने विशुद्ध रूप में परणित होने लगी, विशुद्ध रूप में वह भी महान बनने लगी है एक मानो यह पक्ष माना गया है और जो चतुर्थ पक्ष है जो यह स्वीकार करता है क्या यह जो मानो वेद का पठन पाठन क्यों होना चाहिए श्रावणी पर्व पर। तो मेरे पूज्यपाद गुरुदेव तो यह कहा करते हैं मानो परिचय दे नही पाए यह तो सूत्रों में रह गएं परन्तु हमारा तो यही विचार आया है। मानो आचार्य कहता है क्या यह जो श्रावणी पर्व पर वेदों का पठन पाठन होता है, यहाँ पर ऐसा माना है क्या ऋषि मुनियों ने, सबसे प्रथम इसी दिवस में मानो यह जो ऋत की उत्पति हुई मानो ऋत की उत्पति हुई है कुछ ऐसा स्वीकार करने के लिए रहते हैं मानो वेद रूपी इसका जन्म हुआ है। मानो देखो, यहाँ जन्म की प्रतिभा आती है यदि इसका हम ज्ञान स्वीकार करते हैं तो परन्तु वेद की उत्पति का कारण क्या स्वीकार करें मानो क्योंकि यह तो ईश्वरीय ज्ञान है और ईश्वरीय यह एक संसार की रचना है जब संसार की रचना और ईश्वरीय ज्ञान की रचना दोनों का एक ही काल कहा जाता है। तो यह रचना का विषय भी समाप्त हो जाता है तो उससे यह भी ऋषि मुनियों की सभा में यह निर्णायक नही हुआ निर्णय नही हो सका है। परन्तु देखो,

जब हम और गम्भीरता में जाते हैं। तो उसके ऊपर प्रहा मानो देखो, बुद्धिमान जन विद्यमान हो करके, वेद का पठन पाठन करते हैं उसकी उपलब्धि के सम्बन्ध में मानो यह नही कहा जा सकता। परन्तु विचार यह है कि सब महापुरूष अपनी अपनी स्थलियों पर रहते हैं पुरोहित जन मानो देखो, वर्षाकालीन में मुनिवरों! देखो, अपने अपने गृह में याग करते थें मेरे पूज्यपाद गुरुदेव को तो यह सब प्रतीत ही है परन्तु मैं धृष्टता कर रहा हूँ जो यह मैं आज उच्चारण करने के लिए मैं तत्पर हो गया हूँ। परन्तु जब मैं आया हूँ तो इसको सम्बन्ध में अपने विचार अवश्य व्यक्त करूंगां। आज का हमारा विचार यह मानो देखो, श्रावणी पर्व के उपलक्ष्य में हैं मानो देखो, वास्तव में जो कल्पना करते है। वह कल्पना भी यथार्थता में रत्त रहती है परन्तु देखो, जो वास्तविक स्वरूप होते हैं। वह अपनी स्थलियों में प्रियतम होते हैं।

बन्धन सूत्र

परन्तु देखो, विचार यह आता है, विचार यह कि पूज्यपाद गुरुदेव मुझे कई समय वर्णन कराया है जहाँ मैं ब्रह्म सूत्र की चर्चा करता हूँ। जहाँ मैं मानो देखो, इस श्रावणी पर्व के उपलक्ष्य में बन्धन सूत्रों की चर्चा करता हूँ, तो मानो जगत में यह एक सूत्र कहलाता है, जिस बन्धन में इस मानो देखो, सूत्र में यह मानव सूत्रित हो रहा है अथवा पिरोया हुआ प्रतीत होता है परन्तु देखो, यह मेरे विचार में कोई प्रियतमता का विषय नही हैं परन्तु विचार केवल यह है कि जो वह हो रहा है क्या यह जो पर्व है यह इसीलिए मानो हम उपलक्ष्य के रूप में हम याग के रूप में मानो इसमें परणित हो जातें हैं हमारे विचार में तो यह आता है कि जिस समय सृष्टि का प्रारम्भ हुआ, सृष्टि के प्रारम्भ के समय मानो देखो, यज्ञशाला के रूप में सुगन्धि करनी है, हमें इस संसार के प्रभु के राष्ट्र को सुगन्धि में ले जाना है, सुगन्धि जो प्राप्त कर लेता है तो दुर्गन्ध मानो सुगन्धि में परिवर्तित रहता है। यह जो परिवर्तन है यह महान और विचित्रता में परणित होता है। परन्तु देखो, वास्तव

में यह विचारा जाएं, कल्पना करने के लिए, तो यह सर्वत्र ब्रह्माण्ड ही एक सूत्रवत माना गया है मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने अभी अभी प्रगट किया है क्योंकि राजा प्रजा के और प्रजा राजा के लिए सूत्र है और मुनिवरों! देखो, पुत्र के लिए माता पिता भी सूत्र कहलाते हैं इसी प्रकार यह जो आचार्य और ब्रह्मचारी दोनों एक दूसरे के पूरक सूत्र की कल्पना करते हैं ब्रह्म वाक्यों में के लिए ऐसा दृष्टिपात आता है मुनिवरों! यह संसार सदैव एक दूसरे में सूत्रित हो रहा है, परन्तु केवल इसी उपलब्ध्य में, यह रहा श्रावणी का एक प्रसंग और आता है चन्द्रमा अपनी सम्पन्न कलाओं से युक्त होता है, मानो देखो, सृष्टि के प्रारम्भ में, सृष्टि का जब प्रादुर्भाव होता है। तो मानो देखो, यह ब्रह्माण्ड की रचना होती है। जब ब्रह्माण्ड की रचना होती है इस ब्रह्माण्ड की रचना के साथ मानो देखो, सूर्य द्यौ से प्रकाश लेता है और द्यौ तक मानो सूर्य का प्रकाश मुनिवरों! देखो, मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने मुझे वर्णन कराया, क्या सूर्य का जो प्रकाश है, वह चन्द्रमा में जा करके जब उद्बुद्ध होता है चन्द्रमा मानो देखो, अपनी सम्पन्न कलाओं से युक्त हो जाता है, चन्द्रमा अमृत को बिखेरता है। जैसे वेद के पठन पाठन करने वाला मानो देखो, पठन पाठन कि प्रक्रिया में वह रत्त रहता है परन्तु उसकी जो पठन पाठन की जो प्रतिक्रियाएं हैं, पठन पाठन का जो स्रोत है, वह एक महानता में परणित हो जाता है, यदि देखो, पठन पाठन के स्रोत हैं मानो जानने यह क्या कि चन्द्रमा अपनी सम्पन्न कलाओं से युक्त है ऐसे हमारा जीवन भी सम्पन्न कलाओं से युक्त होना चाहिए, और युक्त हो करके हम मानो देखो, श्रावणी पर्व ऊपर इससे हमें प्रतीत हुआ है।

वेद का ज्ञान

एक पक्ष मेरे विचार में आया है क्या इसी दिवस मानो देखो, वेद रूपी प्रकाश का प्रादुर्भाव होता है। यह मुझे कई काल में आता रहता है क्या देखो, वेद के प्रादुर्भाव का वेद का ज्ञान जो कि निष्पक्ष ज्ञान होता है उसकी उपलब्धियां मानव के हृदयों

में मानो उत्पन्न होने दें, क्योंकि मानव का सदैव निष्पक्ष होना एक बड़ी महत्वता आभा कहलाती है। जब विचार आता है कि कोई शुक्ल पक्ष में चला जाता है परन्तु देखो, यहाँ एकोकी पक्ष रहता है, वेद के प्रकाश का, एकोकी पक्ष रहता है जो इसे अपना लेता है वह इस प्रकाश में रत्त हो जाता है यह मानो देखो, अपनी रूढियों को, अपनी त्रुटियों को त्याग करके महती में परणित हो जाता है, वह जो महतीत्व है, वह मानवीयता की एक धारा में, प्रायः मुनिवरों! देखो, रत्त हो जाता है। मैने अपने पूज्यपाद गुरुदेव से कई कालों में वर्णन करते हुए कहा था, मानो अपने विचार व्यक्त करते हुए कहा, क्या यह जो वेद का ज्ञान है, इसीलिए प्रादुर्भाव की प्रतिक्रियाएं परम्परा से चली आ रही हैं परन्तु रहा यह, क्या यह सूत्र क्यों परणित किया जाता है? मानो सूत्र क्या यह प्रतीत है, कि इससे धर्म और मानवता की परम्परागतों से रक्षा होनी चाहिए, मानो देखो, रक्षा का यह प्रतीक है, जो रक्षा नही कर पाते वे सूत्र के अधिकारी नही होते परन्तु देखो, मैंने कई काल में वर्णन करते हुए कहा था।

गुरुड़म्बावाद

अपने पूज्यपाद गुरुदेव को वर्णन कराते हुए गुरुदेव से क्षमा पाते हुए क्या यहाँ इस प्रकार रूढ़ियाँ पनपती जा रही हैं, रूढ़ियों का प्रादुर्भाव हो गया है और देखो, अज्ञान ब्रह्मे याग का लुप्त वेद की प्रतिभा लुप्तवाद में परणित हो रही है जब मैं इन वाक्यों में जाता हूँ यहाँ नाना प्रकार का गुरुड़म्बावाद भी प्रतीत हो रहा है जब देखो, इस समाज का विनाश और विनाशता को चला जाता है और मानवता लुप्त हो करके, मानव दर्शन लुप्त हो करके, एक रूढ़ियों का प्रादुर्भाव हो करके रूढ़ियाँ पनपती रहती हैं। गुरुड़म्बावाद पनपता रहता है मानो देखो, वेद के वाक उच्चारण करके वह अपनी मनोकृतियों में प्रगट हो करके, आवेशों में परणित हो करके नाना प्रकार के गुरुड़म्बावाद श्रोत्रो में लेना प्रारम्भ कर देता है तो मैंने बहुत पुरातन काल में, अपने पूज्यपाद गुरुदेव से कहा था क्या संसार में रूढ़ि नही रहनी चाहिए,

संसार में रूढ़ि न रह करके प्रकाश हो जाना चाहिए। अन्धकार समाप्त होना चाहिए प्रकाश होना चाहिए और प्रकाश में समाज को रत्त होना चाहिए, हमारे यहाँ, परम्परागतों से ऋषि मुनियों ने एक क्रियाकलाप बनाया था।

आचार संहिता

मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने यह वर्णन कराया मैं भी यह वाक कहता रहता हूँ, क्या एक ही क्रियाकलाप मानव की आचार संहिता जानने का क्योंकि प्रत्येक मानव, आचार संहिता को बनाना चाहता है। आचार संहिता मानव के जीवन में आ जानी चाहिए, परन्तु आचार संहिता क्या है? जैसे यज्ञमान अपनी यज्ञशाला में विद्यमान हैं, पुरोहित अपनी स्थली पर विद्यमान है वह पुरोहित आज्ञा देता है हे यज्ञमान! आओ, अब हम तुम मिलन करके एक याग करना चाहते हैं। हम यागों में परणित होना चाहते हैं तो यज्ञमान कहता है प्रियतम आईए, पुरोहित, मानो देखो, हम परा को जाने, परा जो ज्ञान है, परा जो शब्द है उसे अन्तरिक्ष में देखना प्रारम्भ करते हैं परन्तु देखो, इसी सूत्र को ले करके, वह अपनी अपनी स्थलियों पर विद्यमान हो करके क्रियाकलाप बनाते हैं, प्रातःकालीन याग हो रहा है प्रातःकालीन सुगन्धि होनी है, गृह को सुगन्धित बनाना है उसके पश्चात मानो सूत्रों की आभा में रत्त हो करके यागों में रत्त होते रहें ब्रह्म सूत्र को जानना है जब मानव अपने में गुरुड़म्बावद के लिए, एक रूढ़ियाँ बन जाती हैं, तो अपने को प्रभु स्वीकार कर रहा है, वह अपने को मानो देखो, यह नही स्वीकर कर रहा है क्या यह जो पञ्च महा भौतिक जो पिण्ड बना हुआ है इसका कोई रचयिता है वह मानो देखो, गुरुड़म्बावाद में, गुरु जब यह स्वीकार करता है कि वह जो परमपिता परममात्मा है। वह परमात्मा की आभा में हैं परन्तु देखो, यही स्वीकार करता है कि परमात्मा के बिखरे हुए ज्ञान में लाने का प्रयास करता है तुम्हारे समीप, परन्तु ईश्वरीय कल्पना करना उसमें यह मानो हमारी धृष्टता हो जाएगी जिससे समाज में एक अज्ञान की प्रतिभा का प्रायः जन्म हो जाता है वह अज्ञान नही रहना चाहिएं, हमारे ऋषि मुनियों की सबसे प्रथम

जो एक अनुपम देन है वह यह है कि मानव विवेक होना चाहिए। विवेक मेंपरीक्षा हो जाए वह परीक्षा हो करके तो परमात्मा की पगडण्डी को ग्रहण कर लेता है वह मोक्ष की पगडण्डी को ग्रहण कर लेता है मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने मुझे यह वाक कई काल में यह वाक वर्णन करते हुए कहा था, परन्तु मैं आज उन वाक्यों में जाना नही चाहता हूँ विचार क्या क्या रूढ़ियाँ समाज में रूढ़ियाँ समाप्त हों मानो रूढ़ि नही होनी चाहिए क्योंकि धर्म एकोकी वचन है। मानव एकोकी वचन है वेद एकोकी वचन है मानो देखो, ये भिन्न भिन्न नही कहलाती हैं। जब ये भिन्न भिन्न नही होती उसी एकोकी वचन में ही तो हैं इसके गर्भ में तो ही प्रवेश करना है तो उस एकोकी वचन में ही तो मानव को अपनी प्रतिभा में मानो देखो, रत्त हो जाना है।

पांच क्रियाकलाप नित्य

मेरे पूज्यपाद गुरुदेव मुझे बहुत सूक्ष्म अपना विचार देते रहते हैं आज मैं उन सूक्ष्म धाराओं में तो जाना नही चाहता हूँ परन्तु मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव को यह वर्णन करने जाना चाहता हूँ क्या यह रूढ़ि एक दूसरे के रक्त की पिपासी हैं परन्तु मैं तुम्हे उच्चारण .... यज्ञमान यज्ञशाला में विद्यमान होता है और हे यज्ञमान! तू प्रातःकालीन ब्रह्म का चिन्तन कर मानो द्वितीय तू देवपूजा कर मानो जिससे तेरा जीवन प्रकाश में चला जाए, उसके पश्चात तू पितर याग करना चाहिए देखो, पितरों की सेवा कर, पितरों की आज्ञा का पालन कर और पितर तेरे पितर कौन से होते है? जो मानो पितर हमें देते हैं मानो पितर वही देते हैं जो पितरं ब्रह्मे जो देने वाले हैं, जैसे माता पितर है, पिता पितर है, आचार्य पितर है, सूर्य पितर है, चन्द्रमा पितर है, परमात्मा पितर है, वायु अपने में पितर कहलाते हैं, क्योंकि जो हमें लाभप्रद होते हैं जो हमारी रक्षा करते हैं पितर कहलाते हैं मानो मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने कई काल में पितरों की बड़ी विलक्षण व्याख्या की है, मैं पूज्यपाद गुरुदेव के आगे पितरों के सम्बन्ध में प्रश्न बहुत से हम करते रहते हैं कोई चर्चा नहीं बहुत से उत्तर दे देते हैं परन्तु उच्चारण करना चाहता हूँ पितरों के सम्बन्ध में विशेष

विवेचना यह कि देखो, यह पितर याग है, पितरों की आज्ञा का हम पालन करें मानो यदि सूर्य प्रकाश देता है तो वह पितर है तो हम अग्नि में हवि देने वाले बनें यदि मानो वायु हमें प्राण देता है तो अपने प्राणो की रक्षा कर यदि मानो वह पितर अग्नि के रूप में रहता है तो ... यह चन्द्रमा अमृत को बहाता है आज हम भी सत्यवादी बन करके देखो, पितरों की आज्ञा का पालन है माता तू चाहती क्या है, जो माता हमारी पितर है वह चाहती है कि मेरा बालक विचित्र बन जाएं जैसा मैने मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने मुझे वर्णन कराया था माता यह चाहती है कि जीवन को उपलक्ष्य में लाने के लिए माता की यह आकांक्षा है क्या मेरा पुत्र मानो पवित्र बन जाए। मेरे पुत्र में माता का दिग्दर्शन हो जाए, एक तो यह आता है कि माता यह चाहती है। पितर क्या चाहता है? मेरे कुल की परम्परा ऊँची बन जाए, मेरे कुलों की मर्यादा महान बन करके, मेरे पितरों का नामोकरण ऊर्ध्वा में गति करता रहे। मानो देखो, आचार्य क्या चाहता है? आचार्य शिशु को चरणों में ओत प्रोत कराता है और यह आचार्य कहता है, ब्रह्मचारी तू आ जितनी भी तेरी इन्द्रियां हैं तेरे समीप तू इन्द्रियां को मुझे इसका वर्गीकरण कर दे। हे ब्रह्मचारी! आ, तू अपनी वाणी प्रत्येक इन्द्रिय को मुझे प्रदान कर दे, मैं उसका शोधन कर दूंगा आचार्य उनका शोधन कर देता है आचार्य प्रत्येक इन्द्रिय, उनके क्रियाकलापों से लाभान्वित करता हुआ, उसे यह निर्णय करा देता है कि इसमें तेरा लाभ वृत्तियाँ कहलाती हैं। तो मेरे पूज्यपाद गुरुदेव, मैं तो आपके इस पथ पर चला गया हूँ जो आपने मुझे वर्णन कराया है, आज मैं राष्ट्रवाद में नही जा रहा हूँ परन्तु विचार क्या है कि पितरजन क्या चाहते हैं कि महान बनाना है जो पितर कहलाते हैं। उनकी आज्ञा का पालन करना, उनके विज्ञान के सार्थक स्वरूप को जानना और उसको क्रिया में लाने का नाम ही मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने मुझे वर्णन कराया उनको क्रिया में लाने का नाम ही मानो देखो, एक पितर याग कहलाता है। तो पितर याग होना, कहीं बलिवैश्व याग होना, देखो, जहाँ परमब्रह्म वृतां देवाः यह भिन्न-भिन्न याग की चर्चाएं प्रायः

वैदिक साहित्य में मेरे पूज्यपाद गुरुदेव मुझे वर्णन कराते रहते हैं मैं उन मानो देखो, विशेषताओं में तो तुम्हें ले जाना नही चाहता हूँ मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव की आज्ञा का पालन करता हुआ, अपने विचार हम देते चले जा रहे हैं और वह विचार क्या यज्ञमान अपनी यज्ञशाला में विद्यमान हो करके, वह पुरोहित, इन क्रियाकलापों का उद्गीत गा रहा है। उद्गीत गाता हुआ, यज्ञमान अपने में प्रसन्न हो रहा है। वेद के पठन पाठन करने का नाम ब्रह्मयाग है। मानो जब हम वेद का पठन पाठन करते हैं, प्रकाश को अपने में लाने का प्रयास करते हैं, तो प्रकाश में रत्त रह करके मानव अपनी ऊर्ध्वा गति बना लेता है, ऊर्ध्वा में रत्त रहता हुआ इस संसार की प्रतिभा को उड़ान देता है। मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने कई काल में मुझे यह वर्णन कराया है मैं इन वाक्यों ऊपर तो टिप्पणी नही दे सकता कि देखो, यह यहाँ पांचो नित्य क्रियाकलाप न रह करके, मानव समाज एक गुरुम्ड़बावाद की वेदी पर रत्त हो गया है।

गुरुम्ड़बावाद

वह गुरुड़म्बाद क्या कहता है कि न तो दर्शन ही कुछ है न उपनिषद ही कुछ है, इस वेद के पठन पाठन भी मानो बुद्धिमान समाज में तुम्हें एक कृतिका में रत्त कर दिया है। वह धृष्टता कहते हैं कि हम कृतिका कहते हैं। कितना अन्तर्द्वन्द्व माना गया है परन्तु वह जो गुरुड़म्बाद वह कहते है कि हम ही प्रभु हैं, हम ही मानो एकोकी कहलाते है। जब इस प्रकार की घोषणा करते हैं तो धर्म के नामों पर एक रूढ़ियां बन जाती है और वहीं तक नही रहती, गुरुड़म्बाद में अग्नि प्रचण्ड हो जाती है रक्तभरी क्रान्तियां उत्पन्न हो जाती हैं। जब बुद्धिमान पुरोहितों के द्वारा जब मानो देखो, यह याग जैसे श्रावणी पर्व पर परम्परागतों से ऋषिकाल में याग होता रहा है, उस याग में नम्रता है, उस याग में ओजस्विता है, उसी में पवित्रता है, उसको हमें अपना करके अपने जीवन को ऊँचा बनाना है, आज जब मैं इन वाक्यों पर जाता हूँ। तो वह कहते हैं याग को भी एक पाखण्ड कह देते हैं वह यह कहते हैं

कि याग भी पाखण्ड है और देखो, घृत अग्नि में प्रविष्ट करना यह पाखण्ड कहते हैं। परन्तु मैं यह कहता हूँ हे भोले प्राणियों! यह वायुमण्डल कैसे पवित्र बनेगा जब घृत को तुम अग्नि में नही दोगे, अग्नि के मुखारबिन्द को पवित्र नहीं बनाओगे, तो यह वायुमण्डल कैसे पवित्र होगा। मानो देखो, आधुनिक काल का विज्ञान यह स्वीकार कर रहा है, मैं अपने गुरुदेव को वर्णन करा रहा हूँ, कुछ ही समय हुआ है समुद्र के तट पर एक वैज्ञानिकों का समूह एकत्रित हुआ, ओर वह कुछ ही समय में यहां घोषणा करने वाला है, कि याग होना चाहिए तभी इस दूषित वायुमण्डल को समाप्त कर सकेंगें। मेरे भोले प्राणी! तू जो यों कहता है कि अग्नि में घृत को अर्पित करना पाप है तो तू अगर और तगर, चन्दन की समिधा द्वारा इनके हूत के द्वारा तू मानो अगरबती के रूप में अपने यहाँ सुगन्धि क्यों कर रहा है, मुझे इसका तो कोई उत्तर प्राप्त नही होता। किसी के कोई भी रूढ़िवाला, रूढ़ि आचार्य हो, रूढ़िवादी हो, कोई उत्तर नही दे पाता। परन्तु मुनिवरों! देखो, जब मैं मुहम्मद के मानने वालों के द्वार पर जाता हूँ तो वे पिशाच योनियों के अगले जन्म में प्राप्त होंगें, परन्तु उस सम्बन्ध में तो कुछ नही कहूंगा, क्योंकि मेरे पूज्यपाद गुरुदेव मुझे परिभाषित करते रहते हैं। मैं केवल इतना उच्चारण कर रहा हूँ कि जो दूसरे प्राणों की रक्षा नही कर सकते, तो दूसरे प्राणों को लेने का भी उन्हें कोई अधिकार नही होता, क्योंकि अधिकार उस काल में प्राप्त होता है जब परमात्मा उन्हें यह अधिकार देता है, उस योनि में भेजता है जैसे सिंहराज अधिकार परमात्मा की एक धरोहर कहलाती है आत्मा को धरोहर कहलाती है। इसके ऊपर विचार करना चाहिए।

रुढ़ियां

वाह रे समाज! नाना रूढ़ियां दूसरे प्राणी को हनन करना पाखण्ड नहीं कहते, यज्ञ करने को पाखण्ड कहता है, कैसा दुर्भाग्य समाज का आ गया है कैसा दुर्भाग्य है उस राष्ट्रवाद का दुर्भाग्य है, जो मांसों का पान करना तो प्रियतम है। और जहाँ सुगन्धि का प्रसंग आता है, कर्मकाण्ड का प्रसंग आता है वहाँ रूढ़ि कहा जाता है।

मैं आश्चर्य में जाता हूँ, पूज्यपाद गुरुदेव से मैं प्रश्न करता रहता हूँ पूज्यपाद गुरुदेव भी मुझे एक आंगन में परिणित करा करके शान्त हो जाते हैं परन्तु विचार में नही आ रहा है कि आज जब राष्ट्रवाद की वेदी के ऊपर, नाना प्रकार की रूढ़ियों की चर्चाएं, मैं श्रवण करता हूँ मैंने अपने पूज्यपाद गुरुदेव को कई काल में कहा है कि पूज्यपाद गुरुदेव ने भी यह प्रसंग लिया है मैं भी इस वाक को लेता हूँ। नाना प्रकार की चित्रावली, पूर्व काल में भी रही हैं। महर्षि भारद्वाज के काल में भी रही हैं, रावण के काल में भी रही हैं, विष्णु काल में भी रही हैं, शिव के काल में भी रही हैं आज भी वह काल है कि उसमें भी ज्यों का त्यों वह चित्रण प्रणाली है, प्राचीन चित्र प्रणालियों में जहाँ ऋषि मुनियों के चरित्र आते थे, वहाँ आधुनिक काल में बलियों की प्रतिभा का चित्र मानव को प्रदर्शित कराए जाते हैं और यह कहा जाता है कि हमारे देश का गौरव है इसे गौरव कहते हैं प्राचीन संस्कृति कहते हैं। अरे, मानव! तेरे मुखारबिन्द में अग्नि क्यों प्रदीप्त नही हो जाती, जो यह शब्द उच्चारण कर रहा है। तू एक प्राणी को नष्ट करने को, तू एक बलि की प्रतिभा को ले करके कहीं आंगन में पीड़ित कर रहा है। वैदिक साहित्य में, वेद की प्रतिभा में कहीं भी ऐसा शब्द नही कि किसी की बलि का वर्णन हो। बलि का एक नृत्य आता रहता है बलि कहते हैं हमारे यहां अपने को समर्पित कर देना। यदि प्रभु को तुम्हें प्राप्त करना है तो अपने को समर्पित कर देना है, अपने को समर्पित करना ही एक बलि कहलाती है। जैसे हमारे यहाँ वृष्टि प्रारम्भ होती है, वृष्टि का जब प्रारम्भ हुआ, तो यह पृथ्वी नाना प्रकार के व्यंजनों को जन्म देने वाली बनी है व्यञ्जनों को जन्म दे करके यह पृथ्वी मानो देखो, कृति बन गई, वो गो के बछड़े की बलि हो गई और गो के बछड़े की बलि कैसे? कृषक गो के बछड़े को ले करके इस पृथ्वी की चमड़ी को उधेड़ करके इसमें बीज की स्थापना करता है और उसकी रक्षा करता है और बैल का जो योगदान है वही अन्न बन करके उसके समीप आ जाता है, वही नाना प्रकार का अन्न बन करके उसके समीप आता है। उसको आज का

मानव कहता है, जो पामर प्रवृत्ति के याज्ञिक है वे भी कहते हैं कि बलि का वर्णन वाजपेयी याग में आता है। अरे, भोले प्राणी! तुझे विचारना है, तुझे अपने जीवन को विचारना है कि यहाँ एक प्रकार का नृत नही करना है तुझे तो अपने जीवन की प्रतिभा को महान बनाते हुए, जीवन की सार्थकता को अपनाना है, जिससे तेरा राष्ट्र समाज ऊँचा बन जाएं। आज का मानव यह कहता है कि हमारे राष्ट्र में इच्छाओं की ऐसी स्थापना आ जाए, लेकिन जहाँ नाना प्रकार के धर्म हों और परमात्मा के नामों पर बलियां देखो, यहां इनकी दाह हो वह वायुमण्डल को कैसे पवित्र बनाएंगी और कैसे यह मानव समाज ऊँचा बन सकेगा। बहुत पुरातन काल में, मैंने अपने पूज्यपाद गुरुदेव से वर्णन कराया था, मैंने यह परिचय कराने के लिए कहा था, कि समाज को ऊँचा बनाना है, तो यहाँ एक घोषणा होनी चाहिए। राजा को यह घोषणा करनी चाहिए कि धर्म के नामों पर किसी भी प्रकार का किसी भी प्राणी का वध नही होना चाहिए। क्योंकि धर्म के नाम पर प्राणी का वध होता है रसास्वादन के लिए देव, देवता तो परम्परा से चले आ रहे हैं परन्तु धर्म के नामों पर रूढ़ियां हैं जो मानव इन रूढ़ियों में नाना प्रकार के हिंसा करता है उन रूढ़ियों को समाप्त कर देना चाहिए। और वैदिकता को ला करके बलि की और समर्पित होने के उन रहस्यों को उद्गीत गाना चाहिए। उन रहस्यों का जब उद्गीत गाता है तो मानव में रजोगुण क्यों आयेगा? तमोगुण क्यों आएगा, सतोगुण आता रहेगा और देखो, राष्ट्र का समाज का पवित्र बनता रहेगा। मेरे प्यारे! माताओं का जीवन पवित्रतम बना रहेगा और समाज भी ऊँचा बनेगा। मैंने अपने पूज्यपाद गुरुदेव से कई काल में वर्णन करते हुए कहा है कि समाज में न तो गुरुड़म्बावाद होना चाहिए न वहाँ देखो, धर्म के नामों पर किसी भी प्राणी का हनन होना चाहिए। केवल धर्म अपनी जगह धर्म रहता है। धर्म कोई भी धर्म अधर्म के रूप में नही ला सकता। धर्म का अभाव नहीं होता, अधर्म का सदैव अभाव हो जाता है।

तो मैंने पूज्यपाद गुरुदेव से वर्णन करते हुए कहा कि मैं श्रावणी पर्व के पवित्र

दिवस को आज दृष्टिपात कर रहा हूँ इस दिवस को मैं परम्परागतों से स्वीकार करता रहता हूँ यह वह दिवस है जिस दिवस परमात्मा की पवित्र विद्या, जो वैदिक ज्ञान है, उस वैदिक मन्त्रों के लिए साकल्य ले करके, साकल्य यज्ञमान के शब्दों पर होताओं के उद्गाता उद्गीत गाने वालों के शब्दों पर साकल्य विद्यमान हो करके वायुमण्डल के अशुद्ध परमाणु को निगलता रहता है मेरा अन्तरात्मा हृदय यह ऋषि मुनियों की धरोहर है, यह जो याग जैसा कर्म है यह ऋषि मुनियों की धरोहर है क्योंकि ऋषि मुनि अपने आश्रम को पवित्र बनाने के लिए, शुद्ध पवित्र वेदमन्त्रों के द्वारा उद्गीत गाते रहे हैं। अपने पूज्यपाद गुरुदेव से मैं विशेष में भी चर्चा करना नही चाहता हूँ। उद्गीत गाने के लिए जो मैं गाता ही रहूँगा एक एक वाक के ऊपर टिप्पणियां करता ही रहूँगा, अपना विचार देता रहूँगा। परन्तु इस राष्ट्र के राजा को चाहिए अपनी संस्कृति को लाना है तो उन चित्रावलियों पर यज्ञ होते हुए पुरोहित जनों को उपदेश देते हुए वेदमन्त्रों का चलन करें। राजा ही अपने अपने राष्ट्र को ऊँचा बनाना चाहता है, यदि विज्ञान के ऊपर अपने को ऊँचा बनाना चाहता है विज्ञान को अपने में प्रतिष्ठित करना चाहता है तो उसे चाहिए कि चित्रावलियों में वेदध्वनियां हों, पवित्र ध्वनि होनी चाहिए, जिसमें वायुमण्डल मानव के विचार के साथ पवित्र बन जाए। पुरातन काल में भी इस प्रकार की चित्रावलियां थी, जहाँ चित्रों का दर्शन होता रहता था उन चित्रावलियों को वहाँ पर जितने भी दृष्टिपात करते थे वह अहा! कह करके वायुमण्डल उनकी वाणी से और परमाणुवाद से साकल्य से ऊँचा बनता रहता था। मेरा तो एक ही मन्तव्य रहता है कि यह समाज कहाँ तक अपने स्वार्थ, स्वार्थपरता में द्रव्य को लोलुपतता में कहाँ तक चला जा रहा है। मैं यह कहता हूँ, हे परमात्मान! तुम वेद सर्वज्ञ हो, तुम प्रकाश सर्वज्ञ हो हे यज्ञमान! तुम मानव के यज्ञमान हो तुम यज्ञमानो का इच्छाओं को पूर्ण करने वाले हो हे प्रभु! तुम्हारा अन्तर्जगत है यह कैसी महान और पवित्र है मेरी यह कामना रहती है भगवन! कि वह कौनसा समय आयेगा मेरे समीप जब राष्ट्र अपने

राज्य में यह घोषणा करेगा कि मेरे राष्ट्र में धर्म के नामों पर कोई भी प्राणी का हनन नही होगा, बलि तो नही होगी, परन्तु प्राण नही लिए जाएंगें। वह पुरूषार्थ रूपी बलि मेरे राष्ट्र में कब आएगी प्रभु! हे भगवन! मेरी तो यह कामना रहती है कि आप भगवन! देखो, उद्बुद्ध करने वाले! आप महान हैं पवित्र हैं, सखा हैं, यज्ञमयी स्वरूप हैं, मानव के अन्तर्हृदय को पवित्र बनाने वाले, मेरे यज्ञमान के यज्ञमान सपत्नीक उनके हृदयों को पवित्र बनाते रहते हो। आज मेरी यह मनोकामना रहती है कि यज्ञमान के साथ हे यज्ञमान! तुम बहुत ऊँचा क्रियाकलाप कर रहे हो, अपनी शुद्ध पवित्रता से तुम्हारी आहुति लोक लोकान्तरों में जा रही है पूर्ण रूपेण तो नही जा पाती परन्तु प्रत्येक दिन उसमें से कुछ आहुतियां तो चली ही जाएंगी। मन विचलित होता है तो इसको भी विशुद्ध रूप में लाया जा सकता है। वेद अपने में सर्वत्रता में परणित रहता है हे यज्ञमान! मेरा तो हृदय यज्ञमान के साथ रहता है इनके जीवन का सदैव सौभाग्य अखण्ड बना रहे महान और पवित्र क्रियाकलाप करते रहें अपने जीवन में महानता की ज्योति बिखरते रहें। इसके साथ मैं अपने वाक्यों को पूर्ण विराम देने जा रहा हूँ पूज्यपाद गुरुदेव से आज्ञा पाऊंगा।

पूज्यपाद गुरुदेवः मेरे प्यारे ऋषिवर! मेरे प्यारे महानन्द जी! ने अभी अभी अपने ओजस्वी विचार दिए। परन्तु आज का इनका विचार दर्शनों से गुंथा हुआ विचार था जो मानवीय दर्शनों से गुंथा हुआ विचार है कि वह वास्तव में ऐसा होना चाहिए क्योंकि मानव को वास्तव में अपने जीवन में अपनी धारा को ऊँचा बनाना है। प्रत्येक मानव को उस यज्ञमयी स्वरूप में रत्त रहना है जिस यज्ञोमयी ज्योति श्रोत्रं ब्रह्म वाचो में रह करके अपनी मानवीय धारा को ऊँचा बनाना है मेरे पुत्र ने अभी अभी यज्ञमान के सम्बन्ध में कुछ उद्गीत उदगारं दिए, मेरा अन्तर्हृदय भी सदैव यह कहता रहता है कि आचारं ब्रह्मः आचार संहिता पवित्र बनाते हुए हे यज्ञमान! तू अपने जीवन को ऊँचा बना यह है आज का वाक आज का वाक समाप्त अब वेदों का पठन पाठन होगा।

3. श्रावणी पर्व-920813

जीते रहो! देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भान्ति, कुछ मनोहर वेद मन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेद मन्त्रों का पठन पाठन किया हमारे यहां परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है जिस पवित्र वेदवाणी में उस महामना परमपिता परमात्मा की महिमा का गुणगान गाया जाता है क्योंकि वह परमपिता महिमावादी है और उसका यह अनन्तमयी जगत माना गया है प्रत्येक मानव परम्परागत से ही उस परमपिता परमात्मा के सम्बन्ध में नाना प्रकार का विचार विनिमय करता रहा है, कहीं मानो विज्ञान के युग में प्रवेश हो जाता है। कहीं नाना प्रकार की चित्रावलियों में रमण करने लगता है। कहीं मानो लोक लोकान्तरों की उड़ाने उड़ने लगता है। कहीं वह आध्यात्मिकवाद में प्रवेश करता रहा है, परन्तु उसके नाना प्रकार के परमपिता परमात्मा को, दृष्टिपात करना चाहता है, और अपने मनो में ये विचारता रहता है कि मैं नाना प्रकार के जो पर्व है, और नाना प्रकार के जहां महापुरुषों ने तपस्याएं की है, नद नदियों के तट पर वहां भी मानव की इच्छा बनी रहती है, क्या कोई परमाणु ऐसा मुझे प्राप्त हो जाएं, जो परमाणु मेरे अन्तःकरण को स्पर्श करता मेरे हृदय और मस्तिष्क को ऊर्ध्वा में ले जाएं और परमपिता परमात्मा की महती में रमण कर जाए, ऐसी मनोनीत भावना ये परम्परागतों से मानवीय मस्तिष्कों में चली आ रही है, और ये सृष्टि के प्रारम्भ से ही मानव विचार विनिमय करता रहा है मानो कहीं वह विशिष्ठां भूतप्रव्हाणं कहीं वशिष्ठ जैसे महापुरुष जब तपस्या करते हैं, तो मानो देखो, वे सदियों तक उसकी वृत्तियों में रत्त होता रहा है, और ये विचार रहा है कि यहां महापुरुषों ने तप किया, इसको मानव तीर्थ के नामों से अपने को वर्णन करता रहता है। परन्तु जब मानव आध्यात्मिकवाद में यह वेद के वाङ्मय में प्रवेश करता है तो वेद का एक वेदमन्त्र हमारे आज के इस मन्त्रार्थ में आ रहा था, और वेदमन्त्र कहता है अपनां भूतं ब्रह्मणा

ब्रह्मा आत्मा मेरे प्यारे! देखो, वेद का मन्त्र ये कहता है, कि यह जो आत्मा है, इसके जानने से ही ब्रह्म को जाना जाता है। इसलिए हमारा जो अन्तःकरण है, हमारे जो पञ्च महाभूतों का जो लोक है, ये पञ्च महाभूत मानो देखो, इसमें आत्मा अपना वास करता रहा है। इस आत्मा को जानने के लिए मानव सदैव तत्पर रहे। तो वे परमपिता परमात्मा इसी में उसको प्राप्त हो जाता है परन्तु देखो, आज का हमारा वेदमन्त्र, हमें नाना प्रकार के यागों की प्रेरणा देता रहता है, जिससे हमारा वायु मण्डल पवित्र बन जाए, और वायुमण्डल के पवित्र बनने पर, मानवीयतव एक दूसरे में मानो पवित्रतता की आभा में रत्त हो जाएं। तो ऐसा बेटा! प्रत्येक मानव अपने में अन्वेषण करता रहा है, अथवा विचार विनिमय करता रहा, तो आज का हमारा वेदमन्त्र ये कहता है कि परमपिता परमात्मा को प्राप्त करना है। तो हे मानव! तू अपनी मानवीय इन्द्रियों को और आन्तरिक जगत को अपने में धारण करने की सदैव अपने में धारयामि बन, जिससे मानवतव तेरा उर्ध्वा में गमन करने लगे मेरे प्यारे! देखो, मानव अपने उदर की पूर्ति में और पदो की लोलुपता में मानो लगा रहता है परन्तु जिस आत्मा के कारण, नाना प्रकार की उपाधियाँ मानव को प्राप्त होती है, और उसी से वह अलंकृत होता रहा है, तो उस आत्मा को जानने के लिए भी मानव को अपने में प्रयास करना चाहिए, और प्रयत्नशील रहना चाहिए, जो आत्म चेतना जिसके कारण यह हमारा शरीर चेतनित बन रहा है, और यह विष्णु के रूप में रत्त होता रहा है। तो इसको मैं जानने के लिए सदैव तत्पर रहूँ। परन्तु आज का हमारा वेदमन्त्र यहां यह प्रेरणा दायक वाक्यों को प्रस्तुत कर रहा है, वहां एक एक वेदमन्त्र बेटा! नाना प्रकार की विद्याओं का संकेत देता रहता है। और वह ऐसी विद्याओं का संकेत देता है जहां यह समाज एक दूसरे को जानता हुआ, अपने मानवीयतव को ऊंचा बना सकता है, और राष्ट्र और समाज उसी से ऊंचा बनता है। क्योंकि जिस जिस काल में समाज में मानो चरित्र की हीनता हो जाती है। उसी काल में मानव एक दूसरे के प्राणों को हनन करने के लिए तत्पर

रहता है। तो जब आज जब हम यह विचारते रहते है, हम अपनी मानवीयता को जानने के लिए हम आत्मा का आश्रय ले और आत्मा का आश्रय मानो परमात्मा का आश्रय लेता हुआ, इस संसार रूपी मानो यह जो समुद्र है, अथवा यह जो ब्रह्माण्ड है, इसको जानने के लिए सदैव तत्पर रहें। मेरे प्यारे! देखो, हम प्रायः देखो, भगवान राम की चर्चाएं प्रायः हम करते रहते है, जब मैं राम के जीवन में प्रवेश करता हूँ, राम के जीवन की प्रतिभा हमारे समीप आती है, तो उनका चरित्र उनकी मानवीयता कितनी महानता में सदैव रत्त रही है। क्योंकि राम जैसे वनज ब्रहे मानो जो सखा जो राज्यम ब्रह्मा जो मर्यादा अपने में धारण करने वाली क्योंकि जब तक मानो स्वयं अपने में मर्यादा को धारण नहीं करेगा, क्रियात्मकता में अपने जीवन को नहीं बनाएगा, ज्ञान के अनुसार कर्म को जब तक नहीं ला सकेगा, जब तक उस मानव का कल्याण नहीं होगा। वह मानव अधूरे पन में रत्त रहता है।

तो हमारे यहां वेद का मन्त्र आता है धर्मं ब्रहे वर्णा ज्ञानां तनं ब्रह्मे देवत्वां कर्माणि भूतप प्रव्हा वेद का मन्त्र यह कहता है कि हे मानव! तेरे द्वारा ज्ञान होना चाहिए, और ज्ञान भी आत्मा के माध्यम से होना चाहिए और उसी ज्ञान के अनुसार यदि तेरा कर्म मानो कर्तव्य तेरे में निहित हो जाएगा, तो तेरा जीवन महानता में परणित हो जाएगा, क्योंकि बिना कर्म किए हुए ये मानव अपंग हो जाता है और बिना ज्ञान के मानो देखो, ये मानव का जीवन देखो, अपंगम ब्रह्मे देखो, जैसे एक मानव देखो, नेत्रो से हीन हो जाता है, या सत्तम ब्रह्म श्रोत्रों से विहीन हो जाता है। ऐसे मानव की दशा बन जाती है, वह अपनी दशा को वास्तविकता को त्याग देता है, तो इसीलिए हमारे यहां वेद मन्त्रों में नाना प्रकार की प्रतिभाओं का वर्णन आता रहा है, ज्ञान और विज्ञान में मानव सदैव परम्परागतों से मानो अनुष्ठान करता रहता है। नाना प्रकार के लोक लोकान्तरों की उड़ाने उड़ता रहा है, जिससे लोक लोकान्तरों की उड़ान उड़ने वाला जो प्राणी है। वह मेरे प्यारे! नाना प्रकार के लोक लोकान्तरों की उड़ान उड़ने वाला जो प्राणी है, वह मेरे प्यारे! नाना प्रकार के लोक लोकान्तरों

की यात्रा करके अपने को जानने के लिए सदैव तत्पर होता है। जो बाह्य जगत में मानो चेतना का दर्शन नहीं होता, तो मानो आन्तरिक जगत में ही अपने को ले जाता है, और बाह्य जगत को आन्तरिकता में ले जाने का नाम ही चेतना में बद्ध हो जाना है।

तो मेरे प्यारे! देखो, आज का विचार मैं विशेष नहीं देने आया हूँ, केवल यह कि हमारे जीवन में एक महानता प्रायः होनी चाहिए परन्तु आज मुझे कहीं से यह प्रेरणा आ रही है कि याग के ऊपर विचार विनिमय दिया जाए, बेटा! मैंने तुम्हें कई कालों में वर्णन करते हुए कहा है कि हमारे यहां ऋषि मुनि जिस स्थली में तपस्या में परणित होते रहे है, मानो उसमें सबसे प्रथम वेद मन्त्रों का उद्गीत गाते हुए वह स्वाहा से अन्तरिक्ष को भरण कर देते है। क्योंकि यह जो स्वाहा शब्द है, यह मानो देखो, मानव के अङ्ग संग ओत प्रोत हो जाता है। स्वाहा कहते है शुद्ध और पवित्र को और जितने भी शब्द मानव के अन्तःमन मस्तिष्क में मानो शुद्धिकरण में प्रवेश होते रहे हैं। उतना मानव का जीवन पवित्रता में प्रवेश होता रहेगा, तो विचार विनिमय यह कि हम अपने वायुमण्डल को देखो, सुगन्धि से भरण कर दें जिससे हमारे हृदय में सुगन्ध आने लगे मुझे वह काल स्मरण आता रहता है मैं भगवान राम की चर्चा कर रहा था प्रातःकालीन बेटा जब भगवान राम अपनी यज्ञशाला में याग करते रहे, तो वह अपने राष्ट्र में यह घोषणा किया करते क्या हे राष्ट्रवेत्ताओं! तुम्हारे यहां नाना प्रकार का तुम्हारा राष्ट्र सुगन्धि से परणित हो जाना चाहिए, शब्दों से भरण हो जाएं, मानो देखो, राम ने यह कहा था अपने कर्मवेत्ताओं से क्या राष्ट्र में यह घोषणा करो क्या राष्ट्र में सुगन्धि होनी चाहिए। क्योंकि राष्ट्र में सबसे प्रथम जो सुगन्धि है, वह चरित्र की सुगन्धि होनी चाहिए और चरित्र मानव का जब परिपूर्ण होता है, जबकि वह मानव ज्ञान से परिपक्व होता है, अथवा विज्ञान से परिपक्व होता है और देखो, ज्ञानाम वेदाम मन्त्रम ब्रह्मा कृतं देवा जब वेद मन्त्रों का मानव उद्गीत गाता है। तो वायुमण्डल मानो शब्दों की धाराओं पर अग्नि की

धाराओं पर शब्द विद्यमान हो करके शब्द द्यौ में प्रवेश हो जाता है। हमारे यहां विज्ञान वेत्ताओं ने मानो नाना प्रकार के शब्दों के ऊपर अन्वेषण किया है मुनिवरों! देखो, यह अग्नि की धाराओं पर विद्यमान हो करके द्यौ में प्रवेश कर जाता है, और द्यौ में जब यह भरण हो जाता है, तो द्यौं भूतं ब्रह्मे यह द्यौ ही हे जो बेटा! देखो, इस संसार को मानो प्रेरणायुक्त तरंगे प्रदान करता रहता है। मेरे प्यारे! देखो, मैं आज तुम्हें यह उच्चारण कर रहा हूँ कि राम यह प्रातःकालीन याग करना और अपनी उपदेश मंजरी में यही कहा करते कि राष्ट्र को यदि ऊंचा बनाना है। समाज को महान बनाना है, तो प्रातःकालीन सुगन्ध आनी चाहिए, हमारे यहां जो साकल्य देखो, हूत किया जाता है, उसमें सबसे प्रथम सुगन्ध होती है और द्वितीय उसमें पुष्टि होती है, और देखो, वही रोग नाशक होती है। मानो देखो, यह तीन प्रकार का साकल्य जब अग्नि में हूत कर दिया जाता है। मेरे प्यारे! देखो, एक रोगनाशक है, यह चतुर्थं ब्रह्मा वर्णन जब यज्ञशाला में हूत करता है। यज्ञमान तो मेरे प्यारे! देखो, अपने अन्तर्हृदय की अन्तर्भावनाओं में वह परणित हो जाता है। तो विचार आता रहता है वहीं अपनी मनोनीत हृदय की जो विचार धाराएं है, उसी से मानव अपने में ऊर्ध्वा को गमन करता रहता है। तो भगवान राम प्रातःकालीन यह कहा करते थे अपने राष्ट्रवेत्ताओं से कि राजा के राष्ट्र में मानो देखो, सुगन्ध होनी चाहिए और वह सुगन्ध मानो देखो, साकल्य की अग्नि में हूत किया जाता है। राजा के राष्ट्र में प्रायः ध्वनि होनी चाहिए, और वह ध्वनि जो वेद मन्त्रों में ध्वनि आती है, और वेद मन्त्रों का जब उद्गीत गाया जाता है तो प्रत्येक मानव का अन्तःकरण पवित्रता की प्रतिभा में परणित हो जाता है। तो विचार आता रहता है, भगवान राम प्रातःकालीन जब याग करते तो उनका उपदेश प्रारम्भ होता और उपदेश मंजरी में यही कहा करते कि देखो, हमारा राष्ट्र सुगन्ध में देखो, अयोध्या हमारा सुगन्ध और याज्ञिक होना चाहिए। नाना प्रकार के याग में मेरी पुत्रियां पुत्रेष्टि याग में परायाण हो, मुनिवरों! देखो, मानो ब्राह्मण कर्मकाण्ड में ऊर्ध्वा में रमण करने वाले हो और

मानो देखो, होता जन हूत दे करके मानो देखो, यज्ञमान की वाणी को पवित्र बनाते है। ऐसा जो वेद में मानो नाना प्रकार का विचार और वेद मन्त्रों में आता रहा है, तो इसके ऊपर मानव को विचार विनिमय करना चाहिए। मेरे प्यारे! देखो, में विशेष चर्चा तुम्हें नहीं देने आया हूँ, केवल परिचय यह है क्या हम मुनिवरों! देखो, यागाम भूतम ब्रह्मा यह जो परमात्मा का संसार रूपी जो यज्ञशाला है। इस यज्ञशाला में प्रत्येक प्राणी याग कर रहा है, यदि हमारे अन्तःकरण में यह भरण हो जाएं क्या हमारे सुविचार बन जाएं, और सु आचरणों में परणित हो जाएं, तो मानो देखो, हमारा राष्ट्र और समाज दोनों ऊंचे बन जाते है। हमारा गृहपथ्य नाम की अग्नि भी सिद्ध हो जाती है। गार्हपथ्य नाम की अग्नि भी सिद्ध हो जाती है, और वैश्वानर नाम की अग्नि में भी हम प्रवेश हो करके देखो, गार्हपथ्य में अपने को प्रारम्भ जीवन को लगा देते है। तो इस प्रकार अग्नियों का चयन करने वाला मानो देखो, अग्नियों का ही चयन करता है। परमात्मा के समीप जाने के लिए उसकी प्रायः मानो इच्छा बनी रहती है, तो आज में विशेष चर्चा तो नहीं दूंगा कि हम अपने में अपने पन को जानते रहे और देखो, परमपिता परमात्मा का जो वेदमन्त्र है। उसका जो ऊर्ध्वा मुख है, उसे अपने में प्रायः हम धारण करते रहे और देखो, एक दूसरे के प्राणों की प्रायः वे परमपिता परमात्मा रक्षा करता है, विष्णु है। तो इसीलिए बाह्य जगत को जान करके और आन्तरिक जगत में प्रवेश करके परमात्मा को अपना साक्षी बनाते हुए परमात्मा के समीप पहुंचों जहां तुम्हें प्रकाश की प्राप्ति हो जाएं और मृत्यु का तुम्हें भय नही रहेगा मृत्यु से उपरामता को प्राप्त हो जाओगे, द्रव्य की लोलुपतता में भी तुम्हारा इतना जीवन नही जाएगा तुम उसको अपने को अपनेपन में प्रवेश कर जाओगे। तो मेरे प्यारे आज मैं तुम्हें विशेष चर्चा न देता हुआ केवल यह कि हमारे यहां सुविचार होने चाहिए मेरी प्यारी माताएं जब इस वेद की विद्या का अध्ययन करें तो मुनिवरों! देखो, उसको सन्तानों को महानता का जन्म प्रदान कर देती हैं। मैंने तुम्हें कई कालों में नाना ऋषि मुनियों की चर्चाएं की हैं उनके क्रियाकलापों

की भी चर्चाएं की हैं, आज मैं विशेष चर्चा न देता हुआ मानो ब्रह्मा ब्रहे अब मेरे प्यारे महानन्द जी दो शब्द उच्चारण करेंगें। आज का वाक केवल हमारा ये कि हम परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए और देव की महिमा का गुणगान गाते हुए मानो परमपिता परमात्मा के समीप जाने का प्रयास करें। मानो याग हमे ये ही प्रेरणा देता है क्या हम सुविचार बना करके स्वाहाः कह करके मानो इस अन्तरिक्ष को अपने में भरण कर जाएं और वायुमण्डल मानो जो हमारा अङ्ग संग रहने वाला जगत है, वो सु से मानो परिपक्व हो जाए मानो वो भरण हो जाए। जिससे मानवीयतव उसमें पवित्रता को धारण करता रहे तो आजका विचार विनिमय क्या आज मैं तुम्हें ये वाक इसीलिए उच्चारण कर रहा हूँ कि हमारा मानवीयतव अपने में ऊर्ध्वा में गमन करना चाहिए। चाहे वह प्रजा हो, चाहे राजा हो, चाहे मानो किसी भी प्रकार का अवृत्त करने वाला प्राणी हो परन्तु उसके हृदय में मानवता होनी चाहिए, यदि मानवता नही है तो देखो, वह केवल शरीर से मानव है परन्तु देखो, कर्म से मानव नही रहेगा इसीलिए संसार में विकृतता आ जाएगी तो आज का हमारा वेदमन्त्र ये उदगीत गाता हुआ अब मैं मानो देखो, महानन्द जी से जैसा इनका सदैव विचार बना रहता है।

पूज्य महानन्द जीः ओ३म् देवाम् भूतम भविवर्णाश्चतमाः वायु रथाः। मेरे पूज्यपाद गुरुदेव! अथवा मेरे भद्र ऋषि मण्डल! अभी अभी मेरे पूज्यपाद गुरुदेव गागर में सागर की कल्पना कर रहे थे, और प्रायः हमें ऐसा प्रतीत हो रहा था, जैसे हम राम की यज्ञशाला में विद्यमान हैं और राम के मुख से उन वाक्यों को श्रवण कर रहे हैं, ऐसा इनका गागर में सागर की कल्पना करते रहते है। परन्तु देखो, आज मैं कोई विशेष चर्चा नहीं केवल यह कि आज जहां हमारी यह वाणी जा रही है, वहां एक याग सम्पन्न हुआ है, और वह याग ऐसे पर्व के समय पर याग सम्पन्न हुआ, उसको जिसको हम श्रावणी पर्व के नामो से वर्णन करते रहते है मानो देखो, हमारे यहां ऐसा विचार बना रहा है, कि देखो, आज देखो, इस पूर्णिमा के अवसर

पर इस पर्व पर मानो देखो, रक्षा का यह प्रतीक माना गया है। मेरी पुत्रियां मानो अपने मानो विधाताओं के एक मानो देखो, कर्म अमृतम सूत्र का उसमें सूत्रित करते रहे है और परम्परागतों से मेरी पुत्रियां अपने विधाताओं में आयु की कामना करती रही है कि इसमें मेरा विधाता आयु वाला बने और मानो देखो, वह बन्धन अपने में देखो, अपनी रक्षा का और देखो, समाज के उन कर्तव्यों का एक बन्धन मानो देखो, बन्धन सूत्र उसमें सूत्रित करते रहे है। मैं मानो देखो, बहुत से वाक्यम ब्रह्मा जब देखो, महाभारत के काल में जब अभिमन्यु संग्राम के लिए जाने लगे, तो महारानी कुन्ती ने भी देखो, एक सूत्र उनके उनकी भुजाओं में कटिबद्ध कर दिया था और यह कहा था कि जब तक तुम्हारा यह सूत्र बना रहेगा, जब तक तुम्हें कोई नष्ट नहीं करेगा इतना सङ्कल्पमयी वह सूत्र बना हुआ था तो वह जब तक मानो देखो, संग्राम में गएं तो संग्राम में जा करके दुर्योधन ने यह कहा था कि हे पुत्र! तुम्हारे मानो भुजों में ये जो सूत्र बन्धन है, जब तक ये रहेगा जब तक तुम्हारे समीप नही आ सकेंगें। तो मानो देखो, उस सूत्र को सबसे प्रथम जयद्रथ ने नष्ट कर दिया था। और उस सूत्र के नष्ट होते ही वह मृत्यु को प्राप्त हो गया तो परिणाम यह कि मेरी पुत्रियां मेरी माताएं यह सूत्र बन्धन इसलिए की आयु इनका दीर्घ को और कर्तव्य का पालन करे इन भुजों से किसी प्रकार का मानो अन्याय देखो, न्याय युक्त रहने चाहिए, यह दूसरों की रक्षा के लिए होने चाहिए दूसरो को नष्ट करने के लिए भी नहीं होने चाहिए यह भुज इसलिए देखो, रक्षा का एक सूत्र है। और यह सूत्र परम्परागतों से वैदिक पाण्डितव मानो देखो, पुरोहित जन अपने मानो देखो, अपने में अपने में यज्ञमानो को देखो, सूत्र में सूत्रित करते रहे तो इस दिवस मानो देखो, ऐसे ही यह दिवस वह है जहां वेद का प्रारम्भ हुआ था वेद की शिक्षा का प्रारम्भ हुआ यह श्रावणी पर्व कहलाता है और श्रावणी पर्व का अभिप्राय यह है क्या देखो, वह वर्षा काल का समाप्त होना और मानो देखो, दूसरी ऋतु का प्रारम्भ होना और प्रारम्भ होने के पश्चात अब मुझे यह वर्षा काल का समापन होना, मध्य भी

कोई न कोई स्वीकार करता है, यह मध्य भी इसको कहा जाता है परन्तु देखो, यह मध्य में जैसे परमपिता परमात्मा देखो, मेघो के द्वारा मानो देखो, वायु अपने प्राण रूपी वज्र से नाना प्रकार की खनिज पदार्थ और खाद्यो की रक्षा होती रहती है इसी प्रकार यह पर्व है कि इससे देखो, बुद्धिमान अपने पुरोहित की भी रक्षा करता रहे, और पुरोहित यज्ञमान की रक्षा करता रहे ज्ञान देता रहे जिससे समाज में कुरीति न आ जाए और राष्ट्र को भी चाहिए की वह अपने गृह में याग और राष्ट्र में देखो, अश्वमेध याग भी प्रायः देखो, इसी पर्व पर प्रारम्भ हुआ करते हैं, मुझे स्मरण आता रहता है एक समय मेरे पूज्यपाद गुरुदेव जब मानो देखो, याग होते थे राजाओं में प्रायः यह प्रथा बनी रही देखो, राजा रघु के यहां एक याग हुआ वह श्रावणी पर्व पर मानो प्रायः पण्डित जनाः वेद के मर्म को जानने वाले मानो पाण्डितव सर्वत्र राजाओं के यहां जा करके मानो वेद की घोषणा करते कहीं अश्वमेध याग कहीं मानो वृष्टि याग का चलन होता रहा है क्योंकि याग ये रक्षार्थी बना रहता है राजा के राष्ट्र में प्रदूषण नहीं होना चाहिए यदि समाज में प्रदूषण आ गया है और राजा के राष्ट्र में कर्तव्य की हीनता आ गई है तो एक मानव मानव के रक्त का पिपासी बन जाता है और राजा के राष्ट्र में मानो देखो, कर्तव्यवाद की हीनता हो जाती है इसलिए राजा को चाहिए क्या समय समय पर वह अश्वमेध याग करता रहे और वह प्रजा को नाना प्रकार की ब्रह्म ज्ञान की शिक्षा देता रहे वह पुरोहित के द्वारा देखो, यह सूत्र इसी प्रकार राजा जब अपने राष्ट्र में यह घोषणा करता है कि हे प्रजाओं! हे ब्राह्मणजनों! आओ तुम सदनम ब्रह्मा वर्णसुते देवाम तुम वेदमन्त्र को विचारो वेदमन्त्र कहता है कि जहां यह सूत्रों में सूत्रित किया जाता है वहां यह तीन बन्धनों में देखो, यज्ञोपवीत में इसको बद्ध कर दिया गया है और यज्ञोपवीत में मानो देखो, तीन प्रकार के ऋणों से मानव को संकेत करता रहता है सबसे प्रथम मानो देखो, मातृ ऋण है, ऋषि ऋण है और देव ऋण कहलाता है। मानव देवताओं के लिए याग करता है, जिससे देवता मानो अग्नि को मुख बना करके

और देवा देवानाम मुखारं ब्रह्मे व्रतम अग्नि और वह देवताओं का जो मुख है, अग्नि उसमें हूत करता है, तो इससे देवता प्रसन्न होते है जड़ और चैतन्य दोनों प्रसन्न होते है, और द्वितीय मानो या पितृया अमृहे देखो, पितर ऋण है तो पितर हमारे लिए जो क्रियाकलाप करते है, और पितरो का जो शुद्धिकरण किया हुआ संसार है। उसको अग्रणीय बनाना यह हमारा कर्तव्य है। और मानो देखो, ऋषि ऋण यह ऋषि मुनियों ने आध्यात्मिकवाद में प्रवेश किया है, और आध्यात्मिकवाद में प्रवेश होते हुए आध्यात्मिकवाद को आत्मा से परमात्मा तक परमात्मा से आत्मा तक और आत्मा को मनस्तव, प्राणत्व की पुट लगा करके यह पञ्च भूतों को जानना मानो देखो, यह ऋषि ऋण कहलाता है मैंने अपने पूज्यपाद गुरुदेव से विशेष चर्चा प्रगट करने तो नहीं मानो देखो, वेद के परन्तु यह आधुनिक काल में तो देखो, धर्मम् ब्रह्मणा वर्णसुते आधुनिक काल में तो धर्म की यह पुकार बनी हुई है, प्रायः वास्तव में कि आधुनिक काल में जो समाज यह चल रहा है न तो यह धर्म की ही जानता है, और न अधर्म को ही जानता है, परन्तु यह स्वार्थपरता में अपने को ले जाता जा रहा है। मैं आधुनिक काल में जब प्रवेश करता हूँ, तो मुझे अन्धकार दृष्टिपात आता है, समाज का जो अग्रणीय जीवन है। वह भविष्य मुझे अन्धकार में दृष्टिपात आता रहता है। मैं यह स्वीकार करता रहता हूँ, आधुनिक काल में या तो कोई राजा नहीं है। और राजा हम मानो किसी को स्वीकार भी कर लेते है, तो वह समाज की मानो देखो, समाज को इस वह प्रसन्न करना चाहता है और वह कर्तव्यवाद में समाज को न ले जाता हुआ केवल अधिकार की पुकार हो रही है, और वह अधिकार इतना बलवती आ गया है, कि अधिकार कोई भी मानव देखो, इस पर तक पूर्ण नहीं कर सका है सृष्टि के प्रारम्भ से ले करके वर्तमान के काल तक कोई भी राजा हो, वह प्रजा की मानो देखो, अधिकार की इच्छा पूर्ण नहीं कर सका है। कर्तव्यवाद में जब राजा और प्रजा दोनों एक दूसरे में तत्पर हो जाते हैं, तो कर्तव्यवाद में मानव अपने में मौन हो जाता है। कर्तव्यवाद में परमात्मा की

प्रतिभा में रत्त हो जाता है। मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव से यह कहता रहता हूँ, कि आधुनिक काल का जो समाज है, यदि वह कर्तव्यवाद से विहिन हो गया है, और वह मानो देखो, वह अप्रतम ब्रव्हे पुकार कर रहा है, कि और अधिकार चाहता है। अधिकार में ही देखो, अपने को रत्त कर रहा है। सुरा सुन्दरी में रत्त हो करके अपने आहार अपने उदर की पूर्ति में लगा हुआ है। तो यह क्या है देखो, में यह कर्तव्यवाद नहीं कहा जाता इसको अकर्तव्यवाद अधिकार कहा जाता है। अधिकार को कोई भी पूर्ण नहीं कर सका है मैं जब राजा रावण के काल में जाता हूँ, तो प्रायः देखो, राजा रावण के काल में भी अधिकार की पुकार होने लगी थी, राजा रावण का काल भी उस समय अग्नि का काण्ड बन करके रह गया था यही दशा इस समय वर्तमान काल में भी मानो देखो, चले प्रत्येक स्थलियों पर अग्नि के काण्डों का केवल अभिप्राय यह है, क्या कर्तव्यवाद नहीं रहा है। कर्तव्यवाद की हीनता आ रही है, अधिकार की पुकार होती चली आ रही है, और अधिकार को कोई भी मानव अब तक पूर्ण नहीं कर सका है। जब तक मानव कर्तव्यवाद में परणित नही होगा, मेरे पूज्यपाद गुरुदेव में देखो, विशेष चर्चा न देता हुआ केवल यह कि आधुनिक वर्तमान में देखो, आज का यह जो पर्व है, जिस पर्व से देखो, ब्रह्मं ब्रव्हे अङ्गिरस ऋषि के देखो, महापिता ब्रह्मा के पुत्र अथर्वा ने जब वेद के मन्त्रों का उद्गीत गाया था। यह आज का वही दिवस है वही पर्व है जो परम्परागतों से पूर्णिमा और चन्द्रमा अपनी सम्पूर्ण कलाओं से युक्त हो करके और वह गान गाता है, वह अमृत देता है, इसी प्रकार देखो, वेद को जानने वाला वैदिक ज्ञान में प्रवेश करता है। राजा और प्रजा मिल करके देखो, अपने जीवन में अमृत की प्रदान करते रहते है। यह आज का वही दिवस है, जब देखो, महर्षि अथर्वा ने ब्रह्मा के ज्येष्ठ पुत्र ने, वेद मन्त्रों का उद्गीत गाया था, और वेद मन्त्रों में सामाम भूतम देखो, परमात्मा के समीप विद्यमान हो करके वेद मन्त्रों का उद्गीत गाने का प्रयास किया, और वही वेदमन्त्र मानो देखो, अपने में महान है। मैंने तुम्हें कई कालो में वर्णन

किया था कि ब्रह्मा के पुत्र अथर्वा से ले करके और मानो अङ्गिरस ऋषि और दृडीय गोत्र हरितत गोत्र देखो, उद्दालक गोत्रों में भी इस प्रकार की प्रायः प्रथा बनी रही है और देखो, वशिष्ठ गोत्रों में भी भारद्वाज इत्यादियों में विज्ञान की पुकार होती चली आई है आज मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव को तो भलिभान्ति प्रतीत है मैं इस साहित्य में नहीं जाना चाहता हूँ केवल यह कि आधुनिक काल का वर्तमान में यह वह पर्व है यह पूर्णिमा का दिवस है जब चन्द्रमा अपनी सम्पन्न कलाओं से युक्त हो करके रात्रि को अपने अन्धकार को अपने गर्भ में धारण करके देखो, वह प्रकाश का पुंज बन जाता है, और वह अमृत देता रहता है वनस्पतियां उसे अपने में सहायतार्थ जीवन को पान करती रहती है। वह कर्तव्यवाद कहा जाता है परन्तु देखो, इसी प्रकार मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव से मैंने कई कालों में यह वर्णन करते हुए कहा है क्या यह जो समाज की प्रणावृत्ति अस्तुते पुनरुक्तिया जीवन में आती रहती है यह केवल उसकी प्रतिभा से बनी रहती है और आधुनिक काल का जो जगत है, मैं विशेष नहीं आधुनिक काल में यह समाज कहीं चला जाएं, रक्त का पात्र बन जाएं। परन्तु अपने पद की लोलुपतता न जाएं ऐसा मानो देखो, आधुनिक काल का समाज बन चुका है कर्तव्यवाद न रहने से अकर्तव्यवाद में ही देखो, अपने में परणित करता जा रहा है। आज मैं इस सम्बन्घ में विशेष चर्चा न देता हुआ केवल यह कि मैं अपने यज्ञमान के सम्मुख जाता हूँ, कि यह जो वर्तमान का काल है जहां मैं इसे वर्तमान का काल सुरा और सुन्दरी में और आहार और व्यवहार में समाज नष्ट होता चला जा रहा है यह वास्तव में वाममार्ग का काल है यह काल इसको में प्रिय काल नहीं कहा करता हूँ।

परन्तु विचार विनिमय केवल यह कि आधुनिक काल में में जो जिस गृह में जिस यज्ञमान का द्रव्य में सदुपयोगता आ जाती है, अपने में सदुपयोग करता है मैं उस यज्ञमान को अपना देखो, हृदय से अपनी सत्यकामना देने आया हूँ हे यज्ञमान! तेरे जीवन का प्रायः सौभाग्य अखण्ड बना रहे, क्योंकि तेरे जीवन में सदैव द्रव्य का

सदुपयोग होता रहे, जिस मानव के द्रव्य का सदुपयोग होता है। वह मानव द्रव्य का सदुपयोग होता है वह मानव भाग्यशाली कहलाते है वह मानव अपने में कर्मठ कहलाते है और जिस गृह में द्रव्य का दुरूपयोग होता है सुरा और सुन्दरी में द्रव्य चला जाता है, वह मानव दुर्भागी कहलाता है। इसीलिए मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव से नाना प्रकार के ऋषियों की चर्चा न देता हुआ केवल यह कि देखो, अमृतम ब्रव्हे प्रत्येक गृह में जैसे भगवान राम का कथन है प्रत्येक गृह में सुगन्धि होनी चाहिए। सबसे प्रथम साकल्य की सुगन्धि जो अग्नि के मुख में देखो, जड़ देवताओं की पूजा होती है और द्वितीय अपने विचारो की सुगन्धि प्रत्येक गृह में प्रत्येक मानव देखो, माता पिता सर्वत्र अपने गृह में विद्यमान हो करके दर्शनों का स्वाध्याय करना चाहिए दर्शनों के ऊपर विचार विनिमय करना चाहिए कर्तव्य अकर्तव्य के ऊपर विचार विनिमय करना चाहिए गृह पवित्र हो जाए गृह पवित्र बनेगे तो गृह में आने वाले समाज को भी देखो, गृह स्वामी बनेगा और राजा के राष्ट्र में प्रत्येक प्रजा अपने ऊपर अधितव्य धारण करते हुए मानो देखो, ब्रह्म ज्ञान राजा में होना चाहिए राजा में ईश्वर के नाम पर जब रूढ़िवाद पनप जाता है तो शान्ति चली जाती है राजा के राष्ट्र में कर्तव्य विज्ञान का दुरूपयोग होने लगता है, तो पुकार ही पुकार रह जाती है कर्तव्य नष्ट हो जाता है और जब विज्ञान का सदुपयोग होता है तो मानव कर्तव्य का पालन करता है, और जब ईश्वर के नाम पर नाना प्रकार की रूढ़ियां बन जाती है। तो राजा के राष्ट्र में रक्त भरी क्रान्ति आ जाती है। समाज में रक्त भरी क्रान्तियां आ जाती है, इसीलिए मैंने अपने पूज्यपाद गुरुदेव से कई काल में कहा है, क्या राजा को चाहिए कि वह अपने राष्ट्र में धर्म की और देखो, शान्ति की स्थापना चाहता है। तो ईश्वर के नाम पर नाना रूढ़ि नहीं होनी चाहिए, धर्मणाम् नाम भूतम ब्रह्मे इन्द्रियों के ऊपर मानवता होनी चाहिए कर्तव्य और अकर्तव्य के ऊपर विचार विनिमय राजा को होना चाहिए।

तो आज मैं विशेष चर्चा न देता हुआ अपने पूज्यपाद गुरुदेव को अवगत करा रहा

हूँ क्या आधुनिक काल का जो समाज है वह अपने में वाममार्ग न बनता हुआ नाना प्रकार की रूढ़ियों से युक्त हो करके कर्तव्यवाद का पालन करता रहे और राजा को चाहिए कि ब्रह्म ज्ञान में उसकी निष्ठा होनी चाहिए उसकी निष्ठा जब ब्रह्मज्ञान में होती है, तो प्रजा भी देखो, ब्रह्म ज्ञान को अपने में धारण करने लगती है तो आज का विचार विनिमय क्या मैं आधुनिक काल के इस पर्व की चर्चा कर रहा हूँ जो सृष्टि के प्रारम्भ से पर्व चला आ रहा है मानवीय समाज में इस श्रावणी पर्व का बड़ा महत्व माना गया है इस दिवस मानो देखो, पूर्णिमा के दिवस अपने में वेदों का उदघोष करने वाले मैंने अभी अभी कहा पूज्यपाद गुरुदेव ने भी मुझे कई काल में वर्णन कराया क्या ब्रह्मा के पुत्र अथर्वा ने अथर्व का स्थिर हो करके वेदों का गान गाना प्रारम्भ किया मानो देखो, उनके जेठे पुत्र का नाम अथर्वा था और द्वितीय का नाम अग्नेतकेतु केतु था इसी प्रकार मानो उनके कुछ पुत्र थे और यही वंशल्ज मानो देखो, अङ्गिरस अङ्गिरस और आदित्य इत्यादि ऋषियों में रत्त होता रहा और यही फिर नाना प्रकार के गोत्रों में गोत्रित होता रहा है।

तो आओ मेरे पूज्यपाद गुरुदेव तो सर्वत्र जानते हुए इन साहित्यिक चर्चाओं में केवल में विचार विनिमय केवल यह क्या आधुनिक काल का पूर्णिमा का यह जो दिवस है यह पर्व है और यह अमृत है। मानो देखो, यही तो हमारे यहां एक श्रावणी पर्व कहा जाता है। श्रावणी कहते है जहां यह पृथ्वी अपने गर्भ से परिपक्व होती है और परिपक्व हो करके यह गर्भ में नाना वनस्पतियों को अपने में सजातीय बना लेती है और सजातीय बना करके मेघ मण्डलों से पुकार होती है वह वृष्टि प्रारम्भ होती है और वृष्टि में देखो, जो दूषित पृथ्वी की आभा में देखो, याग अपने में संचित करता है इसीलिए श्रावणी पर्व पर सब ऋषि मुनि गृह में राजा महाराजा सब याग में अपने को परणित करते रहे हैं। तो आज का विचार विनिमय क्या मैं केवल विशेष चर्चा नहीं विचार केवल यह कि मानव को अपने कर्तव्य में निहित होना चाहिए द्रव्य का सदुपयोग होना चाहिए। हे यज्ञमान! तेरे जीवन या सौभाग्य

अखण्ड बना रहे जीवन की प्रतिभा महान बनी रहे और द्रव्य का सदुपयोग होता रहे, ऐसा मेरा सदैव विचार रहता है। अब मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव से आज्ञा पाऊंगा।

पूज्यपाद गुरुदेवः मेरे प्यारे ऋषिवर! अभी अभी मेरे प्यारे महानन्द जी ने, अपने बड़े भव्य विचार और सामाजिक और लौकिकवाद में जाने के लिए इन्हें अपना मन्तव्य दिया राष्ट्रवाद कैसे ऊंचा बनता है, और विज्ञान का प्रायः दुरूपयोग नहीं होना चाहिए। तो ऐसा इन्होंने अपना विचार दिया है, आज का हमारे वाक्यों का अभिप्राय यह क्या प्रत्येक मानव को अपने में याज्ञिक होना चाहिए। प्रत्येक मानव, मानव में प्रवेश होता रहे, समाज को ऊंचा बनाता रहे। यह आज का वाक अब सम्पन्न होने जा रहा है। कल समय मिलेगा तो शेष चर्चाएं प्रगट करेंगे। आज के वाक उच्चारण करने का हमारा अभिप्राय यह कि हम परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए, देव की महिमा का गुणगान गाते हुए, इस संसार सागर से पार हो जाएं, यह है आज का हमारा वाक अब समय मिलेगा तो मैं शेष चर्चाएं कल प्रगट करूंगा। ओ३म् देवाः आभ्याम रथम मानहम प्राची रथं मनु आपाः.....।

4.दीपमालिका-6977018

जीते रहो! देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भान्ति, कुछ मनोहर वेद मन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेद मन्त्रों का पठन पाठन किया, हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है, जिस पवित्र वेदवाणी में, उस मेरे देव की अनुपम विद्या अथवा उसकी महती का वर्णन किया जाता है। क्योंकि वह जो मेरा देव, परमपिता परमात्मा है, जो सर्वत्र जगत का नियन्ता है, अथवा निर्माणकर्त्ता है आज हम उस परमपिता परमात्मा की उपासना करते चलें जाएं, हमारा वेद का ऋषि अथवा वेद का मन्त्र हमें बारम्बार हमें नवीन से नवीन प्रेरणा देता रहता है और एक एक वाक हमें ऐसा प्रतीत होने लगता है कि जैसे उस परमपिता परमात्मा की विचित्र अथवा आभा में परणित हो रहा है। आज का वेद का पठन पाठन, मानवीय विज्ञान के सम्बन्ध में, अथवा नाना प्रकार की अनुपम विद्याओं का, एक प्रतीक आता चला जा रहा था। जब हम एक एक वेदमन्त्र के ऊपर अध्ययन करना प्रारम्भ करते हैं, तो हमें ऐसा प्रतीत होता है, क्या एक एक अध्ययन की पवित्र धाराएं में और वेद के मन्त्रों में, वेद के गर्भ में मन्त्रार्थों हमें मनन करने से, हमे ऐसा प्रतीत होता है, जैसे हम परमपिता परमात्मा के और वेद के अनुपम प्रकाश में विद्यमान हैं क्योंकि उसका प्रकाश बेटा! एक एक परमाणु अथवा एक एक अणु में समाहित हो रहा है, जब यह विचारने लगते हैं कि वह परमात्मा व्यापक है, एक एक वस्तु में व्याप्त रहता है, तो मेरे प्यारे! हम परमात्मा से कहाँ जाएं? कोई स्थली हमें ऐसी प्रतीत नहीं होती, जहाँ वह परमपिता परमात्मा न हो, और जब हम अपने में यह अनुभव कर लेते हैं, कि परमात्मा सर्वत्र है, परमात्मा एक एक, कण कण में व्याप्त है। तो मेरे प्यारे! वह मानव कहाँ जाएगा? कौन सी भूमि ऐसी है? कौन सी पर्वतों की माला ऐसी है? हिमालय की कन्दरा कोई ऐसी है? जहाँ वह परमात्मा न हो और जा करके किसी प्रकार का अनाचार पापाचार

कर सकता है। कोई स्थली ऐसी नहीं, तो इसीलिए हम उस परमपिता परमात्मा को जब व्यापक स्वीकार करते हैं। तो हमारा मनोनीत हृदय पवित्र हो जाता है। हमारे मानवीयतव की शक्ति ऊर्ध्वा गति को प्राप्त होने लगती है। इसीलिए मेरे पुत्रों! मेरे ऋषिमण्डल! प्रत्येक मानव को शुद्ध और पवित्र चिन्तन करना चाहिए। जब शुद्ध और पवित्र चिन्तन करता है मानव तो मानव के हृदय में एक विद्युत उत्पन्न होती है, एक नवीन प्रकाश आता है, एक मानो नवीन देवी सम्पदा मानो तुम्हें प्राप्त होती है, मानो देखो, उस का पूजन करने से, पूजन का अभिप्राय मैंने तुम्हे कई काल में वर्णन करते हुए कहा था पूजा का जो अर्थ है, वह उन गुणों को अपने में धारण करने का नाम उनकी पूजा कहलाई जाती है। मेरे पुत्रों! कई काल में अग्नि के ऊपर विवेचना प्रारम्भ हुई, अग्नि के ऊपर नाना प्रकार के वाक प्रारम्भ होते रहते हैं। मानो देखो, अग्नि हमारा एक प्रतीक है, अग्नि देवी है, वह कैसी प्रकाशमयी देवी है, उसका प्रकाश मानो देखो, मानव के एक एक पग पग में विद्यमान रहता है। जब इसके ऊपर हम मनन चिन्तन विद्याध्यासन मानो आभा में रमण करते हैं, तो बेटा! एक एक शब्द हमारे मानव जीवन के लिए सार्थक बन जाता है।

आओ, मुनिवरों! देखो, आज मैं तुम्हे विशेष चर्चा प्रगट करने नहीं आया हूँ, विचार विनिमय तुम्हे केवल यह देने के लिए आया हूँ, कि परमपिता परमात्मा के राष्ट्र में, नाना प्रकार की विद्याएं हैं, वेदों में इस प्रकार की विद्याए भी हैं, जो मानव केवल अनुभव करता रहता है, और उसको बाह्य जगत में लाने का प्रयास भी नहीं करता। क्योंकि बाह्य जगत में उनके आने की आवश्यकता भी नहीं होती, बुद्धिमान यह जानता है, योगेश्वर यह जानता है, क्या बहुत सी विद्याएं वेद में इस प्रकार की हैं मेरे प्यारे! जो अनुभव करके वह त्याग देता है। तो जितना भी परमाणुवाद है, जितना मानो यन्त्रवाद है, जितना ब्रह्मवाद है, मेरे प्यारे! ब्रह्मास्त्रों का वाद है वह सर्वत्र वाद ऋषि मुनियों के मस्तिष्कों में विद्यमान रहते हैं। और वह भौतिकवाद और आध्यात्मिकवाद दोनों की उड़ान उड़ते रहते हैं, परन्तु देखो, इनको मानवीय

अपने मस्तिष्कों में परम्परागतों से अपने तक ही सीमित रहा है, वह ज्ञान जो उसका बाह्य स्वरूप धारण हो जाता है, बाह्य जगत में प्रवेश कर जाता है। बाह्य जगत में बेटा! वह आ जाता है, तो उससे मानव को इतना सुव्रत चिन्तन नहीं होता, जो उसको वह अपने में मानो चिन्तन का एक विषय बना सके उसका केवल वह दुरूपयोग करता रहता है। उसके दुरूपयोग की एक आभा बन जाती है। परिणाम यह होता है, वह जो दुरूपयोग है, उस विद्या हो वह उस प्राणी को नष्ट कर देता है, अथवा समाज में आ जाता है, तो समाज में विकृतता आ जाती है। राष्ट्र उसको अपना लेता है। तो मेरे प्यारे! समाज में समाज का अनुशासन नष्ट हो जाता है। तो परिणाम क्या मुनिवरों! देखो, इसीलिए बहुत सी ऐसी विद्याएं हैं, ऐसी नाना प्रकार की चित्रावलियों का मैंने तुम्हे कई काल में वर्णन कराया, और भी जैसे ब्रह्मस्त्र जैसे रोहिणी शस्त्रों का निर्माण अथवा इनकी आभा का वर्णन कराया था। परन्तु देखो, मैं आज इस सम्बन्ध में विशेष चर्चा तुम्हें प्रगट करने नहीं आया, हमारे यहाँ वेद में इस प्रकार की विद्या हैं, जितना भी मानव उसको मन्थन कर लेता है, क्रिया में लाने का प्रयास करता है, उतना ही उन्नत और विद्या उसके समीप आने लगती है। मेरे पुत्रों! मैंने कई काल में तुम्हें वर्णन करते हुए कहा इससे पूर्व शब्दों में मैं महाराज हनुमान जी के सम्बन्ध में कुछ विचार विनिमय कर रहा था अथवा अपने विचार दे रहा था पतञ्जलि क्या मानो और भी नाना ऋषि परम्परागतों से योग की नाना प्रकार की आभाएं आभाओं का वर्णन होता रहा है, उन योग के सूत्रों को ले करके योग की चित्रावलियों को ले करके मानव देखो, योग के ऊपर अनुसन्धान करता रहा है। महाराज हनुमान जी ने अपने नाना गुरूओं से ऊँची विद्या का अध्ययन किया और वह अध्ययन नाना प्रकार की लघुविद्या को, उसने अध्ययन किया मानो प्रसारण विद्या का अध्ययन किया। मेरे प्यारे! देखो, उन्होंने व्यापक और ऊर्ध्वा, ध्रुवा मानो देखो, पांचो प्रकार की गति, जो प्रकृति की हैं, उनको जानने का सर्वत्र उन्होंने प्रयास किया। वह गुरुओं के चरणों में ओत प्रोत

हो करके, उनको बारह बारह वर्ष हो जाते थे, एक एक विद्या के ऊपर अध्ययन करते हुए मानवीयतव में उनके प्राणों की जो आभा है, जैसे प्राण, अपान, उदान, समान और व्यान हैं। इन प्राणों के ऊपर अध्ययन प्रारम्भ रहा है, और जो प्राणों की गतियों को जानता रहता है, मेरे पुत्रों! देखो, वह महान योगी बन जाता है। पवित्र योगी बन जाता है, और वह अस्त्रों शस्त्रों में भी पारायण बन जाता है।

पूर्णिमा और अमावस्य का याग

मेरे पुत्रों! देखो, मैंने कई काल में, तुम्हें वर्णन कराते हुए कहा था एक अयोध्या के सम्बन्ध में, अयोध्या की विवेचना करते हुए कहा था, मेरे प्यारे! देखो, वास्तव में अयोध्या तो हमारा मानवीय शरीर एक प्रकार की पुरी कहलाई जाती है। हमारे यहाँ उस पुरी को दृष्टिपात करते हुए, अयोध्या का निर्माण, भगवान मनु ने किया था। भगवान मनु ने मानवीय शरीर, मानवीय अयोध्या को दृष्टिपात करते हुए, इस मानव देखो, बाह्य अब्रह एक नगर का निर्माण किया था, एक नगरी का निर्माण किया, जिसका नाम अयोध्या कहलाया गया। जिस अयोध्या में नौ द्वार कहलाए जाते थे। मेरे प्यारे! आठ प्रकार के बृहद चक्र कहलाए जाते थे परन्तु उसी के आधार पर उन्होंने अयोध्या पुरी का निर्माण किया। जिस अयोध्या पुरी में, उन्होंने सबसे प्रथम लेखनी में लेखन करते हुए मेरे प्यारे! उन्होंने राष्ट्र का निर्माण किया। राष्ट्र के सम्बन्ध में, और मानव के चरित्र के सम्बन्ध में, मानवीयतव के सम्बन्ध में, बेटा! उन्होंने एक विचित्र, विचित्र आभाओं का वर्णन किया है। आज मैं उन आभाओं को तो वर्णन करने नहीं जा रहा हूँ, मैं राष्ट्र के सम्बन्ध में भी अपनी विवेचना देना नहीं चाहता हूँ परन्तु उन्होंने क्या मेरे प्यारे! इससे पूर्व जो ऋषि हुए, भगवान मनु से पूर्व ऋषि हुए हैं, उन्होंने बेटा! यागों के सम्बन्ध में अपनी लेखनियाँ बद्ध की हैं और उन्होंने अपनी लेखनी बद्ध करते हुए कहा, कि हमारे यहाँ एक वर्ष में मानो देखो, एक वर्ष में बारह माह होते हैं, और उनमें मानो देखो, एक सौ एक ही मानो कृष्ण पक्ष होता है एक शुक्ल पक्ष होता हैं मानो देखो, दोनो पक्षों में उन्होंने यागों

का वर्णन किया है। उन्होंने मानो देखो, अमावेष्टि और पूर्णोष्टि यह दोनो प्रकार के यागों का वर्णन किया। उन्होंने कहा है क्या अमावस्य दिवस में मानव को याग करना चाहिए, क्योंकि याग एक धर्म है। याग एक मानव को सुगन्धित देना है, क्योंकि मानव के जीवन में भी दो ही प्रकार की आभा आती रहती है। एक शुक्ल पक्ष है, एक कृष्ण पक्ष है, तो मुनिवरों! देखो, शुक्ल पक्ष और कृष्ण पक्ष क्योंकि कृष्ण अन्धकार को कहते हैं, और शुक्ल प्रकाश को कहते हैं मुनिवरों! देखो, मानव के जीवन में देखो, उन्नत और अउन्नत दोनों प्रकार की घाराएं आती रहती हैं। किसी काल में मानो देखो, वह अपने कार्यों में रत्त रह करके प्रसन्न रहता है, किसी काल तो ऐसा आता है कि प्रमाद आलस्य में परणित होता हुआ मानो देखो, आलस्य से रहित होता है, आनन्दयुक्त होता हैं, मेरे प्यारे! उसको शुक्ल पक्ष कहते हैं, और जब आलस्य और प्रमाद छाया हुआ होता है जीवन में कोई मार्ग प्राप्त न हो रहा हो, मानो उसको कृष्ण पक्ष कहते हैं। उसको अन्धकार कहा जाता है।

देवताओं का पूजन

तो मेरे पुत्रों! यह दो प्रकार के पक्ष हैं, परन्तु आज मैं उन दोनों प्रकार के पक्षों में जाना नहीं चाहता हूँ, मुझे वह काल स्मरण आता रहता है, जिस काल में मुनिवरों! देखो, यह नाना प्रकार के यागों का चयन और यागों का चलन परम्परागतों से रहा है। मानवीय मस्तिष्कों में क्या ऋषि मुनियों के आश्रमों में क्या मेरे प्यारे! प्रत्येक गृह आश्रम में राष्ट्रीय क्षेत्रों में भी उन यागों का चलन रहा है, और यागों का चयन होता रहा है, मानो कोई भी शुभ कर्म हो उसमें सबसे प्रथम याग का चलन होता है। क्योंकि देवताओं का आह्वान करना बहुत अनिवार्य होता है। देवता कौन होते हैं, बुद्धिमान चैतन्य और जड़ दोनों प्रकार के देवता होते हैं। उन दोनों प्रकार के देवताओं का आह्वान करना यह प्रत्येक गृह का कर्तव्य होता है। यह प्रत्येक राष्ट्र का कर्तव्य होता है। क्योंकि राष्ट्रों का जो निर्माण होता है, वह देवताओं से होता है, और देवताओं की रक्षा करना और देवतव की मुनिवरों! देखो, देवतव की रक्षा करना

और देखो, वह जो दानव है और देखो, दैत्य हैं इन दैत्यों के लिए मुनिवरों! इनको दण्डित करना इनको अनुशासन में लाना, इसीलिए मेरे पुत्रों! राष्ट्र और समाज का निर्माण होता है। समाज में राष्ट्र का निर्माण इसीलिए होता है, शासक की आवश्यकता भी उसी काल में होती है, जब दैत्यों का प्रकोप हो जाता है। दैत्य प्रवृत्ति के प्राणी बलवती हो जाते हैं। मेरे पुत्रों! देखो, उस काल में राष्ट्रीयता का निर्माण होता है।

ब्रह्म रात्रि

मेरे पुत्रों! मैं तुम्हे उसी काल में ले जाना चाहता हूँ मानो देखो, यह जो दो प्रकार के मानव पक्ष है दो प्रकार के एक माह में और बारह माह का एक वर्ष होता है। मेरे प्यारे! देखो, बारह वर्षों का एक व्रीत होता है, और मुनिवरों! देखो, एक हजार चतुर्युगियों में एक कल्प कहलाया गया है। मेरे प्यारे! देखो, इक्कहतर चतुर्युगियों का मेरे प्यारे! देखो, एक अहोरात्र और इसी प्रकार मानो देखो, मन्वन्तरों की गणना की जाती है। मानो देखो, उसमें एक मनु होता है। इक्कहत्तर चतुर्युगियों में एक मनु होता है और मुनिवरों! देखो, जब एक सहस्र समय मानो देखो, यह सौ ब्रहे ब्रह्मणानि अमृता देवाः व्रत देवो ब्रह्म लोकाः मुनिवरों! देखो, जब अहोरात्र होता है, अहोरात्र उसे कहते हैं जब मुनिवरों! देखो, सौ ब्रह्मे मानो देखो, और चतुर्युगियों का गृह होता है और चतुर्युगियों में मेरे प्यारे! मन्वन्तर और अहोरात्र इसी प्रकार वह ब्रह्मा की रात्रि मानी जाती है। मैं इस सम्बन्ध में विशेष चर्चा प्रगट नहीं करूंगा, कल के सम्बन्ध में इन चर्चाओं को कर पाऊँगा, कि कैसे अहोरात्र होता है? कैसे मन्वन्तर होता है? मानो कैसे मनु होता है? और मनु के पश्चात वह ब्रह्म रात्रि होती है, वह सृष्टि का एक कल्प होता है, और ब्रह्म की रात्रि और दिवस दोनों चला करते हैं। परन्तु आज का मेरा यह विषय नहीं कल विषय तो कल मन्त्रार्थ विचार होगा। उसके ऊपर चिन्तन किया जा सकेगा, यह पूर्व काल में भी बेटा! मैंने यह वर्णन किया है। आज मैं इस सम्बन्ध में विशेष चर्चा प्रगट करना नहीं चाहता हूँ।

विचार केवल यह चल रहा था कि एक वर्ष में बेटा! देखो, बारह माह होते हैं, और बारह माह में मानो यह चौबीस पक्ष होते हैं, बारह कृष्णपक्ष व बारह शुक्ल पक्ष होते हैं। इन दोनों मे एक दूसरे में आभायित रहने वाला वृतकेतु कहलाया जाता है। मेरे प्यारे! देखो, अनके ऊपर विचारना है, इनके ऊपर चिन्तन करना है। तो महाराज हनुमान बेटा! इनके ऊपर चिन्तन करते रहते थे, और मैंने इससे पूर्व काल में कहा था कि उनके द्वारा एक ऐसी विद्या थी जिस विद्या से वह अग्न्याधान कर लेते थे मानो वह गान गाते थे जब मुनिवरों! देखो, स्वरों में गान गाते थे तो मुनिवरों! देखो, दीपावली मानो दीपक प्रकाशित हो जाते थे मानो देखो, दीपमालिका अपने आङ्गन में प्रदीप्त होती थी।

दुरिता विनाश के लिए रावण वध

मुझे वह काल स्मरण आता रहता है मैंने कई काल में तुम्हे पूर्व भी वर्णन कराया है, मेरे प्यारे! देखो, जब अयोध्या से भगवान राम, लक्ष्मण, हनुमान इत्यादियों ने मुनिवरों! देखो, जब लंका को विजय कर लिया लंका को विजय करने के पश्चात रावण के पुष्प विमान में, वह लंका से मुनिवरों! देखो, अयोध्या के लिए गमन करने लगे, तो जब गमन करने लगे तो उस समय महाराज सुग्रीव ने यह कहा कि महाराज! अब तुम देखो, मध्य में स्थान आयेगा, उस पर अपना शयन करके जाना, विश्राम तुम्हारा होना चाहिए, उन्होंने कहा नही, हम विश्राम नही कर पायेंगे। मेरे प्यारे! देखो, उस समय विभीषण ने कहा था कि महाराज! हमारी इच्छा है कि आप हमारे आश्रम में विश्राम करें .... क्यों उन्होंने कहा क्योंकि तुम्हारा और हमारा जो सम्बन्ध था वह समाप्त हो गया है। क्योंकि देखो, लंका विजय हो गई है, और उसमें सदाचार की स्थापना हमने की है। क्योंकि लंका में रावण को मृत्यु देने का अभिप्राय हमारा क्या है, क्योंकि हमें ऋषि मुनियों ने नाना ऋषियों ने, सभा और विवेचना करके यह कहा था क्या लंका को विजय किया जाए, और लंका को विजय क्यों किया जाए, क्योंकि रावण के राष्ट्र में सदाचार का अभाव हो गया है,

सदाचारिता को लाने के लिए, हमने मानो यह संग्राम किया, ऋषि मुनियों की सहायता से, हमारे द्वारा क्या था, जो हमने अयोध्या को त्यागा था, माता और पिता की आज्ञा पा करके हम भयंकर वन में आ गएं, तो उस समय त्याग और तपस्या का जीवन हमारा बन गया। राष्ट्र हमारे द्वारा नहीं था, परन्तु देखो, शबरी इत्यादि और भारद्वाज महर्षि भारद्वाज मुनि महाराज जो लंका के भी पुरोहित थे। लंका के भी विज्ञान में एक महान वैज्ञानिक कहलाते थे, और देखो, हमारे यहाँ उन्होंने हमें एक प्रेरणा दी नाना प्रकार की प्रेरणा देने के पश्चात मानो देखो, हमने लंका को विजय करने के लिए विचारा वैसे ही कारण बनते चले गएं। क्योंकि लंका को विजय करना था, लंका को विजय करने का हमारा अभिप्राय यह नहीं था कि हम लंका में मानो देखो, रक्त को बहाने के लिए आयें हैं, रक्त को संचारित करने के लिए आयें है, केवल इसीलिए क्योंकि देखो, दुरिता का विनाश हो और महान प्रकाश में लंका पुनः से आ जाएं। जिस उद्देश्य से महाराज शिव ने महाराज रेणकेतु ने और भी नाना राजाओं ने लंका का निर्माण किया था, लंका में राष्ट्र की पद्धति का निर्माण किया था उस पद्धति को हम लंका में लाना चाहते हैं, चाहते थे इसीलिए वह हमारी हमें वह मार्ग प्राप्त हुआ ऋषियों से मानो देखो, महर्षि विश्वामित्र से महर्षि भारद्वाज मुनि से और देखो, महर्षि अत्रि मुनि महाराज से और भी नाना ऋषियों ने हमें नाना प्रकार की प्रेरणा दे करके, मानो देखो, हमें प्रस्थान किया आज हमने लंका को विजय कर लिया, लंका का विजय नहीं, हमने केवल इस समाज की सेवा की है। हम त्याग और तपस्या से मानो रहना चाहते हैं, हम इस समाज के लिए मानो देखो, वह किया कि रावण को जो आततायी था, मानो देखो, जिसके हृदय में चरित्र का अभाव हो गया था, समाज देखो, उसकी राष्ट्रीय पद्धति में अहा! चरित्र का अभाव हो गया था, तो उसको लाने के लिए हमने इतना प्रयास किया है, हमारा तो कहना यही है, हे विभीषण! क्या तुम्हारे राष्ट्र में मानो देखो, यागों का चयन होना चाहिए। यागों की पद्धतियाँ होनी चाहिए, जैसे हमारे यहाँ

पूर्णिमासी और अमावस्य को याग होते हैं, मानो देखो, वह याग परम्परागतों से गृहों में प्रविष्टि होने चाहिए।

दीपावली

मानो देखो, जैसे हमारे यहाँ, दीपावली का याग होता है, दीपावली देखो, आज का भी हमारा यह पर्व नही है दीपावली का जो पर्व है, मानो देखो, वह सृष्टि के आदि से चला आ रहा है। सृष्टि के आदि से दीपावली का पर्व आया, क्योंकि इसको सबसे प्रथम मानव को देखो, वैज्ञानिको ने ऋषि मुनियों ने अपने आश्रमों में देखो, बेटा! प्रकाश की प्रथा मानो दीपों की प्रथा अपने आश्रम में लाने का प्रयास किया। उस समय से दीपावली का पर्व क्योंकि याग को जाना। वेद की विद्या को जानने के लिए उन्होंने प्रयास किया और वेद की विद्या को उन्होंने दीपावली में से ही मानो देखो, दीपमालिका को जाना कि दीप कैसे प्रकाशित हो सकते हैं। रात्रि काल में भी हम अग्नि को कैसे प्रकाशित कर सकते हैं, मानो देखो, ऋषि मुनियों ने इस वाक को पुरातन में विचारा मेरे प्यारे! देखो, राम कहते हैं, हे विभीक्षण ब्रह्मे! मानो हमारी यह इच्छा है, क्या इस पर्व में याग होते हैं, याग क्यों होते हैं, क्योंकि दीपावली के पश्चात मानो देखो, जितने भी कृषक होते हैं, और ऋषि मुनि होते हैं, जितने भी मानो देखो, वैश्य होते हैं, और क्षत्रिय होते हैं, सब अपने अपने आसन पर विराजमान हो करके प्रभु से प्रार्थना करते हैं, याग करते हैं, और यह कहते हैं अपने देव से अपने उस देव से यह कहते हैं। हे प्रभु! अब हम देखो, इस भूमि के गर्भ में, पृथ्वी के गर्भ में बीज की स्थापना करेंगे, और क्षत्रिय कहते हैं कि महाराज! हमारी रक्षा करने के लिए हमारे भुजों में बल होना चाहिए। ब्राह्मण कहते हैं कि दीपावली के अनुपम प्रकाश हम प्रकाश में हमारी दीपावली का प्रकाश चलता रहे, क्योंकि दीपमालिका का अभिप्राय यह क्या दीपमालिका मानो देखो, उसी प्रकाश को ले करके दीपमालिका ज्ञान को भी कहते हैं। ज्ञान का प्रकाश चला रहे, मानो श्री की रक्षा होती है, श्री का पूजन होता है। देवताओं का पूजन होता है, और उन

देवताओं के मध्य में श्री का पूजन होता है। श्री लक्ष्मी को कहते हैं, यह लक्ष्मी क्या है। हे प्रभु! हम लक्ष्मी का सदैव सदुपयोग करते रहें। इसका सदुपयोग क्या है, याग में परणित करना इसका सदुपयोग है, इसी द्रव्य के द्वारा हम मोक्ष को जा सकते हैं। इसी श्री के द्वारा हम इसको देवी सम्पदा स्वीकार करके मानो स्वर्ग को जाना चाहते हैं। परन्तु इसी का दुरूपयोग करके हम नारकिक बनना चाहते है बेटा! हमे नारकिक नहीं बनना है हमे सदैव प्रकाश में रहना है।

प्रभु मिलन से सुखद की प्राप्ति

तो राम कहते हैं हे विभीक्षण! मैंने इसीलिए देखो, लंका पर आक्रमण किया, और ऋषि मुनियों की, मैंने नही किया, यह सर्वत्र जितने भी महापुरूष हैं, संसार के उन संसार के बुद्धिमानो को वेद के मर्म को जानने वाले जितने भी पुरूष हैं, उन्होंने प्रेरणा दी, उन्होंने मुझे शिक्षित किया, उन्होंने धनुर्विद्या किसी ने दी, किसी ने मानो देखो, नाना द्रव्यों का कोष दे करके, मुझे भारद्वाज मुनि जैसों ने नाना प्रकार के द्रव्यों का कोष दे करके, मुझे मानो देखो, लंका के लिए प्रेरित किया। आज मैंने क्यों यहाँ आ पंहुचा हूँ, क्योंकि सदाचारिता के लिए प्रकाश के लिए अन्धकार को नष्ट करने के लिए और प्रकाश को लाने के लिए क्योंकि राजा का यह कर्तव्य होता है। महापुरूषों का यह कर्तव्य होता है कि वह अपने राष्ट्र में प्रकाश को लायें संसार में प्रकाश में लाने का क्योंकि संसार क्या चाहता है, प्रत्येक प्राणी अपने में सदाचारी भी रहना चाहता है, महान भी बनना चाहता है, प्रत्येक प्राणी की एक ही इच्छा होती है कि मैं सुखद बनूं। मेरा जीवन सुखी हो आनन्दवत मैं आनन्द का भी अनुभव करने वाला हूँ। आनन्द तो मानव को प्रभु के मिलन से प्राप्त होता है। सुखद उस काल में प्राप्त होता है, जब ऋत और सत को जानता है, और मुनिवरों! देखो, समाज को सुखी उस काल में बना सकता है, जब स्वयं वह चरित्रवान हो स्वयं वह आभायुक्त हो स्वयं मानो देखो, उसमें राष्ट्रीय शक्ति चरित्र की शक्ति, आत्मिक शक्ति मानो शारीरिक शक्ति, सर्वत्र शक्तियों का उसमें बल होगा, सर्व शक्ति होंगी,

तो वह समाज का सुखी बना सकेगा, तो मेरे पुत्रों! देखो, भगवान राम ने उस समय देखो, जब विभीक्षण से इस प्रकार कहा उन्होंने कहा अब हम अपनी अयोध्या को गमन कर रहे हैं। क्योंकि हमारा वह काल समाप्त हो गया है, हमारा वन पर्व समाप्त हो गया है। मेरे जो विधाता है मानो देखो, वह प्रतीक्षा कर रहें होंगे, सर्वत्र मानो अयोध्या वासी प्रतीक्षा कर रहे होंगे, क्या आज राम का गमन होगा, आज राम अयोध्या में पधारेंगे, तो इसीलिए हम यहाँ से प्रस्थान कर रहे हैं। मेरे प्यारे! देखो, महाराज विभीक्षण इत्यादियों ने उस समय देखो, उन्हें पुष्प विमान दिया और पुष्प विमान में वह स्थिर हो करके मेरे प्यारे! देखो, अयोध्या में पूर्व ही ये सूचक प्राप्त हो गया था कि आज राम का आगमन होगा, और हनुमान जी मानो देखो, दीपक राग दीपक को गान रूपों में गायेंगे जिससे दीपक मानो उनके राग से उनकी वाणी के प्रकाश से मानो देखो, दीपमालिका का प्रकाश होगा, मेरे प्यारे! देखो, वह ब्रह्मे व्रते देवाः हिरण्यं ब्रीहि व्रतो मेरे प्यारे! देखो, उन्होंने वहाँ से उन्होंने गमन किया और भ्रमण करते हुए, और भ्रमण करते हुए पुष्प विमान मे देखो, अयोध्या में आ पंहुचा अयोध्यावासी वहाँ उस प्रतीक्षा में थे, और देखो, दोनो विधाता विभीक्षण अहा! ब्रह्मे व्रतो देखो, विधा गृति और लोकम् ब्रह्मे विभीक्षण ने अपनी आकाशवाणी से यह कहा था राम को, हे प्रभु! आप देखो, राष्ट्रीय पर्व के आधार से भी कार्य करना, तो मुनिवरों! देखो, विभीक्षण ने तो यह कहा कि यह उनका कर्तव्य था। मेरे प्यारे! देखो, पुष्प विमान अयोध्या से दूरी ही अपने पुष्प विमान को पृथ्वी पर अवतरण किया और अवतरण करके मुनिवरों! देखो, उन्होंने कहा हे ब्रहे व्रतो, हे मन्त्रियों! उस समय मुनिवरों! देखो, उन्होंने हनुमान से कहा कि जाओं, तुम अयोध्या में पंहुचो, उन्होंने कहा मैं अयोध्या में नहीं जाऊँगा, सबसे प्रथम मैं अपने गान को गाऊंगा, क्योंकि यह मेरा कर्तव्य है। उसके पश्चात मैं अयोध्या में पधारूंगा, मैं मानो देखो, विभीक्षण के उस आदेश का अवश्य पालन करूंगा, जो उन्होंने कहा है, भरत और शत्रुघ्न दोनों की मनों प्रवृत्तियों को विचार विनिमय करके मैं तुम्हारे समीप

आऊँगा। मेरे प्यारे! देखो, राम कहते हैं कि यह जो विचार है, यह मेरे विचार से मानो यह निरर्थक है, क्योंकि देखो, मेरा जो विधाता दोनों विधाता वह मेरे हृदय हैं, और जो हृदय होता है, उनके हृदयों में मानो देखो, द्वितीय भाव नहीं आता। इसीलिए इन वाक्यों को त्याग देना चाहिए, मुझे उनकी जो सूचना प्राप्त होती रही है। मुझे जो उनके वाक प्राप्त होते रहें है, आज देखो, मैं इस वाक को स्वीकार नहीं करूंगा। परन्तु उन्होंने कहा भगवन! कि हमारा भी कुछ कर्तव्य हो जाता है। मेरे प्यारे! देखो, देखो, उन्होंने एक गान गाया और गान गाने के पश्चात मानो देखो, वेद का गान गाते हुए मुनिवरों! देखो, वह दीपमालिका प्रकाश में परणित हो गई। जब दीपमालिका मुनिवरों! देखो, अयोध्या वासियों के हृदय में गद् गद् हो गएं हृदय कि राम का अवतरण हो गया है। राम मानो देखो, राम का पुष्प विमान हो गया है। इसीलिए देखो, राम के द्वार पर चलना चाहिए। मेरे प्यारे! देखो, नगर में दीपमालिका के प्रकाश हो रहें है, और उनके हृदय में अपने सखा के आने का प्रकाश हो रहा हैं। मेरे प्यारे! हृदय बाह्य और आन्तरिक जगत दोनो में प्रकाश हो रहा है। मुनिवरों! देखो, भ्रमण करते हुए वह राम के समीप आये, दोनो विधाता भरत और शत्रुघ्न मेरे प्यारे! देखो, उनके समीप आए चरणों को स्पर्श किया और चरणों को स्पर्श करके उन्होंने कहा विराजो। तो मेरे प्यारे! उन्हें आसन दिया, वह विराजमान हो गएं उन्होंने कहा प्रभु! मेरी इच्छा यह है कि आप अयोध्या में अब पधारें। उन्होंने कहा हे भरत! हमें तो यह तो यह आशङ्का बन गई थी कि राष्ट्र जो होता है वह परम्परागतों से राष्ट्र एक सम्पदा है, और राष्ट्र के ऊपर मानो देखो, विधाता, विधाता को विनाश के मार्ग पर ले जाता है। मानो देखो, कुछ ऐसे अवाशेष हमें प्राप्त होते हैं। परन्तु देखो, तुम वास्तव में ऐसे ही मुझे प्राप्त हुए जैसे हम बाल्यकाल में एक ही विद्यालय में अध्ययन करते थे, आज भी हम ऐसे ही प्रतीत होते हैं। जैसे हम एक ही राज्यस्थली पर मानो देखो, हम विद्यमान हों मानो देखो, गृह, गृह में यागों का चलन मुनिवरों! देखो, उस समय महाराज भरत ने मुनिवरों!

देखो, एक यज्ञशाला का निर्माण किया था, और यज्ञशाला में मानो देखो, यज्ञवेदी पर राम और सीता के लिए दोनो के लिए स्थली थी, उन्होंने कहा प्रभु! आईए हमारे यहाँ देखो, उद्गान गाने वाले उद्गाता विद्यमान हैं, वह वेदों का गान गा रहे हैं। आप भगवन! देखो, याग में चलिए क्योंकि याग का चयन हो रहा है।

तो मुनिवरों! देखो, राम और लक्ष्मण और मुनिवरों! देखो, सीता इत्यादियों देखो, हनुमान इत्यादियों ने वहाँ से गमन किया सुग्रीव भी उनके सहित थे। मेरे प्यारे! देखो, यज्ञशाला में उनका पदार्पण हुआ और यज्ञशाला में ब्राह्मण गान गा रहे थे, उद्गाता गान गा रहा था, महर्षि वशिष्ठ मुनि महाराज देखो, पुरोहित का कार्य कर रहे थे, और मेरे प्यारे! वैशकेतु विभाण्डक मुनिवरों! देखो, यज्ञशाला में मानो देखो, ब्रह्मा बन करके जटा पाठ, घन पाठ, माला पाठ, विसर्ग उदात्त, अनुदात्त के गान गा रहे थे वेदों का पठन पाठन वह पद्धति उस काल में मेरे प्यारे! बडी विचित्र परम्परा थी, क्योंकि देखो, लंका को विजय करने के पश्चात अयोध्या वासियों में एक महानता का प्रवाह देना बहुत अनिवार्य था, राम मुनिवरों! देखो, यज्ञशाला में विराजें और यज्ञशाला में विराजमान हो करके मुनिवरों! देखो, यज्ञ का प्रारम्भ हुआ देखो, उद्गान गाने लगे और माना देखो, वहाँ नाना प्रकार के यन्त्र भी थी, विराजमान थे और यज्ञशाला मुनिवरों! देखो, नाना प्रकार की समिधाओं के द्वारा मानो देखो, सुगन्धियुक्त मानो देखो, अयोध्या को सुगन्धित करने लगे, तो दीपमालिका का अभिप्राय यह क्या भगवान राम ने यह कहा है। बहुत पुरातन काल में क्या यह पर्व हमारे यहाँ, परम्परागतों से माने जाते हैं। एक दूसरे रक्षार्थी कहलायें जाते हैं।

मानो देखो, एक श्रावणी ब्रह्म पर्व आता है, उसको ब्रह्म पर्व कहते हैं परम्परागतों में जिस समय मानव देखो, मानव का जन्म हुआ था सृष्टि के प्रारम्भ में जब अति देखो, यहाँ मानव आया, तो एक दूसरें में मुनिवरों! देखो, एक दूसरे के मानो देखो, भुजण्डों में देखो, भुजों में अहा! देखो, एक धागा एक सूत्र को मानो सूत्रपात किया, और यह कहा एक दूसरे की रक्षा मानो एक दूसरे की रक्षा में लिए हम सहायक

बनेंगे। जैसे ऋत और सत का जो सूत्र है, यह परमपिता परमात्मा ने बेटा! एक दूसरे लोक में पिरोया हुआ है, मानो देखो, एक दूसरे में पिरोया हुआ है, इसी प्रकार मुनिवरों! देखो, एक दूसरा मानव मानो एक सूत्र में पिरोया हुआ है, जैसे मुनिवरों! देखो, ओ३म् रूपी धागा इस प्रकृति के कण कण मे एक सूत्र रूप से पिरोया हुआ है, इसी प्रकार एक मानव दूसरे मानव से पिरोया हुआ है, इसी प्रकार मुनिवरों! देखो, याग में याग में अग्नि पिरोई हुई है, मानो देखो, काष्ठ अग्नि से पिरोया हुआ है, वह समिधा अग्नि से पिरोई हुई है, और देखो, उस समिधाओं से साकल्य पिरोया हुआ है, और साकल्य सुगन्ध से पिरोया हुआ है, और मुनिवरों! देखो, सुगन्ध देवताओं से पिरोई हैं, और देवता मानो देखो, जड़ और चैतन्य देवता मानो देखो, ज्ञान सरस्वती से पिरोएं हुए हैं, आह्वान से पिरोए हैं। मेरे प्यारे! वाहन तो है, वाहन जो विद्युत से पिरोया हुआ है, और वह जो विद्युत है बेटा! वह उस परमपिता परमात्मा मानो द्यौ से पिरोई है, और द्यौ उस चेतना से मानो देखो, प्रकृति से पिरोया हुआ है, और प्रकृति मुनिवरों! देखो, प्राण से पिरोई हुई है, और प्राण मुनिवरों! देखो, परमपिता परमात्मा से पिरोया हुआ है। एक दूसरा मानव एक दूसरा परमाणु एक दूसरी तरंग से पिरोई हुई मानी जाती है। विचार विनिमय क्या मुनिवरों! आज का हमारा विचार वह क्या कह रहा है।

आज का हमारा विचार यह कहता है कि यह संसार एक दूसरी आभा में पिरोया हुआ है, इसको हमें स्वीकार करना चाहिए प्रत्येक मानव को तपस्वी बनना है, प्रत्येक मानव को यहाँ मानो जहाँ हम प्रत्येक मानव बेटा! एक दूसरे की घृणा प्रवृत्ति से दृष्टिपात करते हैं। तो उसे गायत्री माँ की गोद में जाना चाहिए। उसे मानो ऋत की गोद में जाना चाहिए और अपने मानवीय जीवन में बेटा! देवी सम्पदा को स्थापित करना चाहिए, और देवी सम्पदा जब मानव में आ जाती है, तो मानव बेटा! उदार बन जाता है। पवित्र बन जाता है, उस मानव के जीवन में एक पवित्रता की तरंगे ओत प्रोत हो जाती हैं, यह है बेटा! आज का वाक अब मुझे समय

मिलेगा मैं इससे आगे की वार्ता कल प्रगट करूंगा। मानो देखो, याग भगवान राम और सीता दोनो यज्ञशाला में विद्यमान हैं। मेरे प्यारे! देखो, हनुमान इत्यादि देखो, यज्ञशाला में याग कर रहे हैं याग करने के पश्चात मेरे प्यारे! देखो, उनका राज्य का अभिषेक राज की आभा उतपन्न होने की चर्चाएं मैं कल प्रगट करूंगा आज का वाक समाप्त अब वेदों का पाठ होगा।

5.दीपावली आहार, व्यवहार और विचार ऊँचा होना चाहिए-651031

जीते रहो, देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पुनः की भान्ति, कुछ वेदमन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, आज की हमारी ये पवित्र वेद वाणी, हमारा हृदय, परमात्मा का अनुपम ब्रह्माण्ड है, यह इतनी पवित्रता में परणित है, परन्तु जब, परमात्मा मानव के जितना निकट है, परन्तु दृष्टिगोचर नही आता। वह प्रभु कितना विचित्र है, और मानव की दृष्टि कितनी विचित्र बन चुकी है, जो कि आत्मा और परमात्मा का बहुत घनिष्ट सम्बन्ध है, वही आत्मा हमारे इस शरीर में, परन्तु प्रभु के दर्शनों का अभिलाषी है, दृष्टिगोचर नही आता है वह प्रभु, ये प्रभु ने कितने सुन्दर नेत्र रचे, कितनी सुन्दर वाणी, कितना सुन्दर यह गृह है। परन्तु प्रभु, इनसे कितना दूरी और कितना निकट है, कितनी विचित्रता है, उस प्रभु की महिमा में। बेटा! आत्मा, परमात्मा कितने घनिष्ट हैं। परन्तु इस शरीर में आने के पश्चात, प्रतीत नही होता, वह प्रभु कितना दूरी चला जाता है हमसे, यदि हम गम्भीरता से, विचार विनिमय करते हैं, तो वह प्रभु हमारे बहुत निकट भी है, परन्तु यहाँ हमारे नेत्रों में ऐसी स्थूलता आ जाती है, क्या हम सूक्ष्म वस्तु को दृष्टिपात नही कर सकते, उनके लिए बेटा! सूक्ष्म तन्तुओं को जानने के लिए, हमारे नेत्रों में यह दर्पण है, जिससे परमात्मा को दृष्टिपात किया जाता है, जिसको सूक्ष्म से सूक्ष्म परमाणु को जाना जाता है, इन नेत्रों को बेटा! शनै शनै, हमें जल के द्वारा, जैसे मुनिवरों! पाप शुद्ध होता है, इसी प्रकार ज्ञान रूपी जल के द्वारा, इन नेत्रों की दृष्टि को सूक्ष्म बनाना होता है क्योंकि इसमें प्रकृति के आवेश आने ही है।

ज्ञान का स्वरूप

बेटा! मैं आगे का विषय तो कल ही वर्णन करूंगा, महानन्द जी की एक प्रेरणा मुझे आज प्राप्त होती चली जा रही है, परन्तु विषय, तो बहुत ही सुन्दरता से, आज स्मरण आ रहा था, इसको सूक्ष्म सा और आगे ले जाना चाहता हूँ। मुनिवरों! ये नेत्र हमें शुद्ध बनाने होंगे, घ्राण हमें ऊँची बनानी होगी, परन्तु इनको ऊँचा बनाने

के लिए, हमें एक वस्तु की आवश्यकता है, और वह क्या है? ज्ञान। ज्ञान किसे कहते हैं? परन्तु ज्ञान का अभिप्राय यह नही है, कि हम पोथी की पोथियों को एकत्रित करले, उनका स्वाध्याय करते रहें, तो उनसे ज्ञान प्राप्त हों। मेरा अभिप्राय यह भी नही की, उन्हें न स्वाध्याय किया जाए। परन्तु ज्ञान किसे कहते है? वह बहुत सूक्ष्मसा शब्द है, जिसे कहते हैं ज्ञान। परन्तु ज्ञान कहाँ है? और क्या है? वेदों की पोथी में भी ज्ञान है। परन्तु आरण्य संहिताओं में भी ज्ञान है, परन्तु ज्ञान के ऊपर आचरण करना तो ध्यान है, यहीं तो लेखनी बद्ध की है, ऋषि मुनियों ने। यदि उनको अपने जीवन में धारण किया जाएं, जीवन में धारण करने से ही हमारी सूक्ष्म और तीव्र बुद्धि बनती है। अन्यथा स्वाध्याय करते रहो, दूसरों को घृणा की दृष्टि से पान करते रहो, उसको ज्ञान नही कहते, ज्ञान किसे कहते हैं? बेटा! महर्षि पतञ्जलि और मुनिवरों! महर्षि जमदग्नि का एक शब्द है, एक समय महर्षि जमदग्नि से उनके पुत्र ने एक प्रश्न किया, उन्होंने कहा हे पिता! ज्ञान किसे कहते हैं? तो जमदग्नि ने कहा कि ज्ञान शब्द एक बिन्दु है, और वह हमारे शरीर में भी एक बिन्दु है, जिसे प्रकाश कहते हैं, उस प्रकाश को जानने का नाम ज्ञान कहलाता है। इसका अर्थ क्या हुआ, ज्ञान, ज्ञान भी कहते हैं, परन्तु उसी के आश्रित हो करके जमदग्नि ने यह कहा क्या मैने तो स्वयं इतना ही जाना है, ज्ञान तो बहुत ही सूक्ष्म है। मेरे आदि आचार्यों जनों! हमें संसार में पवित्रता लाने के लिए, उच्चता लाने के लिए, उस ज्ञान को प्राप्त करना है, जिससे हमारे जीवन में हम धारण करते चले जाएं, उसी का नाम ज्ञान कहलाता है।

दीपावली

आओ, अब हम महानन्द जी के वाक्यों पर चले जाएं, आज उनकी प्रेरणा हमें, इन्होंने हमें द्वितीय काल में भी प्रश्न किया, वह इनके मनों की भावना, कल्पना थी, इन्होंने कुछ प्रभु के विषय में, अपनी इच्छाएं प्रगट की, मुनिवरों! दीपावली और भगवान कृष्ण में जो गोवर्धन इत्यादियों का पालन किया, आज मैं बेटा! ऋषि

मुनियों के वाक्यों पर ले जाना चाहता हूँ। इस वाक् को, हमारे यहाँ दीपावली का एक पर्व होता है, इसे महाभारत के काल से पूर्व, इसे दीप कहा जाता था, दीप आवली मानो दीपावली भी कहा जाता था, किन्हीं किन्ही स्थानों में, दीपावली का अभिप्राय क्या था? जो सर्व भूमण्डल में दीपावली का पर्व मनाया जाता है, आज तो प्रतीत नही कहाँ कहाँ मनाया जाता है, पातालपुरी में क्या, नाना राष्ट्रों में दीपावली को, राजा, महाराजा सभी इसका स्वागत किया करते थे। दीपावली का अभिप्राय यह है, जिसमें प्रकाश को लिया जाता है। भगवान राम से पूर्व, इसका कुछ और रूप था, भगवान राम से पूर्व इसका यह रूप था कि हमारे यहाँ दो पर्व माने जाते हैं, एक होली का पर्व होता है, होलिका का पर्व, एक दीपावली पर्व होता है। इसमें लक्ष्मी का अवतरण भी होता है। परन्तु वह कृषि करने वाले जन, अब शरद ऋतु में, पृथ्वी के गर्भ में बीज की स्थापना की जाती है, पृथ्वी के गर्भ में पृथ्वी की स्थापना की, तो वह किसी काल में यह नही विचारता, कि इसका कितना फल प्राप्त किया, वह जब इस पृथ्वी के गर्भ में बीज की स्थापना कर देने के पश्चात, प्रभु से याचना की जाती है बेटा! क्या उसमे पुरोहित जन, आचार्य जन प्रत्येक गृह में आओ, या वाणिक आओ, ऊँची ऊँची वनस्पतियों को एकत्रित करो, और सामग्री बनाओ, परन्तु वेदों के साम वेदाः, जो उपासना काण्ड है, उस उपासना काण्ड की उपासना करो यज्ञ और सामग्री के द्वारा देवताओं की, कहा क्यों? क्योंकि कृषि करने वाले वैश्य जन सब, जो भूमि में बीज स्थापित, स्थापित किया जाता था, स्थापित, उसमें से कुछ भाग को ले लिया जाता है और उस भाग को ले करके उसकी सबकी सामग्री बनाई जाती है। वनस्पतियों को सबको एकत्रित करके, सुन्दर सामग्री बना करके यज्ञ किया जाता है, प्रभु से याचना की जाती है, हे प्रभु! हमने जो पृथ्वी के गर्भ में, जो भी अन्न इत्यादि इसके गर्भ में स्थापित कर दिया है बीज, यह हमारे लिए सुन्दर हो, यह हमारे राष्ट्र के लिए, मानवत्व के लिए लाभदायक हो, मुनिवरों! यह सुन्दर रूपों से उपासना की जाती है। मानव वैश्य

जन सब यज्ञशाला के निकट विराजमान होते हैं, पुरोहित जन, राष्ट्र गृहणी मेरे राष्ट्र में अन्न हो, जिससे मेरे राष्ट्र में अन्न की सूक्ष्मता न रहे। जब राजा, राष्ट्र गृहणी, उनकी पत्नी, उनके प्यारे पुत्र, पौत्र इत्यादि सब एकत्रित हो करके, यज्ञन करते थे राजा के भाव, वह पुरोहित, भ्रमण प्राणी अति आहार अस्तुते राजनाः वह पुरोहित उसके अन्तःकरण में ध्यान करने वाले, ज्ञान का भरण कर देते थे। परन्तु देखो, दीपावली आई, तो उस तक आप कोई भी अशुद्ध कार्य न करो, यज्ञ करते रहो, मुनिवरों! देखो, यह हमारे यहाँ प्राचीन एक संस्कृति का प्रतीक है। आज मैं उस ऋषि प्राचीन मुनियों की परिपाटी को ले करके, जब हम चलते हैं। तो हमारा हृदय गद गद होने लगता है। हमारे हृदय में एक मानवता प्रायः आती है, एक नवीन जीवन आता है, इस ग्रीष्म ऋतु में, क्योंकि यह ग्रीष्म ऋतु हमें अमृत देती है, हमे अमृत देती है, स्वास्थ्य को सुन्दर बनाती है।

पूज्य महानन्द जीः इसको ग्रीष्म ऋतु ही क्यों कहते हैं?

कृषि की पवित्रता

पूज्यपाद गुरुदेवः परन्तु वाक् यह अपने अपने गृहों में उपासना पति सहित, पत्नी सहित, विराजमान हो करके परमात्मा की उपासना करनी है। हे परमात्मन्! हमारे कृषि को पवित्र बना, हमारी कृषि लाभदायक हो, इसमें किसी प्रकार का ऐसा परमाणु या किसी प्रकार का ऐसा स्वांग न छूए, जिससे यह नष्ट हो जाए। मुनिवरों! देखो, यह उपासना की जाती थी, इसके उपरान्त मानो यज्ञशाला में विराजमान हो करके, अनुसन्धान किया जाता था। अनुसन्धान किया जाता है, कि हमें अब इस कृषि को उपज करने के लिए, क्या क्या साधन जुटाने हैं, हमें पृथ्वी में इसके गर्भ में, बीज तो स्थापित कर दिया, अब इस पृथ्वी के लिए कौन सा खान पान होना चाहिए? जिससे इसके गर्भ में जो कृषि उत्पन्न हो वह महान और विशाल हो, ऊँची हो, और अधिक हो।

कृषक की भूमि का खान पान

मुनिवरों! उसके लिए उसी का प्रतीक हमारे यहाँ, परम्परागतों से उसके पश्चात अनुसन्धान किया जाता, अनुसन्धान करके यह विचार विनिमय किया जाता, उसके लिए, ऊँचे से ऊँचा उसका खान पान होना चाहिए पृथ्वी का, वास्तव में पृथ्वी का खान पान क्या होता है? पृथ्वी का खान पान, समय के अनुकूल उसको जल की वृष्टि, समय के अनुकूल, उसको मुनिवरों! देखो, उसको गो का, मुनिवरों! गो अश्विनी मानो देखो, जो गो, खा करके, निगलकर, आहार के लेती है, चाट लेती है, उसको हमारे यहाँ खाद्याम् ग्रणा अस्ति आपांचात किया जाता है। उसको (गोबर को) संग्रह, संचित्त करने के पश्चात मानो उसको पृथ्वी में भू में स्थापित किया जाता है, जिससे मुनिवरों! देखो, पृथ्वी उत्तम अन्न उत्पन्न हो, और अधिक से अधिक हो, राष्ट्र में अन्न की सूक्ष्मता न रहे। मुनिवरों! अब अनुसन्धान करके और एक समारोह मनाया जाता है। सभी विद्वानों का, बुद्धिमान, वैज्ञानिकों का, निर्णय करो, कि पृथ्वी के लिए कौन सा अन्न देखो, अन्न को उपज करने के लिए, हमारे लिए कौन सी पृथ्वी के लिए, खान पान होना चाहिए।

पवित्र सन्तान

जैसा मुनिवरों! मेरी पवित्र माता, जब गर्भस्ति हम जैसे पुत्र, माता के गर्भ में होते हैं, तो माता के लिए हमारे बुद्धिमानो ने सुशील ऊँचा और स्वस्थ बालक को उत्पन्न करने के लिए, बुद्धिमानो ने एक चुनौती दी, और यह चुनौती दी कि माता को गर्भवती होने के, पश्चात क्या आहार, कौन सा आहार, पाना चाहिए देखो, जिससे उससे गर्भ से सुन्दर बालक उत्पन्न हो। मुनिवरों! देखो, उन्होंने कहा आचार्यों का, वेदों और संहिताओं में जो वर्णन होता है, वह बड़ा विशेष और सुन्दर माना जाता है। ऋषि मुनियों ने कहा भई! देखो, उनके लिए, सबसे विशेष गो दुग्ध होना चाहिए। यह गो दुग्ध मुनिवरों! गो का दुग्ध, घृत को दूहने के पश्चात, माता के गर्भ से विशाल बालक का जन्म लेता है, उसका स्वास्थ्य भी सुन्दर होता है, मुनिवरों! और भी जितने बालक होते हैं, उनको पाना ही मुनिवरों! देखो, सुन्दर और सुशील

गृह में जन्म लेता है। इसी प्रकार आवृत्तियों में पृथ्वी की तुलना की है, कि जैसे गो दुग्ध को पान करने से, हमारा श्वांस ऊँचा होता है। तो गो का, अप्रे अस्ता त्यागा हुआ जो मल होता है। जो गोबर होता है उसको पृथ्वी की में स्थापित करने से अन्न उपज अधिक होता है। मुनिवरों! जो हमारे बुद्धिमानो ने दो प्रकार की उपज हमारे यहाँ होती है, एक उपज मेरी पवित्र माता, जिसको हम शकुन्तका कहते हैं। शकुन्तका वास्तव में श्री, लक्ष्मी का नाम भी शकुन्तका कहा जाता है, परन्तु उस मेरी पवित्र माता का नाम भी शकुन्तका है। जो बेटा! शास्त्र, दर्शनों के अनुकूल, अपने गर्भ से प्यारे पुत्र को जन्म देने वाली होती है। उसको भी हमारे आचार्यों ने आदरणीय, जैसे पृथ्वी को माता कहा जाता है, ऐसे ही उस गर्भाणि को माता की दृष्टि से पान किया जाता है। क्योंकि उसकी उपज होती है, बुद्धिमानो की उपज होती है, मुनिवरों! माताओं को उन पुत्रों की उपज नही करनी चाहिए, जिसका पृथ्वी पर आ करके एक भार बन जाए।

जीवन में पुरूषार्थ

वह देखो, मुनिवरों! भगवान कृष्ण ने भी कहा है, क्या, जो अयोग्य मनुष्य होता है, जो अपने जीवन में पुरूषार्थ करना नही चाहता, केवल कर्म की कसौटी पर, अपने जीवन को निर्भर करना जानता है, वह कोई मनुष्य नही होता, उस मनुष्य का भार होता है, इस पृथ्वी पर। अपने जीवन में जो मनुष्य पुरूषार्थी नही होता, आलस्य होता है, प्रमादी होता है, मानो उसके द्वारा त्याग और तपस्या नही होती, उस मनुष्य का इस पृथ्वी पर भार होता है। उन मनुष्यों को संसार में जीवन धारण करने का अधिकार नही होता उन मनुष्यों को। मेरे आचार्यों ने ऐसा ही कहा है, मुनिवरों! इसी प्रकार मेरी पवित्र माता को हमारे प्राचीन काल में जब भगवान राम से पूर्व का काल था, महाराजा सूर्य वंश से ऊँचा जो काल था, परन्तु उसमें ऋषि मुनियों की एक परिपाटी चली आई और वह यह परिपाटी थी, गृह गृह में पुरोहितपने का कार्य करना, परन्तु उन मेरी पवित्र माताओं को ऊँचा ऊँचा उपदेश दे करके,

उनसे ऋषि बालक जन्म लेते। परन्तु जमदग्नि जैसे और भी मुनिवरों! देखो, यहाँ महर्षि ध्रुन्द्री, जैसे नेत्रों का हीन भी कोई पुत्र होता, तो वह भी मुनिवरों! देखो, उसके हृदय में, माता विद्या का भरण कर देती, और माता उस विद्या का भरण करने के पश्चात, वह माता का ऋणी बालक कहलाता था। ऋणी बालक मुनिवरों! वह ऋणी होता है, और जो अयोग्य बालक होता है, जो उत्पन्न होता है, माता के गर्भ से, वह अयोग्य हो, तो जानो, माता का जीवन भी व्यर्थ और उसका पृथ्वी पर भार होता है।

गो दुग्ध

मेरे आदि आचार्यों जनों यह ऊँचा बालक कैसे उत्पन्न होता है? जब मुनिवरों! माता गो दुग्ध का पान करती है, जैसे पृथ्वी में गो के मल को स्थापित करके, उससे शुद्ध और भूमि में उपज उत्पन्न की जाती है अधिक, इसी प्रकार गो दुग्ध के पान करने से अधिक ऊँचा बालक, बुद्धिमान बालक जन्म लेता है। हमारे यहाँ परम्परा से मुनिवरों! देखो, आज से नही, ये परिपाटी ऋषि मुनियों के काल से चली आई। भगवान विष्णु इत्यादियों ने इस परिपाटी को निर्णय किया।

विष्णु उपाधि

हमारे यहाँ सबसे पूर्व भगवान मनु जी के कथानानुसार, सबसे पूर्व यहाँ विष्णु उपाधि मानी जाती है विष्णु उपाधि जो सबसे प्रथम राजा, उसी का नाम विष्णु कहलाता था। मुनिवरों! यह मनु जी से पूर्व एक परिपाटी थी, भगवान मनु जी से पूर्व यह परिपाटी थी क्या, राष्ट्र तो होता नही, सेना नही होती थी, मुनिवरों! वहाँ और भी राष्ट्र के अधिपति नही होते, परन्तु क्या होता था, कि विष्णु राष्ट्र होता था। विष्णु राष्ट्र क्या होता है? विष्णु से कोई भयभीत तो होता नही था, उसमें केवल कर्तव्य की प्रणाली की शिक्षा थी, कर्तव्य प्रणाली की शिक्षा को, मुनिवरों! देखो, सब आचरण करने वाले, उसको हमारे यहाँ विष्णु राष्ट्र अहा! भगवान मनु जी से पूर्व यह था।

लक्ष्मी पूजन

भगवान मनु जी ने आगे चलकर राष्ट्र की प्रणाली को, मैं पूर्व उच्चारण भी कर चुका हूँ। आज तो केवल हमारे यहाँ महाराजा विष्णु ने यह परिपाटी संसार में निर्मित की, क्या लक्ष्मी का पूजन करो, कौन सी लक्ष्मी का पूजन करो? लक्ष्मी कहते हैं, हमारे यहाँ प्रकृति का नाम भी लक्ष्मी कहलाता है, प्रकृति का नाम लक्ष्मी कहलाता है, इस प्रकृति की भी पूजा करो, क्योंकि इस प्रकृति से हमारा यह शरीर बना हुआ है, यह प्रकृति से बना हुआ है, हमारे नेत्रों में, जो भी निर्णित किए हुए यन्त्र है, वह सब प्रकृति के धातुओं से बनते हैं। यह सब प्रकृति से उत्पन्न होते हैं, मानो देखो, अणु और महा अणु भी प्रकृति से उत्पन्न होते हैं, तो उसका पूजन करो, तो हमारे यहाँ दीपावली और दीपावली को हमारे यहाँ देखो, उसका पूजन होता है। इसका परम्परागतों के अनुकूल हमारे यहाँ लक्ष्मी का पूजन किया जाता है, लक्ष्मी के पूजन का अभिप्राय यह कि इसका पूजन करो, आज से हमें निर्णय करना है, दीपावली के दिवस यह जैसे प्रकृति जो कुछ हमें प्रकाश प्रतीत हो रहा है। यह भौतिक प्रकाश यह सब प्रकृति का प्रकाश है। जैसे प्रकृति हमें प्रकाशित तत्वों हमारे मानव शरीर में ओत प्रोत किए हैं, आज हमें उन तत्त्वों को जानना, उसी पर अनुसन्धान करना है। उसी से हमें अपने जीवन को ऊँचा बनाना है, लक्ष्मी का अभिप्राय यह, कि आज हमें वह प्रयत्न करना चाहिए, आज प्रभु की याचना करते हुए, लक्ष्मी का पूजन करो कि हम लक्ष्मी का दुरूपयोग नही करेंगे, लक्ष्मी राष्ट्र नायक होती है, राष्ट्रनायक कौन होती है? लक्ष्मी होती है। जिस राजा के राष्ट्र में लक्ष्मी नही होती, उस राजा का राष्ट्र भी नही होता, मानो राजा के राष्ट्र में लक्ष्मी होनी चाहिए। अब लक्ष्मी का पूजन होना चाहिए, प्रत्येक गृह में, प्रत्येक मेरे माता पिता क्यों इसका अभिप्राय यह कि बिना लक्ष्मी के हमारा कार्य नही चलता। बिना लक्ष्मी के हमारे जीवन का लक्ष्य पूरा नही होता, हम दान नही कर सकते, हम यज्ञ नही कर सकते, मानो संसार का जितना भी कार्य है, हम उच्चारण नही कर

सकते, हम नेत्रों से दृष्टिपात नही कर सकते, मुनिवरों! हम अपने श्रोत्रों से कोई वाक् श्रवण नही कर सकते, यह सब प्रकृति का, लक्ष्मी का एक चमत्कार कहलाता है। इस चमत्कार की हमें पूजा करनी है, परन्तु इसको हमें अच्छी प्रकार पूजन करना है, मुनिवरों! पूजन क्यों किया जाता है? आज हम हमारे द्वारा यह प्रश्न आता है कि पूजन करने का अभिप्राय यह नही, हम आठो भुजों को एकत्रित करें, उसके आगे प्रार्थना, इसका यह अभिप्राय नहीं है हमें नियम बनाना है कि हमें इस लक्ष्मी का दुरूपयोग नही करना है, हमें कही दुरूपयोग नही करना है, हमें दुराचारों में लक्ष्मी को प्रयोग नही करना है। हमें वैदिक प्रचारों में, हमें यज्ञ कर्मों में परमात्मा की प्रार्थना में ब्राह्मणों के सत्कार में बुद्धिमानो के और जहाँ भी हमारे लिए अधिक से अधिक कल्याण होता हो, हमें वहाँ लक्ष्मी को वहाँ लगाना है। वहीं से प्रयोग में लाना है। आज के दिवस मुनिवरों! देखो, इसका एक नियम बनाया जाता है, इसके भाग बनाए जाते हैं लक्ष्मी के, जो भी लक्ष्मी गृह में होती है, उसके भाग बनाए जाते हैं, कितनी लक्ष्मी मुझे परोपकार कार्य में लगानी है, कितनी लक्ष्मी मुझे अपने व्यापार में परिणत करनी है, कितनी लक्ष्मी मुझे राष्ट्र के लिए अर्पित करनी है। इतनी लक्ष्मी मुझे पृथ्वी के लिए अर्पित करनी है। क्योंकि जिससे पृथ्वी में अन्न उत्पन्न हो। तो मुनिवरों! देखो, यह सब कुछ हमारे लिए लाभदायक कहलाता है।

आधुनिक काल लक्ष्मी का दुरूपयोग महानन्द जी

पूज्य महानन्द जीः गुरुदेव! आधुनिक काल में तो लक्ष्मी का कुछ और ही किया जाता है। आधुनिक काल में तो भगवन! आज के दिवस क्या, कल के दिवस क्या भगवन! इस लक्ष्मी का ऐसा दुरूपयोग क्या, भगवन! आधुनिक काल में उसे जुए की दृष्टि से कहा जाता है, और भी शब्द आधुनिक काल में प्रचलित है, मैं तो उनको शिक्षित नही कहा करता हूँ, परन्तु आधुनिक काल में वो शिक्षित कहते है, उनको आधुनिक काल में थलेश कहते हैं, यह तो प्रभु! इसको अच्छी प्रकार नही ज्ञान कराया जाता, परन्तु उसको और ही कुछ उच्चारण किया जाता है, तो लक्ष्मी

का आधुनिक काल में इसका नियम बनाने के पश्चात इसका दुरूपयोग किया जाता है।

दीपावली का पर्व

पूज्यपाद गुरुदेवः अच्छा बेटा! तो मुनिवरों! अभी अभी मेरे प्यारे महानन्द जी! कुछ मूर्खों वाली वाक् प्रगट कर रहे थे, परन्तु इससे मुझे अधिक प्रयोजन नही, केवल अपने विचार प्रगट करूं, मुनिवरों! हमारे यहाँ प्राचीन प्रणाली, जो प्राचीन प्रणाली है, परन्तु वह इस प्रकार चली आई, आज हमें उस प्रणाली को अपनाना है जो प्रणाली हमारे ऋषि मुनियों की नियुक्त की हुई है, वह विशेष कहलाई जाती है, परन्तु आज हम उस प्रणाली को अपनाते चले जाएं, जिससे हमारी दीपावली, हमारे जीवन में, एक पवित्र ज्योति जलती रहे, पवित्र ज्योति जो हमारे जीवन में जलते रहेगी, तो हम दीपावली का पर्व मनाने के अधिकारी कहलाएंगे। जिसका अभिप्राय यह नही, कि यह दीपावली यह किसी एक राष्ट्र में अपनाई जाती हो, यह दीपावली प्रत्येक राजाओं के राष्ट्र में अपनाई जाती। इसके उपलक्ष्य में सभी कुछ हम अपने अपने जीवन में कुछ न कुछ शिक्षा प्राप्त करते हैं, मानो कृषि करने वाले वैश्य जन यज्ञ करते हैं और यज्ञ करते हैं, क्यों? क्योंकि देखो, इस दिवस यह पर्व इसीलिए मनाया जाता है, क्या कृषि, भूमि के गर्भ में हम अन्न की स्थापना कर देते हैं। इसमें बीज की स्थापना कर देते हैं, और देखो, सबसे निवृतहो करके अब प्रभु से याचना करते हैं, प्रभु! जो पृथ्वी में अन्न स्थापित किया है, यह हमारे लिए लाभदायक हो, राष्ट्र के लिए, ऐसी अनुपम कृपा करो, समय समय पर वृष्टि करो, समय समय पर बुद्धिमानो की अनेक याचनाएं बेटा! कोई महत्वों के द्वारा परम पवित्र पुनीत अवसर और पुनीत दिवस का निर्माण किया जाता है। हमारे यहाँ यह केवल एक पुनीत में निर्माण होता रहता है।

गोवर्धन

आज मैं उस दिवस पर आ पंहुचा, जैसा महानन्द जी मुझे कुछ वाक् भी प्रगट

करने हैं, आज वह दिवस है, जब भगवान कृष्ण ने देखो, गोवर्धन की पूजा की, गोबर एक धन कहलाया जाता है, गोबर एक गो का मल कहलाया जाता है, उसको गोवर्धन कहते हैं। धन का अभिप्राय है इससे हम कृषि में अधिक से अधिक प्रतिस्थापित करने से, इससे धन उत्पन्न होता है, मानो आज भगवान कृष्ण ने इस उपलक्ष्य में, आज के दिवस मानो देखो, इन्द्र को भी निमन्त्रण। इन्द्र ने कहा देखो, वहाँ इन्द्र की पूजा होती थी, गोवर्धन पर देखो, वह एक स्थान भी है, मानो जो वृन्दावन के रास्ते भगवान कृष्ण के जहाँ जन्म भूमि परन्तु उसी के द्वार पर मानो देखो, वह एक स्थान गोवर्धन, जहाँ इन्द्र की पूजा होती है। इन्द्र की पूजा होती है।

गऊओं की पूजा

मुनिवरों! इन्द्र की पूजा हुआ करती थी, भगवान कृष्ण से पूर्व, इन्द्र की पूजा जब इन्होंने बेटा! सब मानो देखो, गऊंओं को एकत्रित किया, और गऊंओं की पूजा की गई, गोर्वधन पर वृन्दावन के मानो देखो, सभी उस पर्वत पर आ पंहुचें, और वहां एक सुन्दर गऊओं की पूजा होने लगी। गऊंओं के चरणों को, भगवान कृष्ण का यह कार्य रहता था, कि भगवान कृष्ण प्रत्येक गऊं के दुग्ध को पान करते थे, मानो एक एक रूप में, उनके दुग्ध को पान करते, उन्हें निर्णित किया करते थे, क्योंकि भगवान कृष्ण अपने जीवन में एक बहुत ऊँचे वैज्ञानिक और अपने जीवन में अनुसन्धान करना उनका कार्य था यह। सबसे पूर्व उन्होंने यही अनुसन्धान किया, अपने राष्ट्र में अपने समाज में, प्रजा में हमें सबसे यह पूर्व विचारना है कि हमारे राष्ट्र के लिए, हमारे जीवन के लिए, स्वास्थ्य के लिए, सबसे ऊँची वस्तु क्या है? सबसे ऊँची वस्तु यदि कोई संसार में, गृहस्थी के आश्रम में विचारने के लिए तो अपने स्वास्थ्य के लिए है, जिस गृहस्थ में, जिस राजा के राष्ट्र में स्वास्थ्य ऊँचा होता है, स्वस्थ व्यक्ति होते हैं, वहाँ प्रशंसा होती है। भगवान कृष्ण ने सबसे पूर्व यह कार्य किया, तो गोवर्धन पर एक उन्होंने एक समाज एकत्रित किया, उस समाज में गऊंओं को एकत्रित किया, भगवान कृष्ण का यह आदेश था, कि भई! पूजन

करो, किसका पूजन करो? गोवर्धन का गऊओं की पूजा करो। गऊओं की पूजा करने से आज हमारा स्वास्थ, हमारी मानवता, इससे ऊँची बनेगी, इसीलिए गऊओं का पूजन किया गया। मुनिवरों! देखो, भगवान कृष्ण ने सबसे पूर्व देखो, गऊओं का पूजन किया।

पूज्य महानन्द जीः गुरुदेव! आधुनिक काल में गऊओं का पूजन किया जाता है।

भगवान कृष्ण की गो सेवा

पूज्यपाद गुरुदेवः अरे, भई! तुम सुनों, जो वाक् उच्चारण हुआ उसको सुनों, श्रवण करो। तो मुनिवरों! ब्रह्मामे कस्मासि गो अस्वानि मुनिवरों! गऊओं का पूजन करने से हमें यह सब कुछ प्राप्त हो जाएगा, एक वस्तु प्राप्त नही होती, आज वह वस्तु प्राप्त होती है, उससे मुनिवरों! गऊओं का दुग्ध पीने से, हमारे जीवन में एक बुद्धिमानता आती है, श्वांस ऊँचा होता है और गऊओं के दुग्ध के पान करने पर हमारे शरीर में जो नाना प्रकार के जो रूग्ण हो जाते हैं वह भी नष्ट हो जाते हैं। नष्ट हो जाने के पश्चात अहा! देखो, उससे हमारा स्वास्थ्य ऊँचा बनता चला जाता है और वह कलिष्ट भोजन करने से मानव का स्वास्थ्य अङ्ग भंग हो जाता है, अङ्ग भंग हो जाने के पश्चात मुनिवरों! सबसे पूर्व यह विशेषता है, गऊ के दुग्ध पान करने में क्या मानव के जीवन में सदाचार की भावना आती है। प्रत्येक मानव प्रत्येक देव कन्या के द्वारा दुराचार की भावना न आ करके सदाचार की भावना आती है। क्योंकि गऊ के दुग्ध में, वह परमाणु होते हैं, वह स्नेह होता है, जिस स्नेह से देखो, जो स्नेह गऊओं में होता है। अहा! बेटा! देखो, गऊओं में, कितना भी क्रोध हो, परन्तु उस क्रोध में जब भी उन्हें एकत्रित होने का समय मिलेगा, तभी वह एकत्रित हो जाते हैं। इसी प्रकार उनमें कितना स्नेह होता है, ऐसे ही मानव मात्र में भी, इसी प्रकार का स्नेह हो जाता है। मेरे आदि आचार्यों जनों! मेरे पवित्र भोले ऋषि मण्डल! उस भगवान कृष्ण की चर्चा प्रगट कर रहे हैं। जिन्होंने बेटा! गऊओं की पूजा की। हमारे यहाँ भगवान कृष्ण से पूर्व भी देखो, गऊओं की पूजा होती चली

आई, गऊओं की पूजा आज से नही, परन्तु परम्परा से होती चली आई है। मुनिवरों! देखो, सर्वत्र संसार में गऊओं की पूजा की जाती है, उसके दुग्ध को पान किया जाता है, घृत को पान किया जाता है, उसी में यज्ञ किया जाता है। देवता जन प्रसन्न होते हैं, वह समय समय पर मुनिवरों! देखो, मानव को स्वास्थ्य देते रहते हैं।

गोवर्धन पूजन

पूज्य महानन्द जीः गुरुदेव! हमने ऐसा सुना है, जैसे आपने गोवर्धन का अभी अभी वर्णन किया है जब इन्द्र की पूजा नही होती थी, इन्द्र ने वृष्टि की और भगवान कृष्ण ने गोवर्धन के पर्वत को ऊँचा अपने से ऊँचा उठाया था और वृन्दावन के जितने प्राणी थे सब उसकी छाया में चले गएं।

परमात्मा के नियम के अनुकूल कर्म

पूज्यपाद गुरुदेवः बेटा! यह इसका अभिप्राय नही है, कि इन्द्र ने वृष्टि की, तो पर्वत को उन्होंने ऊँचा कर लिया, इसका अभिप्राय तो यह भी हो सकता है, क्या ऊँचा स्थान था, वृष्टि अधिक हुई और गोवर्धन के ऊपर बसने चले गएं, यह भी हो सकता है। परन्तु यह नही, कि प्रकृति के नियम के विरूद्ध माना जाता है, परन्तु भगवान कृष्ण परमात्मा के उस परमानन्द के बहुत निकट थे, बहुत निकट होने के पश्चात, जो जिसके निकट होता है, वह प्रकृति के विपरीत कोई कार्य नही करता, भगवान ने जो नियम बनाएं हैं, उनके विपरीत कोई कार्य नही करता, विपरीत कौन जाता है। जो बेटा! देखो, परमात्मा से दूरी हो जाता है, और जो परमात्मा के जितना भी निकट होता है। उतना ही वह प्रकृति के नियम को अङ्ग भंग नही करता, परमात्मा के नियम को नष्ट नही करता, वह उसके अनुकूल कार्य करता चला जाता है, स्वतः होता रहता है।

मेरे पवित्र आचार्यों जनों! मेरे प्यारे महानन्द जी! यह नही, परन्तु उनसे यह मान लेना चाहिए कि गोवर्धन से देखो, भगवान कृष्ण ने गऊओं की पूजा कराई। वहाँ

इन्द्र की पूजा भी होती थी, परन्तु इन्द्र की पूजा को उसने शान्त कराया, क्या इन्द्र की पूजा इन्द्र के राष्ट्र में होनी चाहिए? परन्तु इन्द्र ने उन्हें कष्ट देने का प्रयत्न भी किया, मानो देखो, बकासुर इत्यादियों ने उनको कष्ट देना प्रारम्भ किया। भगवान कृष्णा ने अपने प्रकरण से, उनकी एकता से, उनकी मानव मात्र की सहायता से, छाया से, उसकी सेना को नष्ट किया, नष्ट करने के पश्चात, परन्तु यह हुआ। आज हमें देखो, इन्द्र हम किसे कहते है? आज हम देखो, इन्द्र केवल उसको नहीं कहते, जो सब राजाओं का राजा, परन्तु देखो, हम परमात्मा को इन्द्र कहा करते हैं। यहाँ इन्द्र यदि एक राजा को लिया जाए, तो वह वृष्टि क्या कराएगा, परन्तु देखो, वह अणु और परमाणुओं से वृष्टि करा भी सकता है, यह भी हो सकता है कि बहुत से यन्त्र ऐसे होते हैं, जो प्रकृति से निकासे जाते हैं। अनुसन्धान करने के पश्चात कि वह अन्तरिक्ष में उनका प्रहार करने के पश्चात, जल के द्वारा देखो, जलों का उत्थान हो जाता है। उससे वृष्टि भी हो सकती है, परन्तु वह यन्त्र प्रकृति की नाना धातुओं से निकासा जाता है। मेरे आदि ऋषि मुनियों! इसको तुम प्रत्येक जानता होगा, कि भगवान कृष्णा की उस क्रिया को जाना करते थे, इन्द्र भी उस प्रक्रिया को जानते थे, परन्तु इन्द्र ने यह कराया, यह हो सकता है, परन्तु इन्द्र ने ऐसा किया नही था, यह अतिता यह मानव की एक कल्पना है। एक गोवर्धन को ऊँचा ले जाने के लिए, एक मानव की एक कल्पना है। यह एक श्रद्धांजलि और एक श्रद्धा का एक पाठ है। परन्तु यह इससे अधिक श्रद्धा से उसका वास्तविक वाक् का अङ्ग भंग हो जाता है। गोवर्धन की पूजा करने से मुनिवरों! देखो, भगवान कृष्णा ने अपने जीवन का उत्थान किया, अपनी प्रजा को ऊँचा बनाया है। मानो देखो, भगवान कृष्णा के यहाँ एक कार्य और भी होता था, नन्द की जितनी भी शोभा थी, मानो देखो, गऊओं का सब घृत सब राजा कंस के द्वारा चला जाता था राजा कंस के द्वारा जाता था, भगवान कृष्णा जो भी देवी उन्हें प्राप्त होती, जो भी माताएं उन्हें घृत ले जाती प्राप्त होती, उन्हें दृष्टिपात होती, उनसे छीन लेते और कहा करते कि यह कंस पापी है,

तुम घृत को स्वयं पान करो, मानो देखो, भगवान कृष्ण ने यह कितने ऊँचे ऊँचे कार्य किए, उन्होंने कहा कि कंस इतना दुराचारी है, कि वह दूसरों के अधिकार को लेना चाहता है। संसार में उस व्यक्ति को नष्ट कर दो, जो दूसरों के अधिकार को छीनना चाहता है, दूसरे के अधिकार को छीनना यह मानवता नही कहलाई जाती है। इसीलिए हे मेरी पवित्र माताओं! हे मेरे पवित्र भद्र जनों! संसार में उस व्यक्ति को अपने द्वार पर न आने दो, जो दूसरे के अधिकार को छीनने वाला हो, उसे अपने अधिकार के, उसे अपने जीवन का, अपने द्रव्य का, अपनी लक्ष्मी का स्वयं देखो, उसे उसका अधिकार, उसका दायित्व बना रहे। इसीलिए आज मुनिवरों! देखो, भगवान कृष्ण का एक एक शब्दार्थ बडा महत्वपूर्ण है, हमें उन्हीं के आदेशों पर चलना चाहिए। क्योंकि उनका आदेश आर्यत्व में परणित कहलाया जाता है। उन्हें आर्य प्रणाली को, आर्य परम्परा को ऊँचा बनाने में, अपने जीवन को समाप्त किया, अपने जीवन को सर्वत्र देखो, संसार में समृद्ध उनका जीवन व्यतीत होता रहा।

गणेश का पूजन

मुनिवरों! आज यहाँ दीपावली को, केवल गोवर्धन का ही पूजन नही होता है, गणेश का पूजन भी होता है, गणेश का अभिप्राय यह है, जहाँ लक्ष्मी का, जहाँ प्रकृति का, जहाँ, गऊ का पूजन किया जाता है, वहाँ परमपिता परमात्मा का पूजन भी किया जाता है। मुनिवरों! गणेश का पूजन क्यों किया जाता है? गणं ब्रह्मे अस्ति गणा मुनिवरों! देखो, जो गणों का स्वामी हो, गण संसार में प्रजा कहलाती है, उनका स्वामी गणपति कहलाता है। आज मुनिवरों! देखो, हमें गणपति की पूजा करनी है, जिस गणपति के पूजा करने से, हमारे हृदय में स्नेह आता है, हमारे हृदय में मधुरता आती है, हमारे हृदय में कर्तव्य की भावना आती है, हमारे हृदय में राष्ट्रीय भावना आती है। मानो देखो, यह सब भगवान की पूजा करने से प्राप्त होती है। क्योंकि परमपिता परमात्मा ने संसार को एक राष्ट्र रूप को निर्माणि किया

है। इसका वाक् तो मैं कल ही प्रगट कर सकूंगा अच्छी प्रकार से, परन्तु आज का आदेश तो केवल यह उच्चारण करता चला जा रहा है। क्या हमें गणपति की उपासना करनी चाहिए। गणपति का पूजन करना चाहिए, हमारे यहाँ मुनिवरों! देखो, गणपति राजा को भी कहा जाता है। राजा का भी पूजन करना चाहिए, क्योंकि राजा का पूजन क्यों किया जाता है? राजा के पूजन का अभिप्राय यह नही, क्या उसके चरणों को छूआ जाए, राजा के पूजन का अभिप्राय यह है, क्या हम उसके प्रत्येक स्थानों से, बुद्धिमानो से, माताओं से और मेरी पुत्र पुत्रियों से राजा को यह प्रेरणा देनी चाहिए, राजा के हृदय में, क्या हे राजन! मेरी पौत्र माता को तो यह अधिकार देने चाहिए, कि वह हमारा अधिपति है, तू गणेश है, तू राजा है, हमारे शृङ्गार की तू रक्षा कर। पुत्रियों को राष्ट्र के द्वारा, राजा को यह संदेश देना चाहिए। हे देव! हे राजन! तू हमारा राजा है, और हमारे जीवन का उपकार वास्तव में तो परमात्मा के ऊपर है, परन्तु कुछ तुम्हारे द्वारा भी है। इसीलिए हमारे विधाता, हमारे जीवन में जो भी मानवता आए, उसका चुनौती आप लेते रहें। मुनिवरों! देखो, यह सब मानव के लिए ही, क्या संसार के राष्ट्र की रक्षा, राष्ट्र के नियम, राष्ट्र के जो भी कुछ अवृत्ति होते हैं, वह सब आपके भुजों में इन्हे अच्छी प्रकार बनाते रहो, यह सब मुनिवरों! देखो, एक प्रजा का कर्तव्य होता है, तो इसी परमात्मा की उपासना करना, गणेश जी की उपासना करना, महर्षियों ने महानन्द जी ने एक समय ऐसा वर्णन किया कि गणेश जी तो महाराज शिव के पुत्र कहलाते हैं, और जिनके द्वारा एक हाथी का एक बहुत बड़ा मुख उनके अनुसार परणित किया जाता है। मेरे आदि आचार्यों जनों! महानन्द जी ने मुझे एक समय ऐसा प्रगट कराया, परन्तु इसके साथ साथ मैं यह वाक् प्रगट करता चला जाऊं, कि देखो, गणेश जी का ऐसा नही, परन्तु गणेश जी महाराज शिव के पुत्र भी थे। परन्तु यहाँ गणेश जी भगवान को कहा जाता है, जो हाथी इतना विशाल होता है, इतने विशाल शरीर वाला होता है, मानो देखो, वह कितने ही अन्नों को, कितने ही वनस्पतियों को अपने उदर में

ओत प्रोत कर लेता है, उसी से उसका जीवन सञ्चार होता है, इसी प्रकार हमारे यहाँ परमात्मा के द्वारा देखो, यह सर्वत्र भूमण्डल होने के नाते, यह सर्वत्र भूमण्डल उसका है। नाना प्रकार के लोक लोकान्तर हैं, यह सब देखो, परमात्मा के गर्भ में परणित हो रहे हैं, सब प्रकाशित हो रहे हैं, उसी की प्रेरणा, उसी का पाठ, उसी के मुनिवरों! एक एक, कण कण में परमात्मा के गणेश के व्यापक होने के नाते, उन सबका अधिपति होने के नाते अहा! उसका देखो, इतना विशाल मस्तिष्क भी है। उसका इतना विशाल उदर भी है, मानो देखो, वह सबको अपने में परणित कर देता है, मुनिवरों! प्रलय काल में भी सबको निगल जाता है। अपने गर्भ में, अपने उदर में सबको परणित कर लेता है, मुनिवरों! उसका इतना विशाल उदर है, इतना विशाल उसका मुखारबिन्द है, मुनिवरों! देखो, जिससे परमात्मा को हमारे यहाँ गणेश जी कहा जाता है। गणेशा ब्रह्मणे जो गणों का स्वामी हो, गणों का स्वामी हो मानो देखो, नाना प्रकार के लोक लोकान्तरों का स्वामी हो, उसको हमारे यहाँ गणपति की चुनौती दी जाती है। अहा! भगवान शिव के पुत्र का नाम भी गणेश जी है, ऐसा अभिप्राय यह नही कि किसी के पुत्र का नाम गणेश जी हो, तो परमात्मा को गणेश जी नही कह सकेंगे। अहा! मुनिवरों! देखो, जहाँ हम भगवान को गणेश जी कहा जाता है, किसी के पुत्र का नाम भी गणेश उच्चारण कर सकते हैं। क्योंकि वह तो एक गौणिक नामों से परणित किया जाता है।

मेरे आदि आचार्यों जनों! आज मैं यह चर्चा कर रहा था, कि आज दीपावली के पर्व में और गो की पूजा करने के दिवस से हमें भगवान कृष्ण और हमें अपनी परम्परा को विचारना है। जो संसार में देखो, परम्परावादी संस्कृति को नही विचारता, आह, उसका जीवन एक भार रूप में माना जाता है, संसार में आलसी और प्रमादी बन करके अपने जीवन को हमें व्यर्थ नही करना है। परन्तु देखो, आज हमें सभी वाक्यों पर विचार करना होगा, जैसे हम भूमि की रक्षा करते हैं, मुनिवरों! इसी प्रकार मेरी जो पवित्र माता है, जिसके गर्भ से हम जैसे पुत्रों का जन्म होता है,

भगवान कृष्ण, भगवान राम, महाराज शिव मुनिवरों! देखो, अनेकों अनेक महान विभूतियों का जन्म होता है। जैसा मुनिवरों! देखो, यहाँ ऋषि मुनियों का जमदग्नि, जैसे महर्षि पारा, महर्षि लोमश, महर्षि कणाद, आदित्य ऋषि महाराज, महर्षि अंगिरा इत्यादि आचार्य ऋषि जन हुए, यह सब मेरी पवित्र माताओं के गर्भ से जन्म लेते हैं। जिनके बड़े सौभाग्य होते हैं, जिनकी त्याग और तपस्या में एक आहुति है, त्याग और तपस्या से मानव की माता की प्रवृत्तियों से, मानव के अन्तःकरण में उनकी भावनाओं से देखो, उससे पुत्रों का जन्म होता है। मुनिवरों! देखो, इससे हमें सभी वाक्यों पर विचार करना है। हमें जब हम प्रत्येक वाक् पर हम अपने परम्परावादी जो हमारी प्राचीन ऋषि मुनियों की प्रणाली है।

आज भगवान राम, भगवान राम देखो, यह वह भी दिवस है, जब भगवान राम, माता सीता और हनुमान मुनिवरों! देखो, लक्ष्मण इत्यादि देखो, लंका को विजय करके अपनी अयोध्या में आ पंहुचे थे, अपनी अयोध्या में आने के पश्चात मानो देखो, मुनिवरों! देखो, जब राजा रावण को विजय किया, विजय करने के पश्चात, लंका का राष्ट्र उनके विधाता विभीषण को लंका का स्वामी बना करके, पुष्प विमान में विराजमान हो करके, अपनी अयोध्या में लौट आए, परन्तु आज का देखो, वह दिवस, आज नही, परन्तु आज को तो वह दिवस है लंका को विजय करके, जब भगवान राम ने माता सीता ने लक्ष्मण ने हनुमान ने विराजमान हो करके देखो, भरत ने इत्यादि शत्रुघ्न ने माताओं के सहित और गुरुजनों के सहित मानो यज्ञ किया। आज वह दिवस है, परन्तु प्रत्येक प्राणी को यह ज्ञान हो गया कि आज भगवान राम लंका को विजय करके आ रहे हैं, उस समय प्रत्येक गृह में जो दीपावली का पर्व जो कृषक देखो, कृषकों के हृदयों के क्रान्ति स्थापित हो चुकी थी, क्या भगवान राम नही आएंगे, न प्रति क्या होगा, परन्तु जब यह प्रतीत हुआ, वैश्य जनों को भी, राम की विजय हो गई है। लंका से आ गएं हैं, उसी समय अयोध्या में एक प्रकाश, सर्वत्र एक आनन्द के उनके हृदयों में क्या मुनिवरों! देखो,

आनन्द के गीत प्रकाशित हो गएं, बेटा! वह लंका में भी वह पर्व मनाया गया, परम्परा के संस्कृति के अनुकूल मनाया गया, परन्तु रहा देखो, अयोध्या में, भगवान राम, सीता और लक्ष्मण, हनुमान जब वह अयोध्या में आए, तो भरत ने राम के चरणों को छुआ, उन्होंने सीता के चरणों को स्पर्श किया, और उनके स्नेह की उनके प्रेम की कोई सीमा नही थी बेटा! जैसे दीपावली के दिवस मानो अपने गृहों को प्रकाशित करता है, और अपने मनों को प्रकाशित करता है, इसी प्रकार महाराजा भरत और शत्रुघ्न और माताओं का जो हृदय था, वह इतना प्रफुल्लित हो गया, इतना प्रकाशमान हो गया, कि दीपावली और सूर्य का प्रकाश भी उनके आगे अन्धकारमय प्रतीत होता था। मेरे आदि आचार्यों जनों! यह प्रेम का प्रतीक है, यह हमारा आदर का प्रतीक है, भरत ने जब सीता के चरणों को छुआ, उस समय कहा मातेश्वरी! मुझे आपकी बड़ी प्रतीक्षा थी मेरे नेत्र थकित हो गएं, मेरी दृष्टि सूक्ष्म से सूक्ष्म हो गई, आपको दृष्टिपात करते करते, यह बेटा! कितना ऊँचा आदेश था। मेरे उन ऋषि मुनियों का महान विभूतियों का आज मुझे बेटा! ऐसा प्रतीत हो रहा है, जैसे आज अयोध्या में वाक् उच्चारण कर रहे हो बेटा! आज यह आर्यों वाली वाक्यों को हमें पुनः से प्रकाशित करना है। इतना समय हुआ इस प्रतीक से आज हमें इससे कुछ शिक्षा प्राप्त करनी है। जिन शिक्षाओं को ले करके हम आज गऊओं का पालन क्या, दीपावली का पर्व क्या, इनको हम अपने जीवन में धारण करें, और इनको हम अपने जीवन में कुछ न कुछ अच्छाईयों को अपनाते चले जाएं।

मानसिक विचारों का प्रभाव

महर्षि जमदग्नि ने जितनी सूक्ष्मता का परिचय दिया। परन्तु वह एक महान सराहनीय है। जब महर्षि जमदग्नि की पत्नी के विचार देखो, विचारों में एक महान देखो, दूषित क्रान्ति आ गई, दूषित क्रान्ति आ गई, तो अपने पुत्र पर प्रहार कर रहा है, क्यों? क्योंकि उन्होंने कहा कि मैं अपने गृह को, मैं अपने आश्रम को श्मशान भूमि नही बनाना चाहता हूँ, मैं इसको ऋषि की भूमि बनाना चाहता हूँ। मुनिवरों! देखो, यह

उस ऋषि के विचार हैं, ऋषि के विचार बहुत सूक्ष्म हैं इसी प्रकार यदि प्रजाओं के विचार एक दूसरें के नष्ट करने वाले हो जाते हैं, और एक दूसरे को नष्ट करना, अपने उदर की पूर्ति हो, दूसरा नष्ट हो जाएं या कुछ हो, इस प्रकार के विचार बन जाते हैं। तो क्या होता है? यह विचार जमदग्नि के कथनानुसार, यह विचार सब अन्तरिक्ष में रमण करते हैं, और जब अन्तरिक्ष में रमण करते हैं, अहा! सूर्य की किरणें आ करके मिलती हैं, जल के परमाणु जाते हैं, अग्नि के तीक्ष्ण परमाणु जाते हैं, वायु का मिलान होता है, उनका जब आपस में देवताओं का, देवताओं का एक समाज एकत्रित होता है, और देवताओं के द्वारा यह मानसिक विचार जाते हैं, देवता इनको सींचते हैं, सींच करके क्या होता है? क्या देवता इनके लिए, इनके विचारों को द्वितीय रूपों में परणित कर देते हैं बेटा!। पहले प्रकृति के आक्रमण होते हैं, तो किसी राष्ट्र में देखो, राष्ट्रीय संग्राम हो रहा है, तो कहीं मुनिवरों! देखो, अकाल पड़ रहे हैं, कहीं वृष्टि नही होती, वृष्टि होती है, तो अनावृष्टि होती है। यह सब देखो, मानव के मानसिक विचारों का आहार और व्यवहार का फल कहलाता है। यह महर्षि जमदग्नि का कथन है, महर्षि जमदग्नि के विचार बेटा! एक महान विचार कहलाए जाते हैं, हमारे ऋषि मुनियों ने महर्षि जमदग्नि को विचारधारा में सबसे अग्रणीय माना है, अग्रणीय माना है, कारण क्या है? क्या उनके विचार, वह अपनी मानसिकता को ऊँचा बनाने के लिए, अपने सूक्ष्म विचार संसार को देते हैं। उन विचारों का यह परिणाम रहा, क्या उनके वाक् उच्चारण करने का आज हमें पुनः से सौभाग्य प्राप्त हो रहा है।

मेरे आदि आचार्यों जनों मैं केवल यह शब्द उच्चारण कर रहा था, वह यह क्या हमें उन सब वाक्यों के विचार करने का अभिप्राय यह मानवता और हमारा विचार ऊँचा होना चाहिए, विचित्र से विचित्र होना चाहिए, जिससे मुनिवरों! देवताजनों की गोष्ठी में भी उनके समाज में भी हमारे विचार चलें, हमारी भावना जाए, तो वह हमें विष न दें। दैत्यों में परणित नही करना है। जिससे बेटा! हम देवता बनें और

और देवत्ताओं के समाज में पंहुचे, देवता वाले विचार बन करके, हमारे लिए बेटा! हम अमृत देने वाले बनें, विषन तो किसी को दें अरे, किसी को विष देंगे, तो विष हमें अवश्य प्राप्त होगा, अमृत देंगे, तो परमपिता परमात्मा के इस कल्प वृक्ष के नीचे विराजामन हैं। हम किसी को अमृत देंगे, तो अमृत ही सीचेंगे, विष देंगे तो विष ही सीचेंगे, इसीलिए हमें संसार में क्यों न अमृत देना चाहिए। यह है बेटा! आज का हमारा आदेश, आज का आदेश यह समाप्त होने जा रहा है, कल समय मिलेगा तो मैं शेष भी चर्चाएं कल भी प्रगट कर सकूंगा।

पूज्य महानन्द जीः गुरुदेव! आपका विचार कुछ सुन्दर भी लगा और कुछ असुन्दर भी लगा।

पूज्यपाद गुरुदेवः अरे, क्यों?

पूज्य महानन्द जीः भगवन! हमारे यहाँ प्रश्न का वाक् आता है, आप वहाँ उस वाक् को मिला जाते हैं।

पूज्यपाद गुरुदेवः हास्य..अरे, क्यों?

पूज्य महानन्द जीः भगवन! अभी अभी आप से प्रेरणा रूपों में प्रगट किया, कि माँस आहार करना बहुत अनिवार्य है।

पूज्यपाद गुरुदेवः बेटा! तुम किया करो, उसमें क्या है, हमें तो इससे कोई विरोध नही, परन्तु हमें तो महान आत्माओं के विचार तुम्हारे समक्ष प्रगट किए और जैसा तुमने बनना है, वैसे बनते चले जाओ।

पूज्य महानन्द जीः भगवन! यह तो हमारे प्रश्नों का कोई उत्तर नही है, हमारे प्रश्नों का एक यही उत्तर तो अवश्य देते चले जाईएं, अभी आप ने कहा अमृत दोगे, तो अमृत प्राप्त होगा।

पूज्यपाद गुरुदेवः हास्य... नही महानन्द! यह बेटा! विनोद क्या करने लगे, आज के हमारे आदेशो का जो शीर्षक था, वह यही था कि अपने महान विचारों के लिए हमें अपने आहार और व्यवहार पर अवश्य अनुसन्धान करना चाहिए, तुम बेटा! हर

समय विनोद की चर्चा प्रगट करते हो, हम समय विनोद का नही होता, समय मिलेगा तो तुम्हारे प्रश्नों का उत्तर कल दिया जाएगा।

पूज्य महानन्द जीः अच्छा भगवन! जैसी आज्ञा।

पूज्यपाद गुरुदेवः तो मुनिवरों! आज का यह आदेश समाप्त होने जा रहा है आज के आदेशों का अभिप्राय क्या हमारा, कि हमें अपने आहार व्यवहार सूक्ष्म सा विचार का, यह हमें सब उत्पन्न करना है, यदि हमें अपने राष्ट्र को, अपनी मातृ भूमि को ऊँचा बनाना है, तो हमें पुनः मानसिकता को उत्पन्न करना है, जिससे हमारे द्वारा स्नेह एक दूसरें में एक दूसरें के विचार से अवगत होते हों, तो हम कर्तव्य की भावनाओं में संलग्न, राष्ट्रवाद, मानसिकवाद सब हमारे द्वारा परणित हो करके, हम परमपिता परमात्मा की छत्र छाया में पनपते हैं, उसी की छत्र छाया में हम अपने विचार को ऊँचा बनाते चले जाएं, यह आदेश आज हमारा समाप्त हो गया, कल समय मिलेगा, तो मैं शेष चर्चाएं कल प्रगट करूंगा आज का आदेश समाप्त होता गया कल शेष चर्चाएं प्रगट करेंगे अब वेद का पाठ होगा।

पूज्य महानन्द जीः अच्छा भगवन! आज्ञा।

पूज्यपाद गुरुदेवः आनन्द मङ्गलम भवति। वेद पाठ।

6.होलिका पर्व का स्वरूप-860225

जीते रहो! देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भान्ति, कुछ मनोहर वेद मन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेद मन्त्रों का पठन पाठन किया। हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है। जिस पवित्र वेदवाणी में, उस मेरे देव, परमपिता परमात्मा की महिमा का गुणगान गाया जाता है। क्योंकि वे परमपिता परमात्मा यज्ञोमयी स्वरूप है। वे परमपिता परमात्मा, विज्ञानमयी स्वरूप माने गएं हैं, क्योंकि याग उसका आयतन है, उसका गृह है, उसका सदन है। इसी प्रकार विज्ञान, चाहे वह आध्यात्मिक रूप में हो, चाहे वह भौतिक विज्ञान में हो, परन्तु वह उसका आयतन है, उसका वह सदन है और उसका गृह माना गया है। इसलिए वे सर्वज्ञ और उसी में सब समाहित हो रहा है। इसलिए आज हम उस परमपिता परमात्मा की महिमा का गुणगान गाने के लिए, सदैव तत्पर रहते हैं और सृष्टि के प्रारम्भ से ले करके, वर्तमान के काल तक नाना विज्ञानवेत्ता हुए हैं, और नाना आध्यात्मिक विज्ञानवेत्ता भी हुए हैं, और नाना यज्ञोमयी स्वरूपवादी प्राणी भी रहे हैं। परन्तु उस परमपिता परमात्मा के ज्ञान और विज्ञान के ऊपर, सृष्टि के प्रारम्भ से अध्ययन हो रहा है। सृष्टि के प्रारम्भ से ले करके कुछ क्रियात्मकवेत्ता हुए हैं, क्रियाओं में लाने का प्रयास भी उन्होंने किया है। परन्तु देखो, उसका इतना गहन, इतना अगाध, इतना एक महान, समुद्र के तुल्य, यह भव्य जगत माना गया है कि मानव अन्वेषण करता करता भी विचार विनिमय करता हुआ भी, मेरे प्यारे! देखो, उसकी आभा में, जब प्रवेश हो जाता है और अनुसन्धान करता, करता बहुत दूरी चला जाता है तो अन्त में वह मौन हो जाता है। क्योंकि वह इस प्रकृतिवाद का विषय नहीं रहता और जहाँ इन्द्रियों का, क्योंकि इन्द्रियाँ प्रकृतियों में हैं और इन्द्रिय और प्रकृति, इन्द्रियों में है इसलिए जितना भौतिक विज्ञान है वह भी मानो देखो, इन्द्रियों में समाहित रहता है। इसलिए हमारे आचार्यों ने, हम भी बेटा! ऋषि

मुनियों की चर्चा करते रहते हैं। वेद के वाङ्मय में एक मन्त्र लिया, उसके ऊपर विचार विनिमय प्रारम्भ किया। परन्तु देखो, वह इतना गम्भीर रहस्यतम बना रहता है सदैव, क्या मानव, अन्त में मौन हो जाता है, वाणी, रसना में रस, वाणी में वाणी उद्गीत गाने में असमर्थ हो जाती है।

आध्यात्मिक याग

तो बेटा! मैं एक गम्भीर क्षेत्रों में तो तुम्हें ले जाना नहीं चाह रहा हूँ। परन्तु रहा, कि यह कितना विचित्र वाक है, एक मानव अपनी स्थली पर विद्यमान है मानो देखो, वह नेत्रों से रूप को ले रहा है। मेरे प्यारे! देखो, श्रोत्रों से शब्द को ले रहा है और घ्राण से मुनिवरों! देखो, मन्द सुगन्ध को ले रहा है और रसना से नाना प्रकार के षट् रसों को ले रहा है और त्वचा से भिन्न भिन्न प्रकार की स्पर्श सत्ता को ले रहा है। मेरे प्यारे! देखो, इनका समन्वय कहाँ हैं? नेत्रों का समन्वय अग्नि से रहता है। और मुनिवरों! देखो, श्रोत्रों का समन्वय, अन्तरिक्ष से रहता है। नेत्रों का समन्वय अग्नि से और श्रोत्रों का समन्वय अन्तरिक्ष से और मुनिवरों! देखो, दिशाओं से, एक एक आभा में दो दो प्रकार की प्रतिभाएं दृष्टिपात आती हैं। परन्तु देखो, जब घ्राण में जाते हैं, तो घ्राण का समन्वय पृथ्वी से हैं। पृथ्वी की मन्द सुगन्ध को विचारता रहता है परन्तु देखो, ये जो स्पर्श क्रिया है इसका समन्वय वायु से है और मुनिवरों! देखो, यह जो वृत्तियाँ वाणी है, रसना है इसका समन्वय भी बेटा! देखो, पृथ्वी के रसों से रहता है। परन्तु देखो, वह रसाः स्वादनानि ब्रह्मां वह बेटा! देखो, रस जलों से समन्वय रहता है। उसका समन्वय जल से रहता है, आपो से रहता है। परन्तु एक बड़ा विचित्र वाक है बेटा! जो आध्यात्मिक विज्ञानवेत्ताओं ने कहा है क्या इन पांचों स्वरूपों को ले करके रूप, रस, गन्ध, शब्द, और स्पर्श। मेरे पुत्रो! देखो, पांचों की जो प्रतिक्रियाएं हैं वह बाह्य जगत में है और बाह्य जगत से मानव के हृदय में समाहित हो जाती है। मेरे प्यारे! देखो, आध्यात्मिक विज्ञानवेत्ता जब इसके ऊपर विचार करते हैं, तो मानो देखो, रूप का

वह साकल्य बनाता है, रसों का साकल्य बना रहा है और इन सब का साकल्य बना करके वह जो अन्तर्हृदय में मुनिवरों! देखो, चहुंमुखी जो हृदय है, उस हृदय में जो ज्ञानरूपी अग्नि है, जो स्वाभाविक अग्नि जागरूक हो रही है उसमें बेटा! वह सिमट जाता है और सिमट करके वह आध्यात्मिक याग करता है।

याग के दो प्रकार

मेरे प्यारे! देखो, इसका प्रत्येक मानव अपने में बहुत गम्भीरता से अध्ययन जब करता है, एकान्त स्थलियों पर विद्यमान है बेटा! वह परमात्मा की सृष्टि को निहार रहा है, इस पञ्चीकरण को निहार रहा है और निहारते निहारते वह कितनी दूरी मानो अपने हृदय में, रूप को दृष्टिपात करता है, वह हृदय में समाहित है। शब्द को ग्रहण करता है, वह हृदय में समाहित है। गन्ध को लाता है, वह हृदय में समाहित है। मेरे प्यारे! देखो, स्पर्श क्रिया को लाता वह हृदय में समाहित है। नाना प्रकार के रसों का ज्ञान भी हृदय से समन्वय रहता है। इसलिए हृदय हमारा मानो एक अगम्मयी ज्योति है इस हृदय का मिलान जब परमपिता परमात्मा के हृदय से, हृदय अगम्य बन जाता है, समन्वय हो जाता है। उसी समय बेटा! देखो, मानव एक अपनी मोक्ष की पगडण्डी को ग्रहण करने लगता है।

तो बेटा! आज मैं दूरी नहीं जा रहा हूँ, केवल विचार विनिमय यह कि मैंने आध्यात्मिक, एक आख्यिका तुम्हें प्रगट की है परमपिता परमात्मा का यह सब आयतन माना गया है। परन्तु द्वितीय वाक मुझे मेरे प्यारे महानन्द जी! से यह प्रेरणा प्राप्त होती रहती है, आज भी हो रही है कि याग के सम्बन्ध में कुछ उच्चारण किया जाए। परन्तु देखो, यागां ब्रह्मे लोकाम यह मैंने बेटा! एक आख्यिका, आध्यात्मिक विज्ञान के सम्बन्ध में तुम्हें प्रगट की है। आध्यात्मिकवाद यहाँ मानो देखो, आभा में नियुक्त होता है, उड़ान उड़ने वाले, उड़ते रहते हैं। कोई अन्तरिक्ष की उड़ान उड़ रहा है, कोई वायु में गति कर रहा है। ऐसे योगी हुए हैं इन क्रियाओं को जान करके, जो सूर्य की किरणों के साथ बेटा! सूर्य मण्डल में भी पहुंच चुके

हैं।

आज मैं इस सम्बन्ध में भी विशेष तुम्हें विचार देना नहीं चाहता हूँ। ये तो हमारा विचार एक मानो देखो, मानवीय दर्शनों से गुँथा हुआ है, हमारा किसी मानव का, यह विचार नहीं, ये जो वेद की आख्यिकायें आती रहती है इनमें इस प्रकार की विवेचनाओं का वर्णन आता रहता है। परन्तु रहा याग के सम्बन्ध में हमारे यहाँ दो प्रकार के याग परम्परागतों से होते रहे हैं। एक याग, हमारे यहाँ आध्यात्मिक याग है जिसको योगीजन करते हैं। एक याग, भौतिक याग कहलाता है, जिसमें यज्ञमान विद्यमान हो करके, यज्ञमान होताजन मानो देखो, एक याग प्रारम्भ करते हैं, और वह जो याग है, वह अपने में अद्वितीय माना गया है। वह वायुमण्डल को पवित्र बनाता है। जब वायुमण्डल में पवित्रता आ जाती है तो मुनिवरों! देखो, मानव अपने सद्गुणों को अपनाना प्रारम्भ कर देता है। जब तक हमारा वायुमण्डल ही पवित्र नहीं है हमारे अङ्ग संग रहने वाला जो वायुमण्डल है, वातावरण है वह इतना पवित्र होना चाहिए कि वह राष्ट्रीयता हो, चाहे वह मानवीयता हो, चाहे वह देवत्व क्यों न हो। हमारे यहाँ ऋषि मुनि जब मानो देखो, साधना में प्रवेश करते हैं, कोई भी अनुष्ठान करते, उस अनुष्ठान से पूर्व वह मानो अपने अङ्ग संग रहने वाला जो वायु मण्डल है, उसे प्रायः वह पवित्र बनाते रहे हैं। वे महान बनाते रहे हैं। पर क्योंकि देखो, उन्हें योगाभ्यास में या गृह में प्रवेश करना है, गृह में प्रवेश करना भी मानो देखो, एक आख्यिका बड़ी विचित्र मानी गई है।

जब मानो देखो, पति और पत्नी के हृदय में, यह आकांक्षा उत्पन्न होती है कि पुत्रों! भवितां यागां रुद्र भागप्पव्हे वेद का आचार्य कहता है जब इनके हृदयों में यह आकांक्षा उत्पन्न होती है कि हम पुत्र याग करेंगे तो उस समय यागां ब्रह्मे व्रत्तप्रेहा मानो वह याग क्रिया करते हैं, याग करते हैं, अग्नि होत्र में, अग्नि में अपना साकल्य और वायुमण्डल को पवित्र बनाते हैं। उसके पश्चात वह यागाः पुत्र ब्रव्हे व्रताम आचार्यों ने ये कहा इसके पश्चात वह पुत्रेष्टि मानो पुत्र याग करते हैं। पति पत्नी की

ये कामना होती है। माता जब पुत्र याग कर लेती है, जब शिशु गर्भ में प्रवेश हो जाता है तो उसके पश्चात उसका अध्ययन, उसका तप, उसकी मानवीयता का एक मौलिक गुण प्रारम्भ हो जाता है। मानो देखो, उसको अपने गर्भ स्थल में, शिशु को सुयोग्य बना देती है, अपना संस्कार दे देती है, अपने धुए हुए विचारों को उसमें परणित कर देती है। उसी प्रकार का आहार, उसी प्रकार का व्यवहार मानो देखो, अपने में जैसे महर्षि याश्काचार्य ने वर्णन किया। जैसा मानो वेद के मन्त्र भी इस प्रकार के अन्य आते रहते हैं।

याग से वृष्टि

आज मैं याग के सम्बन्ध में केवल यह कि मुनिवरों! देखो, हमारे यहाँ प्रारम्भ के कालों में प्रायः ऐसा आचार्यों ने वर्णन किया है हमारे ऋषि मुनियों ने, मेरे पुत्रों! देखो, जब यागां ब्रह्मे महाराजा अश्वपति के यहाँ प्रायः याग होते रहते थे। हमारे यहाँ भगवान राम का जीवन जब स्मरण आता है तो मानो देखो, उस कालों में भी याग की प्रतिक्रियाएं रही हैं। परन्तु देखो, जिस भी काल में कोई अकाल पड़ा है, चाहे वह पण अकाल हुआ है, चाहे उष्ण अकाल हुआ है। चाहे वह देखो, नरा वृत्तियों में मानो देखो, वह अस्सुतम अकाल हुआ है। किसी प्रकार का अकाल हुआ तो राजाओं ने, प्रजाओं ने मिल करके मुनिवरों! देखो, पुरातन कालों में बेटा! याग की परम्परा को लाए और याग किया, वायुमण्डल का शोधन किया। अपने विचारों को पवित्र बना करके, मानव याग करने से बेटा! देखो, वृष्टि प्रारम्भ हो गई है। अति वृष्टि हो गई है तो वह समाप्त हो गई है। मानो देखो, आज मैं यह दिवस अप्रतं ब्रह्मे लोकाम मानो देखो, जहाँ हमारे यहाँ भी एक परम्परा मानी जाती है। अब मैं विशेष चर्चा न देता हुआ अब मेरे प्यारे महानन्द जी! दो शब्द उच्चारण करेंगे।

पूज्य महानन्द जीः ओ३म यशाः ग्रहं ब्रह्माः लोकं सर्वाः। मेरे पूज्यपाद गुरुदेव! मेरे भद्र ऋषि मण्डल! अभी अभी मेरे पूज्यपाद गुरुदेव गागर में सागर की कल्पना कर

रहे थे। क्योंकि जितने इन्होंने अभी तक वाक उच्चारण किए हैं, एक एक वाक में, गागर में सागर की कल्पना होती रहती है। मानो इन विचारों की व्याख्या मानव करने लगता है तो व्याख्याकार, व्याख्या करता करता बहुत दूरी चला जाता है। परन्तु इन्होंने संक्षेप में अपना एक व्यक्तव्य, अपना एक विचार दिया, आज मैं कोई व्याख्याता नहीं हूँ क्योंकि पूज्यपाद गुरुदेव के समक्ष आ करके मैं अपनी विचार धाराएं मानो उद्गीत रूप में गाने लगूं, तो यह मुझे कोई सुशोभनीय नहीं है। क्योंकि इनके विचार, इतने गम्भीर और मानवीयता से गुंथे हुए हैं। जिन विचारों को हम परम्परागतों से अपनाते रहे हैं और राष्ट्र भी अपनाता रहा है। आज जहाँ हमारी यह आकाशवाणी जा रही है, वहाँ एक भव्य याग सम्पन्न हुआ है। उस याग को पूर्णता के आंगन पर ले गएं हैं। आज मेरा अन्तरात्मा बड़ा प्रसन्न हो रहा है। और मेरा तो हृदय सदैव यज्ञमान के साथ रहता है। मानो मैं यह कहा करता हूँ हे यज्ञमान! तेरे जीवन का सौभाग्य अखण्ड बना रहे। जिस गृह में याग, जैसे महान क्रियाओं में, द्रव्य का सदुपयोग होता है, वह गृह बड़ा सौभाग्यशाली होता है। मानो देखो, जब मैं ये विचार, पूज्यपाद गुरुदेव को, जब मैं यह परिचय देता रहता हूँ तो मेरे पूज्यपाद गुरुदेव मुझे नाना प्रकार की कुछ प्रेरणामयी वाक्यों को प्रकट करते रहते हैं। परन्तु आज मैं इन वाक्यों को इसलिए हे यज्ञमान! मानो तेरे द्रव्य का सदैव सदुपयोग होता रहे। जिस गृह में द्रव्य का सदुपयोग होता है वह गृह स्वर्ग कहलाता है। और जिस गृह में द्रव्य का दुरूपयोग होता है वह गृह नारकिक होता है वह गृह पवित्र नहीं हुआ करता है।

होलिका का अभिप्राय

परन्तु रहा यह कि आज मेरे पूज्यपाद गुरुदेव, मैं आज पूज्यपाद गुरुदेव को एक और नवीन परिचय दे रहा हूँ और वह परिचय क्या है कि आज वह दिवस आ रहा है, जिस दिवस में मानो देखो, कृषक, देखो, राजा और प्रजा मिलन करके और वह यागों का आयोजन किया जाता है। यह वह दिवस है जिसको हमारे यहाँ

होलिका कहते हैं। इस दिवस का नामोकरण होलिका कहलाता है। होलिका का अभिप्राय यह है कि जो प्रकृति कि मानो देखो, पूजा की जाती है। जिस दिवस में देखो, यहाँ याग किए जाते हैं, पञ्चीकरण यागों में मानव सदैव परणित रहता है, कृषक और प्रजा एकत्रित हो करके, आज के दिवस प्रभु से प्रार्थना करते हैं और प्रभु से कहते हैं। इसलिए होलिका का यह दिवस है, यहाँ नवीन अन्न आता है, और मानो देखो, वृदं ब्रह्मे इस नवीन अन्न के, माता पृथ्वी के गर्भ में, वसुन्धरा के गर्भ में, जो अन्न विद्यमान है वह कृषक के मानो गृह में प्रवेश होने वाला है, इसलिए देवताओं से याचना की जाती है और याग और सुगन्धित की जाती है जिससे वायुमण्डल मानो देखो, उससे भरण हो जाए और भरण हो करके, वायुमण्डल पवित्र हो करके, महान अन्न की उत्पत्ति करे, और वह मानो देखो, उससे वृष्टि न हो, अति वृष्टि न हो क्योंकि देखो, अन्नाद में किसी प्रकार की हानि न हो पाए। ऐसा मानो देखो, मैं परम्परागतो से ही दृष्टिपात करता रहा हूँ।

भगवान राम का काल

मेरे पूज्यपाद गुरुदेव और हम मानो देखो, राम के काल में नाना गृहों में नाना नगरों में भ्रमण करके और देखो, याग को दृष्टिपात करते रहते थे। भगवान राम का काल तो एक ऐसा विचित्र काल रहा है, भगवान मनु का काल भी ऐसा ही रहा है, जहाँ प्रत्येक गृह में वेद ध्वनि, याग की सुगन्धि आना और वायुमण्डल मानो उससे भरण होना। आज मैं उसके विपरीत दृष्टिपात कर रहा हूँ भगवन! आज देखो, आज का जो दिवस है यह याग का है, यह प्रीति का है मानो देखो, पति और पत्नी और भोजाई और विधाता सब एक दूसरे के समीप जैसे यह माता वसुन्धरा मानव को खनिज देती है, मानव को खाद्य प्रदान करती है और वह खाद्य मानो देखो, उससे राष्ट्र का निर्माण, मानव का निर्माण, समाज की प्रतीति मानो उसी से प्रतीत होती है और देखो, इस दिवस प्रत्येक मानव शुद्ध आहार करके, पवित्र आहार करके देखो, याग जैसे क्रियाकलापों को करता रहा है। परन्तु देखो,

महाभारत काल के पश्चात जो उसका स्वरूप अशुद्ध हुआ है वह कैसा हुआ है? क्या उसमें देखो, नाना समिधाओं को क्या, नाना कृतियों को ले करके और मानो देखो, अशुद्ध कुड़ कृतियों में, एकत्रित करके उसमें अग्नि प्रदीप्त कर देते हैं। उसमें नाना प्राणी भक्षण हो जाते हैं नाना प्राणियों का भक्षण हो जाता है वह माना याग न रह करके, एक अशुद्ध प्रतिक्रिया बनती चली जा रही है। ये प्रतिक्रियाएं समाप्त होनी चाहिए।

पुरातन काल में होलिका

मानो देखो, मेरी पुत्रियाँ प्रातःकालीन, क्या सांयकाल को मानो देखो, याग के लिए तीन तीन समिधा ले करके, याग में प्रदीति मानो देखो, याग की प्रथा को ऊर्ध्वा बनाने वाली, मेरी पुत्रियाँ मानो देखो, स्वच्छ वस्त्रों को धारण करके मानो उसमें प्रभु के गान गाते हुए, जहाँ याग होता है, वहाँ समिधाओं को ले करके जाते हैं। समिधाओं का स्वरूप महाभारत के काल में समाप्त हुआ। तो मानो देखो, गो का जो गोबर होता है उसकी मानो देखो, उपलियाँ वृत्त बना करके उसको सुकंग करती हुई मानो देखो, उसमें होलिका का एक स्वरूप बना। परन्तु वह भी सूक्ष्म होता चला गया। आज तो यह प्रतीत होता है अरे, ये समाज, ऋषियों का समाज कहाँ चला गया? ये ऋषियों की प्रतीत कहाँ चली गई उनकी अनुभूति कहाँ चली गई है, मानो देखो, ये मुझे ऐसा प्रतीत होता है ये जब वाममार्ग प्रथा बन गई है। ये समाज वाममार्गी बनता चला जा रहा है। मुझे स्मरण आता रहता है हमारे यहाँ महात्मा दुर्वासा हुए हैं। वे दुर्वासा मुनि मानो देखो, दक्षिणा ब्रह्मे अपने यागों में परणित रहते थे। आज उनकी मानो सन्तान का वर्गीकरण है, वह इस प्रकार अशुद्ध बन गया कि वाममार्ग की प्रथा में परणित हो गया है। आज जब मैं इन विचारों को लाता हूँ। हे मेरे पूज्यपाद गुरुदेव! आज वह होलिका है। देखो,। वह मन विचारों में एक मानो देखो, एक ऐसी प्रथा बनाई, कि महाराजा! प्रहलाद से देखो, इस होलिका के पर्व को मानो उससे कटिबद्ध करते हैं। प्रायः देखो, उससे भी कटिबद्ध हो सकता

है। मैं इसका विरोधी नहीं, परन्तु उसमें एक प्रथा लाते हैं कि हिरणाकुश अपनी बहन होलिका से कहते हैं कि हे मेरे पुत्र प्रहलाद को नष्ट करो, क्योंकि यह मेरे राष्ट्र को अपनाना चाहता है, यह मेरे राष्ट्र की परम्परा को अपने में धारण करना चाहता है। तो उस समय जब होलिका उसे ले करके विद्यमान हुई तो होलिका समाप्त हो गई और प्रहलाद का जीवन सुरक्षित हो गया। ऐसी मानो एक युक्तियाँ प्रकट की जाती हैं परन्तु देखो, इसका मैं विरोधी नहीं हूँ क्योंकि प्रहलाद अग्नि में से जब मानो दूरी हो गया, प्राणों की रक्षा हो गई, होलिका समाप्त हो गयी। चलो, यह भी हम स्वीकार करते हैं परन्तु देखो, वह वास्तव में सदैव सत्य प्रतीत नहीं होती है, वास्तव में एक अलंकार सा प्रतीत होता है। जब मैं यह विचारता हूँ। मेरे पूज्यपाद गुरुदेव! तो मुझे वर्णन किया करते हैं कि जिसकी प्रभु रक्षा करते हैं, तो वह अन्य प्रकारों से हो जाती है। परन्तु रहा यह कि वह होलिका समाप्त हो गई, प्रहलाद की रक्षा हो गई। तो विचार यह कि जितनी दुरिता की भावना है वह प्रथा के रूप में नष्ट हो जाए और प्रहलाद जो मनोभावना है, पवित्रता है, उनकी रक्षा होनी चाहिए। मानो देखो, ऐसा मेरा अनुभव रहा है। मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव को निर्णय कराता रहता हूँ। आधुनिक काल में जहाँ पवित्र आहार को पान करते हैं और वहाँ देखो, ब्राह्मण जन क्या? देखो, प्रजा क्या, राजा सब याग करते हैं माता वसुन्धरा की याचना करते हैं, वहाँ आधुनिक काल में, वर्तमान के काल में देखो, सुरापान कर करके देखो, अपने आहारों को अपवित्र बना करके और उनमें एक वाममार्ग प्रथा आ गई है। मेरी पुत्रियों के श्रृंगारों पर भी देखो, आक्रमण किया जाता है यह मैं केवल एक प्रथा है, जिस प्रथा के लिए मानो देखो, मानव को अपनी आभा में निहित रहना चाहिए।

वाममार्गीय प्रथा

मुझे स्मरण आता रहता है आज मानो देखो, मानव जब अपने आहार और व्यवहारों को अपने पर्व के दिवस नष्ट कर देता है तो वह पर्व ही क्या रह गया? वह कोई

पर्व नहीं रह पाता। यह तो ऋषि मुनियों की एक प्रथा है। ऋषि मुनि कहते हैं, कि इस दिवस याग होना चाहिए। यह पूर्णिमा का दिवस है, इसका चन्द्रमा से समन्वय है क्योंकि चन्द्रमा अपनी सम्पन्न कलाओं से युक्त होता है। आज के दिवस मानो देखो, चन्द्रमा अपनी सम्पन्न कलाओं से, षोडश कलाओं को धारण करता है। षोडश कलाओं में मानो देखो, इस संसार का सर्वत्र नृत्त हो रहा है। मेरे पूज्यपाद गुरुदेव! जब मैं इन वाक्यों को लाता हूँ, यह प्रथा कहाँ से प्रारम्भ हुई है, सुरापान करना, सुन्दरी का पान करना यह सब वाममार्ग की प्रथा कही जाती हैं। महाभारत के काल के पश्चात जब वाममार्ग समाज में, यागों में मांस की आहुति देना प्रारम्भ किया, मानो सबसे प्रथम मानव समाज ने देखो, यज्ञ में मांस की आहुति देना प्रारम्भ किया। उसके पश्चात उसको प्रसाद के रूप में पान किया। अरे, मानव! समाज, याग का तिरस्कार होने से जहाँ यह देखो, अहिंसा परमोधर्म का एक सबसे ऊँचा एक प्रतीत माना गया है। मानो देखो, महाभारत काल के पश्चात वाममार्ग ने देखो, इसी वाममार्ग में मोहम्मद के मानने वाले हैं, इसी वाममार्ग में ईसा के मानने वाले हैं, मानो देखो, कहाँ तक, मानव ने जिस उदर में अमृत को पान करना है, अन्नाद जो प्रभु ने दिया, उसे पान करना है वहाँ इस मानव के उदर को देखो, मानव समाज ने देखो, अपने में एक हिंसा का एक क्षेत्र बना लिया है या मैं यह कह सकता हूँ क्या देखो, यह कब्रिस्तान बना लिया है अपने उदर को, अपने शरीरों को, इसमें नाना प्राणियों के मांसों का भक्षण करने वाला प्राणी है। आज मैं मानो देखो, धृष्टता कर रहा हूँ ऐसे वाक्यों का प्रतिपादन कर रहा हूँ, परन्तु क्या करें, यह सत्यता का उच्चारण करना मेरे लिए सुशोभनीय होता है।

धर्म इन्द्रियों में

परन्तु आज का विचार क्या, देखो, यह वाममार्ग प्रथा, यागों में मांस की आहुति, परन्तु देखो, मध्यकालीन आचार्यों का यह मन्तव्य रहा है आचार्यों ने ये कहा आज मैं मानो देखो, जब सत्ता के ऊपर, जब मानव, मानव का भक्षण कर रहा है, प्राणी,

प्राणी का भक्षण कर रहा है। अरे, मानव! तू यह नहीं विचारता कि परमपिता परमात्मा ने ये जो अन्य प्राणियों को जन्म दिया है ये प्राणी एक दूसरे में मेरे पूज्यपाद गुरुदेव कहा करते हैं। ये एक दूसरे के परोपकार में पिरोएं हुए हैं, और यह माला के सदृश्य कहलाए जाते हैं। जब मैं यह विचारता हूँ अरे, मानव! तू दूसरे के गर्भों को पान कर रहा है। मानो तुझे लज्जा आनी चाहिए। जब तू अपने से लज्जित होता है, अपनी अन्तरात्मा से पुकार, अपनी अन्तरात्मा से यह प्रश्न कर और यदि तेरा अन्तरात्मा प्रसन्न है उस आहार को करके, तो तू योगी बन जाएगा और यदि तेरा आत्मा ही प्रसन्न नहीं, उस आहार को करके तो वह आहार तेरी बुद्धि को नष्ट करके तेरा मानो कुबुद्धि में ले जा करके मानो देखो, उस क्षेत्र में ले जाता है जहाँ तुझे प्रकाश का एक अङ्कुर भी प्राप्त नहीं होगा। मानो देखो, ऐसे क्षेत्र में तू चला जाता है। इसमें हिंसा नहीं होनी चाहिए। समय समय पर आचार्यजन आते रहे हैं, और अपने विचारधारा का उत्थान करके, क्रियाकलापों का उत्थान करके चले जाते हैं। जब मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव से याग के सम्बन्ध में कोई प्रश्न करता हूँ तो मानो मेरा अन्तर्हृदय एक ऐसी धारा में रमण कर जाता है, जहाँ मैं उन्हें उत्तर नहीं दे पाता। परन्तु देखो, विचार क्या, मानव को याग करना है, अहिंसा परमोधर्म में परणित होना है, इससे वायुमण्डल पवित्र होता है। आधुनिक काल का जो विज्ञानवेत्ता है वह कुछ ही समय में मानो देखो, याग जैसे क्रियाकलापों को अपनाने वाला है और वह इसलिए अपनाने के लिए, क्योंकि इससे वायुमण्डल पवित्र होता है। इससे वायुमण्डल में एक महानता की धाराओं का जन्म होता है। दूषित वायुमण्डल समाप्त हो जाता है। मेरे पूज्यपाद गुरुदेव अभी अभी अपने विचारों की एक भूमिका बना रहे थे, कि ऋषि मुनि जब साधना में परणित होते हैं, परन्तु देखो, साधना के क्षेत्रों से पूर्व भी याग करते हैं। माता पिता सन्तान से पूर्व अपने विचारों को विशुद्ध बनाने के लिए याग करते हैं, परन्तु देखो, यागां ब्रह्म लोकाम इसलिए याग हमारे यहाँ, नाना प्रकार की आभा में नियुक्त हैं। मैं राजा से ये कहता

हूँ हे प्रजाओं! राजा से कहो, कि क्या संसार में भिन्न भिन्न प्रकार की रूढ़ि नहीं रहनी चाहिए। ये जो धर्म के नामों पर यह नाना प्रकार की रूढ़ियाँ हैं, मैं इसका संकेत देता रहता हूँ जैसे मोहम्मद के मानने वालों की रूढि, ईसा के मानने वालों की रूढि, और भी नाना प्रकार की रूढ़ियाँ कहलाती हैं। उन रूढ़ियों में धर्म के नामों पर रूढ़ि नहीं होनी चाहिए। क्योंकि धर्म एक है, धर्म अनेक नहीं होते। अनन्य धर्म नहीं हुआ करते हैं। धर्म केवल एक होता है नेत्रों से सुदृष्टिपान करो, तो पूजन होता है, कुदृष्टि पान करोगे तो तुम्हारा अन्तरात्मा तुम्हें धिक्कारने लगेगा। मानो इसी का नाम धर्म है। धर्म मानव की प्रत्येक इन्द्रियों में समाहित रहता हैं।

राष्ट्रीयता की मौलिकता

मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने मुझे कई काल में ये वर्णन कराया है उसी वर्णन शैली में, आज पुनः से मैं कुछ विचारों की मानो पुनरूक्तियाँ भी करता रहता हूँ। विचार क्या मानो देखो, कोई भी हो धर्म केवल एक है और ईश्वरीय नियम भी सर्वत्र प्राणियों के लिए एकोकी माने जाते हैं। परन्तु विचार विनिमय क्या, इसका निराकरण राजा को करना चाहिए। बुद्धिमान राजा हो और राजा अपने नाना प्रकार के सम्प्रदायों को एकत्रित करने वाला हो और एकत्रित करके मानो देखो, उनका बारी बारी शास्त्रार्थ हो, जो विचार, जो धर्म, जो मानवीय दर्शन, ज्ञान और विज्ञान पर और मानवीय दर्शन से जो सुगठित हो जाए, वही उसी परम्परा को अपनाना ही यह राष्ट्रीयता की मौलिकता मानी जाती है। और यदि इन वाक्यों को नहीं अपनाता है राजा, और वह, सुरा और सुन्दरी में लगा रहता है या नाना प्राणियों के मांसों को भक्षण करके, अपनी बुद्धि को नष्ट कर रहा है अपनी जीविका को समाप्त कर रहा है मानो देखो, ऐसा राजा, इस संसार को सुखद के मार्ग पर नहीं ले जा सकता। सुखद का मार्ग वह होता है जब राजा स्वयं अपना कृषि उद्गम करता है उसके बदले अन्न को पान करता है और वह राष्ट्र के क्रियाकलापों में लगा रहता है और अपनी सद्भावना प्रजा से ले करके...। हे प्रजाओं! जाओ, तुम यथार्थ, हे ब्राह्मण

समाज! तू मानो देखो, पाण्डित्व को आभा में लाने वाले, तू राजा से कह, कि वैदिकता को अपनाने का प्रयास कर, जो वेद में मौलिक गुण हैं उनको राष्ट्र में अपनाने का प्रयत्न कर, याग जैसे कर्म को, जहाँ चहुंमुखी सुगन्धि सुगन्धि उत्पन्न होती हो, ऐसे क्रियाकलापों को अपना करके और रूढ़िवाद समाप्त हो जाए तो राजा उस काल में देखो, सार्थक बना करता है और यहाँ महाभारत काल के पश्चात बहुत समय हो गएं हैं। पूज्यपाद गुरुदेव को तो इतना प्रतीत नहीं है। मैं इस संसार को दृष्टिपात करता चला आया हूँ, धर्म के नामों पर रक्त बहाया जा रहा है, धर्म के नामों पर राष्ट्रीयता नष्ट हो रही है, मेरी पुत्रियों के श्रृङ्गार को हनन किया जाता है, मानो देखो, धर्म के नामों पर। धर्म एक रूढ़ि बन करके रहती है, यह धर्म नहीं कहा जाता। धर्म के नामों पर तो रक्षा होती है, धर्म के नाम पर रक्षा होनी चाहिए, न कि श्रृङ्गार को हनन किया जाए, देखो, जब भी श्रृङ्गार हनन होता है, रूढ़िवाद में होता है, अज्ञान में होता है, सङ्कीर्णता में होता है, द्रव्य की लोलुपता में हुआ करता है। परन्तु देखो, यह नहीं होना चाहिए। यहाँ कोई भी हो, परन्तु राजा को चाहिए कि अपने विचारों को मानो देखो, प्रजा में एकोकी मानवीयता को अपना करके, अपने राष्ट्र को ऊँचा बनाएं और नाना सम्प्रदायों ये समाप्त होने चाहिए, नाना सम्प्रदाय मानो कोई सम्प्रदाय नहीं होता। क्योंकि धर्म और मानवीयता का एक ही सूत्र कहलाता है। वे एक ही सूत्र के मानो सब मनके कहलाते हैं।

होलिका पर्व क्यों?

विचारधारा यह, आज मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव को यह परिचय दे रहा हूँ। क्या हे भगवन! आज का यह जो दिवस है यह होलिका का, एक पर्व माना गया है। यह पर्व क्यों रचाए गएं हैं? यह मैंने अभी अभी चर्चाएं की हैं देखो, वसुन्धरा के गर्भ से अन्न आने वाला है, उसके लिए प्रभु से और देवता, देव यज्ञ करके उपासना की जाती है। कि आओ, हमारा अन्न शुद्ध रूप से हमारे गृह में प्रवेश हो जाए। इस प्रकार एक की भावना से वायुमण्डल को मानो पवित्र किया जाता है। अनावृष्टि,

अतिवृष्टि न हो जाए। विचार विनिमय क्या, आज मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव को, इन शब्दों की विवेचना देने आया हूँ। परन्तु रहा यह कि संसार में नाना प्रकार की रूढ़ियाँ हैं, नाना प्रकार का गुरुड़म्बवाद इस मानव समाज में मानो परणित हो रहा है क्योंकि धर्म को न जान करके, अज्ञानता के मार्ग पर चला जा रहा है। अज्ञान नहीं होना चाहिए, ज्ञान होना चाहिए, आत्मीय ज्ञान होना चाहिए। ये नाना प्रकार की जो मैं दृष्टिपात कर रहा हूँ आज देखो, जहाँ ऋषि मुनियों का पवित्र मानो देखो, प्रवाह गति करता रहता था, ध्वनियों पर ध्वनियाँ होती रहती थीं, वहाँ केवल कानावती वाली वार्ताएं आ रही हैं भगवन! कानावती किसे कहते हैं? कानावती क्या तू शिष्य और मैं गुरु दोनों मानो देखो, एक नौका में विद्यमान हैं। जाने कहाँ जा करके यह नौका समाप्त होगी। मैं इस वाक को स्वीकार नहीं।

समाज की पवित्रता

मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने मुझे वर्णन कराया है, परम्परागतों से सृष्टि के प्रारम्भ से ले करके मानो देखो, मन और प्राण दोनों का समन्वय होना चाहिए। जब मन और प्राण दोनों समन्वय होता है, वेदध्वनि आती है। उस ध्वनि का परिणाम यह होता है कि समाज पवित्र बन जाता है। पवित्रता की आवश्यकता है और दर्शन और ज्ञान की आवश्यकता है। ज्ञान नहीं है, तो ध्यान नहीं हो सकता। ज्ञान नहीं है तो विवेक नहीं होगा और जब विवेक नहीं होगा तो त्याग नहीं होगा और जब त्याग नहीं होगा, तो यह संसार मानो देखो, निष्क्रिया में दृष्टिपात आता रहेगा।

इसलिए त्याग और विवेक मानो देखो, यह बहुत अनिवार्य हैं। जब प्रभु के नामोकरण में परणित होते हैं, जब हमारे संस्कार ऊर्ध्वा में निर्माणित हो करके प्रभु के द्वार पर पहुंचे, यह आज का वाक मैं विशेष चर्चा देने नहीं आया हूँ, मैं अपने परम्परा के जो क्रियाकलाप है, परम्परा की जो आभाएं हैं उनके वाक्यों में कुछ प्रगट कर रहा हूँ। क्या मानव को मांस देखो, इत्यादि सुरा, सुन्दरी में संलग्न नहीं रहना चाहिए। ज्ञान और विज्ञान में रत्त रहना चाहिए। आध्यात्मिक विज्ञान का चिन्तन

होना चाहिए, और संसार के क्रियाकलापों में भी रत्त रहना चाहिए। परन्तु देखो, द्रव्य का सदुपयोग होना चाहिए। अब मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव से आज्ञा पाऊँगा, इससे पूर्व हे यज्ञमान! तेरे जीवन का सौभाग्य अखण्ड बना रहे, तेरे गृह में सदैव देखो, द्रव्य का सदुपयोग होता रहे, अग्न्याधान, जो ऋषि मुनियों की परम्पराएं मानो देखो, क्रियाकलाप हैं, वैदिक पवित्रता इसको अपनाना तेरा कर्तव्य है और आज वाक अब यह समाप्त होने जा रहा है। आज के विचार उच्चारण करने का अभिप्राय यह क्या देखो, हे यज्ञमान! तेरे जीवन का सौभाग्य अखण्ड बना रहे और क्रियाकलापों में सदैव सरत रहे देखो, द्रव्य का सदुपयोग होना, यही तेरी मानवीयता है। आज का विचार, अब मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव से आज्ञा पाऊँगा।

पूज्यपाद गुरुदेवः मेरे प्यारे ऋषिवर! मेरे प्यारे महानन्द जी! के हृदय में, एक बड़ी विडम्बना रहती है। परन्तु वह विडम्बना है रूढ़िवाद की, वह विडम्बना है राष्ट्रीयवाद की, क्योंकि राजा का हृदय पवित्र होना चाहिए जैसा इससे पूर्व कालों में, हमने महाराजा अश्वपति की चर्चाएं की, भगवान राम का जीवन भी स्मरण आता रहा है। तो इसीलिए मानव को चाहिए, कि अपने आहार, अपने व्यवहार को विशुद्ध बनाए क्योंकि मानवीयता अपनी स्थलियों में सदैव पवित्र बन करके रही है। आज का विचार विनिमय क्या, कि हम परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए और अपनी ज्ञानेन्द्रिय, कर्मेन्द्रियों को पवित्र बनाते हुए, एक सूत्र में प्रवेश करके परमपिता परमात्मा का स्मरण और हृदय रूपी यज्ञशाला में हम आध्यात्मिक यागों में परणित होते रहें, आज का विचार समाप्त, अब वेदों का पठन पाठन होगा। ओ३म देवाः यं रथाः मानं वाचन्नमः हृदश्चमा मनु आ पा ऋषि वाचन्नमः। अच्छा भगवन!।

7. श्राद्ध वास्तविक का स्वरूप-640401

जीते रहो! देखो, मुनिवरों! अभी अभी हमारा पर्ययण समय समाप्त हुआ, हम पूर्व की भान्ति, कुछ वेद मन्त्रों का पाठ कर रहे थे, ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, जिन वेद मन्त्रों का पाठ हमने किया, आज हम पुनः उस गान को गा रहे थे, जिस गान से मार्ग में विचरण करने वाले पक्षीगण और सिंह तक शान्त हो जाते हैं। यह वह अमूल्य वेदगान है, जिस गान को गाता हुआ मनुष्य वास्तव में अमृत बन जाता है, मनुष्य ही नहीं, यह पक्षीगण भी अमृत बन जाते हैं। यह पृथ्वी भी अमृत बन जाती है। इस गान को गाते हुए, हमारे ऋषि मुनि शान्त हो गए हैं, आज हमें इस वेद गान को पुनः से विचारना है, इस वेदवाणी में ओज, तेज, आस्तिकता और सदाचार की तरंगे होती हैं, जब उन तरंगों का भाव रूप से विस्तार होता है, तो एक सीमित वस्तु भी असीमित हो जाती है।

मेरे प्यारे ऋषि मण्डल! आज का वेदपाठ क्या कह रहा था? वेदों का गान गाना चाहिए, जैसा समाज हो, जैसा वातावरण हो उसके अनुकूल वेद मन्त्रों का पाठ करना चाहिए, वेदगान से मानव का जीवन पवित्र और अमृत बन जाता है, आज हमें गान अवश्य गाना चाहिए, जिससे मानव ही नहीं मार्ग में विचरण करने वाले हिंसक प्राणी और यह पृथ्वी मण्डल भी स्वर्ग हो जाए। आज के वेदपाठ में उस परमपिता परमात्मा की याचना करते चले जा रहे थे, हे परमात्मन! आपने इस संसार को रचाया है, इसका कल्याण करो। हम शरण में आए हैं, प्रभु! हमारा कल्याण कर, हम तेरी महानता चाहते हैं, उस महानता को लेकर जब संसार में विचरण करते हैं तो हे परमात्मन! वास्तव में हमारा कल्याण होता है, जब यह आत्मा इस शरीर को त्यागता हुआ, अन्तरिक्ष में रमण करता है और उस समय, आपने जो सृष्टि के आरम्भ में नियम रचा, उस समय के अनुकूल विधाता! यह उस स्थान पर पहुँच जाता है, जहाँ इसका भोग होता है।

श्राद्ध

हे परमात्मन! आज नाना प्रकार की विवेचनाएं हैं जैसा मैंने कल पितर के सम्बन्ध में कहा था, मेरे प्यारे महानन्द जी! ने कुछ ऐसे प्रश्न किए हैं कि हम वानप्रस्थियों की सेवा करने को ही श्राद्ध क्यों मानें, हम इसको श्राद्ध कदापि नहीं मानेंगे, हम अपना जीवन ऊँचा बनाने के लिए, उनसे शिक्षा प्राप्त करने के लिए उनके द्वारा पहुँचते हैं, इसको श्राद्ध कैसे मान लेवें।
मुनिवरों! देखो, मेरे प्यारे महानन्द जी! का यह वाक्य है तो बड़ा सुन्दर परन्तु इनके जितने प्रश्न होते हैं, उनकी कोई महान विशेषता नहीं होती। मुनिवरों! वह क्यों नहीं होती? वह इसलिए कि कल हम श्राद्ध के ऊपर उच्चारण कर रहे थे, तो महानन्द जी उच्चारण कर रहे थे, कि श्राद्ध तो उसका किया जाता है, जो मृत्यु को प्राप्त हो जाता है। मेरे भोले ऋषि मण्डल! सुनो, आज जब यह आत्मा इस शरीर को त्याग देता है तो उस समय इस शरीर का श्राद्ध करते हैं या इस आत्मा का श्राद्ध करते हैं। मेरे प्यारे महानन्द जी! कहा करते हैं कि हम तो पितरों का श्राद्ध करते हैं, मैं तो अपने वैज्ञानिक और दार्शनिक रूपों से इनसे कहा करता हूँ कि अरे, क्या यह आत्मा तुम्हारा पितर है? क्या यह आत्मा तुम्हारा पौत्र है? क्या यह आत्मा तुम्हारी माता है? क्या यह आत्मा तुम्हारा गुरु है?
मुनिवरों! दार्शनिकता में इसका कोई उत्तर प्राप्त नहीं होता, जितना भी दार्शनिक रूपों पर जाते हैं, तो मन शब्द हमारे स्मरण आ जाता है, हम अपने इस सांसरिक सङ्कल्प मात्र से, हम सीमित माता पिता और पौत्रों का सांसरिक भौतिकता मान को उच्चता देते हैं, जहाँ आत्मा परमात्मा का संघर्ष आता है, यह सब कुछ व्यर्थ हो जाता है, इस शरीर को त्यागने के पश्चात इस आत्मा को किसी से कोई सम्बन्ध नहीं होता, इसका सम्बन्ध इसके कर्मों से होता है, न पुत्र से होता है, न पौत्र से होता है, न पत्नी से होता है, न गुरु और राजा जनों से होता है, उस समय इसके द्वारा क्या रहता है?
हमारे ऋषियों ने कहा है कि उस समय इसके द्वारा केवल कर्मों की शृङ्खला रह

जाती है और कुछ नहीं रहता। तो मुनिवरों! जहाँ आत्मा के द्वारा कर्म की विवेचना रह जाती है, तो बेटा! मुझे उत्तर क्यों नहीं मिल रहा, कि इसके पश्चात किसका श्राद्ध कर रहे हो? आज मैं तुमसे जानना चाहता हूँ, कि हम श्राद्ध किसका करें, जब हमारे शरीर का, इस आत्मा से कोई सम्बन्ध नहीं, बेटा! तुम कहो, कि हम शरीर के लिए श्राद्ध करते हैं, तो बेटा! अवश्य करना चाहिए। जब तक शरीर होता है, जैसा मैंने कल के आदेश में कहा था कि हमें वानप्रस्थ आश्रम और सन्यास आश्रम में नाना प्रकार की उच्च से उच्च सुविधाएं देकर, इनकी सेवा करनी चाहिए, जहाँ तक मृत्यु के पश्चात श्राद्ध का प्रश्न आता है, वहाँ यह सब कुछ समाप्त हो जाता है, इसीलिए शरीर के श्राद्ध का प्रश्न ही नहीं उठता।

सङ्कल्प का महत्त्व

मैंने एक समय सङ्कल्प विकल्प की चर्चाएं कीं, तो उच्चारण किया कि यह मन शब्द स्मरण आता है। जब हमारे द्वारा मन की व्याख्या आती है, तो दार्शनिक मण्डल कहता है, कि यह मन कहाँ से उत्पन्न होता है? यह मन हमारे आहार और व्यवहारों से उत्पन्न होता है, हमारे आहार व्यवहार कैसे प्राप्त होते हैं, मुनिवरों! यह हमारे सङ्कल्प से प्राप्त होते हैं, सङ्कल्प विकल्प हमारे द्वारा दो पदार्थ हैं, इनकी पूर्व काल में व्याख्या की थी, सङ्कल्प वह पदार्थ है, जिसको धारण करके बेटा! इस संसार में क्या सूर्य लोकों में, ध्रुव मण्डल में और बृहस्पति लोकों में रमण किया करते हैं, जब मानव की सङ्कल्प शक्ति ऊँची बन जाती है, तो उससे मानव के रोग भी शान्त हो जाता हैं, सङ्कल्प मानव के द्वारा सवोत्तम औषधि है, इस औषधि को हमें अवश्य पान करना चाहिए, इस सङ्कल्प को हमारे यहाँ सोम कहते हैं। जिससे हमें शान्ति प्राप्त होती है, जैसे सोम नाम परमात्मा का है, रस नाम ज्ञान का है। तो जब हम सोमरस का पान करते हैं, तो हम परमात्मा से मिलान करने वाली विद्या का पान करते हैं और सङ्कल्प मात्र से पान करते हैं, हमारा सङ्कल्प वास्तविक होना चाहिए। जब हम सङ्कल्प के द्वारा ऊँचे चलते हैं, तो उस स्थान में पहुँच जाते हैं, जहाँ

परमात्मा अपने प्यारे पुत्रों में ज्ञान और विवेक की स्थापना कर रहा है, जहाँ यह आत्मा अपने प्रभु की गोद में पहुँच जाता है। सङ्कल्प हमें परमात्मा से मिलान कराता है, सङ्कल्प से हम राजा बन जाते हैं।

मुनिवरों! सङ्कल्प के साथ साथ विवेक होना चाहिए और परिश्रम भी होना चाहिए, यदि पुरुषार्थ और सङ्कल्प मन, वचन, कर्म से हृदय में होता है, तो वह ऊँचे शिखर पर पहुँचा देता है, इसका नाम सङ्कल्प है।

विकल्प

मुनिवरों! द्वितीय का नाम विकल्प है, विकल्प हम उसको कहते हैं जिसका न कोई आदि और न कोई अन्त होता है, जैसे हम, हमारी प्यारी माताएं, भद्र मण्डल और ऋषि मण्डल इस संसार में आए हैं जिनको आज हम पितर कहते हैं, जिनको देखो, आज हम अपने माता पिता कहते हैं, नाना प्रकार के सांसारिक सम्बन्ध बना लेते हैं, कि यह मेरी माता है, यह मेरा पिता है, यह मेरी पत्नी है, यह मेरी भौजाई है, यह मेरी कन्या है, यह मेरी पुत्री है, यह नाना परिवार है और यह मेरा राष्ट्र है। मुनिवरों! जब यह शृङ्खलाएं हृदय में आती हैं, तो इनके द्वारा अभिमान भी होता है, इसका नाम है विकल्प।

मुनिवरों! माता के गर्भ स्थल में आने से पूर्व बेटा! यह सम्बन्धी परिवार नहीं था और मृत्यु के पश्चात भी यह परिवार न रहेगा, तो इन वाक्यों का, जिस शृङ्खला का, आदि और अन्त नहीं, उसका नाम विकल्प है। सङ्कल्प और विकल्प के उत्पन्न होने से देखो, गृह में रहने वाली पत्नी आ गई। बेटा! यह सब कुछ क्या है? सङ्कल्प विकल्प क्या है?

सङ्कल्प नाम परमात्मा है और विकल्प नाम प्रकृति का है। परमात्मा और प्रकृति का मिलान हुआ, तो यह संसार रच गया। जो तुम्हें दृष्टिगोचर आ रहा है। ऋषि ने मुझे निर्णय कराया, कि इस संसार में आधुनिक काल का प्रत्येक व्यक्ति कहता है, कि यह मेरी भूमि है, यह मेरा राज्य है, यह मेरा सम्बन्धी परिवार है, परन्तु किसने

रचाई, किसकी भूमि और कौन कौन इसको अपनाने वाले बन रहे हैं।
तो हे मेरे प्यारे ऋषि मण्डल! आज हमें उस ऊँचे शिखर के लिए प्रयत्न करना है, जिस शिखर पर जाकर मृत्यु भी हमें न छू सके। उच्चारण कर रहा था, कि सङ्कल्प और विकल्प दोनों का जब मिलान होता है, तो हमारे हृदय में एक शक्ति, जिसको हम मन कहते हैं, उत्पन्न हो जाता है।
मुनिवरों! एक समय मेरे प्यारे महानन्द जी! ने यह वाक्य कहा कि जब यह वाक्य अन्तरिक्ष में रमण करता है, तो क्या यह शब्द अनादि है? और जो वाक्य उच्चारण कर रहे हैं, क्या यह अन्तरिक्ष को पवित्र बना सकता है?
मुनिवरों! जब इनके यह ऊँचे प्रश्न हमारे समक्ष आते हैं, तो हमें बड़ी मग्नता आती है, हृदय प्रसन्न होने लगता है और यह कहा करता हूँ कि यह मेरा प्यारा ऋषि मण्डल क्या उच्चारण कर रहा है, मेरे प्यारे महानन्द जी! क्या उच्चारण कर रहे हैं, बच्चों वाली वार्ताएं, बच्चों वाली नहीं मूर्खों वाले वाक्य, परन्तु इनके वाक्यों में कोई तत्त्व भी होता है, आज जो भी कुछ ऋषि ने कहा, कि यह वेद पाठ जो हमने उच्चारण किया वह अन्तरिक्ष को कैसे पवित्र बना सकता है।
मुनिवरों! मैं प्रमाण देने को उद्यत हूँ, जहाँ ऋषियों का समाज होता है और हर समय वेदों युक्त और भगवान की चर्चाएं होती हैं, वहाँ एक पापी पुरुष का मन भी लालायित हो जाता है, उस स्थान में पहुँचने के पश्चात मानव का हृदय कहता है कि यह स्थान बड़ा रमणीय है, यहाँ मेरे सब दुर्भाव समाप्त हो गए हैं और मेरा हृदय पवित्र हो गया है। तो बेटा! जहाँ वेदों की चर्चाएं होती हैं, वहाँ का वायुमण्डल भी वेदयुक्त शब्दार्थों से भरा रहता है, जिसमें सुन्दर भाव हैं, पाप के भाव नहीं, इसी प्रकार जहाँ यज्ञ होता है, वहाँ यज्ञ की सुगन्धि और वेद मन्त्रों की ध्वनि वायुमण्डल में मिलकर आगे को रमण करती हुई देवताओं तक पहुँचती है, वह शब्दार्थ भी उसके साथ साथ अन्तरिक्ष में पहुँचते हैं, वह शब्दार्थ देखो, हमें कुछ न कुछ ज्ञान और विज्ञान की दृष्टि से उच्च भाव देते हैं।

मुनिवरों! हम उच्चारण करते करते बहुत दूर चले गए हैं, आज हमारा आदेश चल रहा था, कि सङ्कल्प और विकल्प के सम्बन्ध से यह मन उत्पन्न होता है, जब दोनों हमारे द्वारा विशेष होते हैं उस समय हमारा जीवन पवित्र कहलाता है।

मुनिवरों! हम उच्चारण क्या कर रहे थे, कि जब यह आत्मा इस शरीर से निकल जाता है, तो क्या हम उस मृतक शरीर का श्राद्ध करें या उस आत्मा का श्राद्ध करें, या हम सन्यासी और वानप्रस्थियों का श्राद्ध करें।

पूज्य महानन्द जीः गुरु जी! हमारे विचार में तो यह आता है, कि मृतकों का श्राद्ध करना चाहिए।

पूज्यपाद गुरुदेवः तो बेटा! तुम्हारे विचारों में जो वाक्य आता है वह भी किसी स्थान में सुन्दर माना जाता है। हमारे वेदाचार्यों ने अन्त्येष्टि संस्कार को कहा है, जब अन्त्येष्टि संस्कार हो, तो यज्ञशाला में समिधा और नाना सुगन्धिदायक पदार्थों से वह संस्कार करना चाहिए, बेटा! हो सकता है तुम इसको श्राद्ध कहते हो, देखो, आत्मा की शान्ति के लिए मानव को उसकी सेवा करना सबसे प्रथम कर्तव्य है, आज जिस विद्या को उसने पान किया है, उस विद्या को लेना तुम्हारा कर्तव्य है क्योंकि बेटा! यदि तुम उसकी विद्या को ग्रहण कर लोगे, तो हो सकते है उसी स्थान में, उसी ऊँचे परिवार में जन्म लो, जहाँ पुनः उस विद्या में पुजारी बनो।

मुनिवरों! हमारे ऋषियों की परम्परा कितनी विशाल कहलाई गई है, ऋषि जनों ने जिस विद्या का पान किया, उस विद्या का वानप्रस्थियों द्वारा सब ही ने श्रवण करने का प्रयत्न किया है, सबने उस विद्या का पान किया और निकाला, उन आत्माओं का जन्म अगले जन्मों में उन्हीं संस्कारों वाले व्यक्तियों के द्वारा जन्म होता है जहाँ सूक्ष्म सी विद्या पान करने से वह विद्या पुनः से उनके द्वारा आ जाती है, उस विद्या को श्राद्ध पूर्वक अपने में रमण कर लेना चाहिए, यह सब कुछ हमारे आचार्यों का कथन है।

हे मेरे प्यारे ऋषि मण्डल! आज हम उच्चारण कर रहे थे, कि हमें श्राद्ध करना

चाहिए, बेटा! जब यह आत्मा इसी शरीर को त्याग देता है, उस समय जिसके जैसे कर्म होते है उन्हीं कर्मों की शृङ्खला इसके साथ रहती है, जैसा मैंने इसके पूर्व अभी अभी कहा है, उस समय न इसके द्वारा पुत्र का ही कोई सम्बन्ध रहता है, न पत्नी का, न पुत्री का और न राज्य का रहता है, केवल कर्म साथ रहते हैं, और उन्हीं संस्कारों में उसका जन्म हो जाता है। मेरे प्यारे ऋषि मण्डल! अब मेरे विचार में नहीं आता कि तुम मृतकों का श्राद्ध करते हो यह जीवितों का?

पूज्य महानन्द जीः भगवन! मैं तो मृतकों का श्राद्ध किया करता हूँ।

पूज्यपाद गुरुदेवः अरे, क्यों?

पूज्य महानन्द जीः भगवन! सुनो, आपने एक समय कहा है, कि मैंने इस संसार को द्वापर से पूर्व देखा और उसके पश्चात नहीं देखा, तो भगवन! आपका श्राद्ध करता चला आ रहा हूँ पुनः से, यदि मैं श्राद्ध न करता तो आप मुझे प्राप्त नहीं होते, तो भगवन! मैं तो मृतकों का श्राद्ध किया करता हूँ।

पूज्यपाद गुरुदेवः हास्य.... अरे, यह तो बड़ा मूर्ख है, देखो, इसकी वार्ता, कैसे शब्द बेटा! तुम हमारा श्राद्ध करते चले जाओ, तो अच्छी ही वार्ता है, इससे जीवन का उत्थान ही होता हे, जो गुरुओं के वचनों का श्राद्ध करता है, बेटा! वह उसका सौभाग्य है, बेटा! तुम हमारे वचनों का श्राद्ध करते हो या हमारे शरीर का श्राद्ध करते हो?

पूज्य महानन्द जीः प्रभु! मैं आपके वचनों का श्राद्ध करता हूँ, परन्तु शरीर का भी, किसी किसी काल में कर देता हूँ।

पूज्यपाद गुरुदेवः हास्य मुनिवरों! देखो, यह महानन्द जी कैसी विनोद की वार्ताएं प्रकट कर रहे हैं, मैं तुमसे एक प्रश्न और जानना चाहता हूँ कि तुम मृतकों का श्राद्ध कैसे करते हो? किस रूप से श्राद्ध करते हो?

पूज्य महानन्द जीः भगवन! मैं यह श्राद्ध इसलिए करता चला आया, कि मुझे गुरुदेव की प्राप्ति हो, मुझे उस आत्मा का पुनः से सम्बन्ध प्राप्त हो।

पूज्यपाद गुरुदेवः तो बेटा! वास्तव में ऐसा श्राद्ध तो मनुष्य को करना चाहिए, कि जो आत्मा अपने से बिछुड़ जाता है और जिस आत्मा के कार्यों की ऊँची श्रृङ्खलाएं हैं, वह संसार में पुनः से उत्थान करने के लिए आए, यह श्राद्ध तो बहुत अच्छा है। परन्तु हम यह भी जानना चाहते हैं, कि तुम हमारे कर्मों का श्राद्ध करते चले आए हो या किसी और वस्तु का?

पूज्य महानन्द जीः प्रभु! यह तो आप ही जानते हैं, कि कहीं कर्मों का भी श्राद्ध होता है, कर्मों का श्राद्ध नहीं होता, मृतकों का श्राद्ध होता है।

पूज्यपाद गुरुदेवः अरे, मूर्खानन्द! मृतकों का श्राद्ध नहीं होता, जीवित का श्राद्ध होता है।

पूज्य महानन्द जीः प्रभु! मैं एक वाक्य और जानना चाहता हूँ, कि जब जीवित का श्राद्ध होता है, तो जीवन और मृत्यु क्या पदार्थ है?

पूज्यपाद गुरुदेवः बेटा! वास्तव में देखा जाता है, तो जीवन और मृत्यु कोई पदार्थ नहीं है। जब हम ज्ञान और विज्ञान के ऊँचे शिखर पर पहुँच कर, इन पर अनुसन्धान करते हैं, तो विचार आता है, कि यह जो मृत्यु और जीवन है, यह कोई मूल्यवान वस्तु नहीं है, मैं यह पूर्व कह चुका हूँ कि जीवन मृत्यु कोई पदार्थ नहीं, केवल अज्ञानता का शब्दार्थ है।

पूज्य महानन्द जीः प्रभु! जब वह अज्ञानता का शब्दार्थ है, तो अज्ञानता से ही श्राद्ध होता है।

पूज्यपाद गुरुदेवः बेटा! सुनो, अज्ञानता का इसलिए है, क्योंकि यदि हम आत्मा को जीवन मान लें और शरीर को मृतक मान लें, तो वैज्ञानिक और आध्यात्मिक दृष्टि से ऐसा दृष्टिगोचर नहीं होता, आत्मा को जीवन परमात्मा से मिलता है क्योंकि वह आत्मा का पिता है, पिता और माता होने के नाते ज्ञान रूपी आनन्द इस आत्मा को प्राप्त हो जाता है, उसका ना जीवन है। जीवन नाम है ज्ञान का, जीवन नाम है विवेक का, जीवन नाम है दूसरों से प्रीति करने का और जीवन नाम है परमात्मा

की गोद में जाने का।

मुनिवरों! मृत्यु क्या है? मृत्यु वह है जो दूसरों को कष्ट कर देता है, आज जो यह द्वेष है, इसका नाम मृत्यु है, यह जो काम, क्रोध, मद, लोभ और मोह हैं, इनमें जा फंस जाता है, उसका नाम मृत्यु है। जो अभिमान में चला जाता है, उसका नाम मृत्यु है। बेटा! जिसमें विवेक न हो, वह सदैव मृत्यु के आसन पर विश्राम कर रहा है। मृत्यु और जीवन दोनों यह पदार्थ हैं। जो दूसरों का भक्षण कर जाते हैं, जैसा ऋषि महानन्द जी ने निर्णय कराया, वह मृत्यु शैय्या पर विश्राम कर रहे हैं, और जो दूसरों से प्रीति करते हैं, परमात्मा से ज्ञान पाते हैं और संसार में अविवेकी पुरुषों में उस ज्ञान का प्रचार करते हैं, बेटा! उनका जीवन धन्य है। आज हमें मृत्यु को विचारना चाहिए, मृत्यु हम किसको कहते और जीवन किसको कहते हैं।

मुनिवरों! देखो, संसार में जीवन का श्राद्ध होता है, और मृत्यु का श्राद्ध नहीं होता। श्राद्ध नाम है श्रद्धा का, श्रद्धा की जाती है तो विवेकी पुरुष पर की जाती है, जब विवेकी और वैज्ञानिक मनुष्य पर श्रद्धा होती है तो उससे मनुष्य का उत्थान होता है, जब परमात्मा पर निष्ठा और श्रद्धा होती है तो परमात्मा जीवन देता है।

पूज्य महानन्द जीः तो भगवन! जैसे आपने अभी अभी कहा है, कि परमात्मा पर निष्ठा करने से परमात्मा जीवन देता है, तो यदि हम परमात्मा पर निष्ठा न करें, तो वह हमें जीवन नहीं देगा?

पूज्यपाद गुरुदेवः बेटा! वह जीवन तो प्राणियों को सदैव देता रहता है, उसकी जो रश्मियाँ हैं, वह हर समय देता रहता है, परन्तु उस रश्मि को लेकर कोई शान्त कर दे या उस रश्मि को लेकर कोई प्रकाश में चला जाए, तो बेटा! उसका जीवन है, और जो उस रश्मि को लेकर बेटा! दुराचार करता है, वह मृत्यु की शैय्या पर है। बेटा! इस शरीर को त्यागने का नाम मृत्यु नहीं। हमारा वैदिक साहित्य और ऋषियों का आदेश यह पुकार रहा है, कि शरीर को त्यागना मृत्यु नहीं, यह तो

केवल जैसे मनुष्य धारण किए वस्त्रों का त्याग देता है, ऐसे ही यह आत्मा शरीर रूपी वस्त्र को धारण करता है, अपने कर्मों के संस्कारों से उसे वस्त्र प्राप्त हो जाता है, जब वह शरीर रहित हो जाता, तब वह परमात्मा की गोद में पहुँच जाता है और उसको वास्तविक विज्ञान और विवेक रूपी वस्त्र प्राप्त हो जाता है, उसके पश्चात उसको इस वस्त्र की आवश्यकता नहीं रहती, उसका नाम जीवन है।

मेरे आदि ऋषि मण्डल! मैं क्या उच्चारण कर रहा था, बेटा! प्रश्नों के उत्तर, परमात्मा तो जीवन देता रहता है, परन्तु आज हमें जीवन का श्राद्ध करना चाहिए, बेटा! हमें श्राद्ध करनी है तो जीवन पर करनी है हमे मृत्यु पर श्राद्ध नही करना है आज तुम हमारी मृत्यु का श्राद्ध मना रहे हो, तो बेटा! मनाते चले जाओ, हमें इससे क्या प्रयोजन, तुम भी बेटा! जो श्राद्ध मानते हो, वह जीवन पर श्राद्ध मानते हो, हमारे शरीर को लेने का कोई श्राद्ध नहीं, जिन ऋषियों की वाणी अमर है और जिस पर आज तक हम श्राद्ध करते चले आए हैं बेटा! उसका नाम श्रद्धा है। जैस महर्षि पतञ्जलि, महर्षि कणाद, देवऋषि नारद, महर्षि लोमश आदि हुए उनका नामोच्चारण अब तक हो रहा है, उनकी वाणी पर श्रद्धा, उनके कर्मों पर श्रद्धा, इसका नाम है श्राद्ध।

आज हमें किन पर श्रद्धा करनी चाहिए? जो विवेकी पुरुष हो, जिनके द्वारा अपना जीवन हो, जो जीवन दाता हो, उनका वास्तव में श्राद्ध करना चाहिए। यह आज का हमारा आदेश चल रहा था, आज का हमारा आदेश दार्शनिक रूपों में जा पहुँचा है, उच्चारण कर रहे थे कि हमें परमात्मा की याचना करनी चाहिए और परमात्मा के उस ऊँचे शिखर पर पहुँच जाना है, जिस शिखर पर जा रके वह मनुष्य संसार का स्वामी बन जाता है।

सङ्कल्पवादी

मुनिवरों! देखो, सङ्कल्प और विकल्प की चर्चाएं चल रही थीं, आज संसार में सङ्कल्पवादी बनो। तुम सङ्कल्प धारण करो कि मैं कोई वाक्य मिथ्या उच्चारण नहीं

करूंगा, मैं किसी प्राणी को किसी प्रकार का कष्ट नहीं दूंगा, आज तुम अपने हृदय में सङ्कल्पवादी बनो कि मैं परमात्मा का पूजन करूंगा, अप्रिय पदार्थों को नहीं पान करेंगे, देवता बनने का सङ्कल्प और आत्म वैज्ञानिक बनने का सङ्कल्प धारण करो, आज हम यह उच्चारण नहीं कर रहे हैं कि माता पिता की सेवा नहीं करनी चाहिए, अवश्य करनी चाहिए, उन पर तथा राष्ट्र पर निष्ठा होनी चाहिए, अपना शरीर ब्रह्मचर्य रूपी गहने पर सजा होना चाहिए, जैसे माता का सौन्दर्य स्वर्ण के भूषण से विलक्षण बन जाता है।

कल्पवृक्ष का कथानक

मुनिवरों! देखो, एक वाक्य हमारे स्मरण आ गया है, एक अलंकार है जिसको हम पूर्व भी कह चुके हैं, बेटा! वह अलंकार यह है, सुनो एक समय देव ऋषि नारद महाराज मृत मण्डल में भ्रमण कर रहे थे। भ्रमण करते हुए एक दुःखित मनुष्य को देखा। वह दुःखित इसलिए था, कि उसकी पत्नी महा क्लेषिणी थी, वह नित्यप्रति अपने पति को दण्ड दिया करती थी, सेवा के स्थान पर दण्ड दिया करती थी, वह एक समय अपनी पत्नी के भय से एकान्त स्थान में विराजमान हुआ, प्रभु से याचना कर रहा था, हे प्रभु! इस समय मैं महा दुःखी हूँ। मुझे यहाँ से ले जाओ। इतने में देव ऋषि नारद आ पधारे। नारद मुनि बोले भई! चलो, आज तुम्हें स्वर्ग में ले चलें। वह मनुष्य प्रसन्न होकर बोला, चलिए भगवन!। वह वहाँ से चलकर स्वर्ग के द्वार पर जा पहुँचे।

नारद जी बोले कि अरे, यह स्वर्ग का द्वार है। उस द्वार के आगे एक कल्पवृक्ष था, नारद मुनि बोले कि तुम इस कल्पवृक्ष के नीचे विराजमान हो जाओ और मैं विष्णु के द्वारा जाकर आज्ञा ले आऊं कि तुम्हारे लिए स्वर्ग में स्थान है या नहीं, अब नारद तो विष्णु के आश्रम में जा पहुँचे और वह मनुष्य उस कल्पवृक्ष के नीचे विराजमान हो गया।

मन्द सुगन्ध वायु चल रही थी, उस मनुष्य के हृदय में कल्पना जागी, कि इतनी

शीतल मन्द सुगन्ध वायु मन को प्रसन्न करने वाली चल रही है, परन्तु यहाँ एक सुन्दर आसन होना चाहिए था, बेटा! उसके लिए वह आसन लग गया, जब वह आसन पर विराजमान हो गया, तो कल्पना शक्ति जागी कि वहाँ तो विश्राम करने वाला आसन होना था, बेटा! वह तो कल्पवृक्ष था, वहाँ तो कल्पना की और वह वस्तु आई, विश्राम करने वाला आसन भी लग गया। अब उसके मन में कल्पना आई कि अरे, यहाँ तो नाना अप्सराएं भी होनी चाहिए थीं। अब बेटा! देखो, तो नाना अप्सराएं आ गई और सेवा करने लगीं, उस समय मनुष्य के मन में मृतलोकी पत्नी भी स्मरण हो गई और कहने लगा कि यदि वह मृतलोक वाली पत्नी यहाँ होती, तो तेरे ऊपर डण्डा भी होता। अब बेटा! देखो, तो वह मृतलोक वाली पत्नी आ पहुँची, अब उस मनुष्य के ऊपर डण्डा है, आगे वह जा रहा है और डण्डा लिए पत्नी उसके पीछे है।

इतने में देवर्षि नारद जी आ पधारे और देखा कि यह क्या? नारद मुनि ने दीर्घ वाणी से कहा कि अरे, कल्पना को त्याग। उस समय मनुष्य ने कल्पना को त्यागा, तो बेटा! वहाँ न पत्नी है, न अप्सराएं हैं और न आसन है, केवल कल्पवृक्ष है। नारद मुनि आश्चर्य से बोले, अरे, महापापी! तूने इस कल्पवृक्ष के नीचे आकर भी भोग विलास की कल्पना की, यदि तू यहाँ स्वर्ग की कल्पना करता, तो तुझे स्वर्ग प्राप्त हो जाता, अरे, तू यदि यहाँ ऋषि बनने की कल्पना करता, तो ऋषि पद प्राप्त हो जाता, अरे, विष्णु से मिलान करने की कल्पना करता, तो विष्णु से मिलान हो जाता।

मेरे आदि ऋषि मण्डल! उच्चारण करने का अभिप्राय क्या है? अरे, यहाँ सङ्कल्प करना है, तो वह सङ्कल्प करो, जिससे तुम नास्तिक न बन करके अग्नेय बन जाओ, स्वर्ग के गामी बनो, जब प्रभु ने यह संसार रचा, तो आत्मा ने और देवताओं ने मिलकर कहा कि प्रभु! आपने यह संसार क्या रचा है? उस समय भगवान ने कहा कि मैंने जो यह संसार रचा है, यह एक प्रकार का कल्पवृक्ष है, यहाँ आत्मा जो

भी कल्पना करेगी, वही बनेगी, आज जो भी कल्पना करोगे, वही बनोगे और वही वस्तु प्राप्त हो जाएगी, परन्तु सङ्कल्प यथार्थ होनो चाहिए, सङ्कल्प में विवेक होना चाहिए, जिससे मानव जीवन पवित्र हो जाए।

मुनिवरों! यह है आज का हमारा वैज्ञानिक आदेश, अब यह आदेश समाप्त होने जा रहा है, आज के हमारे आदेशों का अभिप्राय यह है, कि हमें श्राद्ध करना चाहिए। किनका श्राद्ध करना चाहिए? ऋषियों के वाक्यों पर श्रद्धा होनी चहिए, वानप्रस्थियों और सन्यासियों की सेवा करके, उनसे सतोयुग ले लेना चाहिए। हमें सत्य वचन ले लेना चाहिए, जिससे हमारा जीवन पवित्र हो जाए और अपने भाग्य की सराहना देते हुए, इस संसार से पार हो जाएं, अब समय मिलेगा, तो शेष वाक्य कल होंगे, अब हमारा यह आदेश समाप्त हो गया है, कल हमारे वाक्य इससे आगे और भी पवित्र होंगे, अब वेद का पाठ होगा, इसके पश्चात वार्ता समाप्त हो जाएगी।

पूज्य महानन्द जीः धन्य हो भगवन! गुरु जी आज का आपका आदेश बहुत सुन्दर और पवित्र, परन्तु समय बड़ा सूक्ष्म देने लगे।

पूज्यपाद गुरुदेवः नहीं बेटा! अधिक समय हो चुका है।

पूज्य महानन्द जीः हाँ भगवन! आपके लिए बहुत अधिक हो गया है, इसमें से भी कल कुछ सूक्ष्म कर देना।

पूज्यपाद गुरुदेवः हास्य...अरे, मूर्खानन्द! यह वाक्य प्रकट करो। अब विनोद का समय नहीं।

पूज्य महानन्द जीः अच्छा प्रभु!।

पूज्यपाद गुरुदेवः वेद पाठ।

8.देव दानव संघर्ष और मानव की महत्ता-680510

जीते रहो! देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भान्ति, कुछ मनोहर वेद मन्त्रों का गान गाते चले जा रहे थे। ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन मन्त्रों का पठन पाठन किया। हमारे यहाँ परम्परागतों से माना गया है कि आज हम वेद रूपी अनुपम प्रकाश को अपनाते चले जाएं क्योंकि जिस प्रकार को अपनाने से हमारा जीवन क्या, राष्ट्रवाद क्या सर्वस्व पवित्र हो जाता है। इसी को अपनाने से मानव देवता बन जाता है। दैत्य और देवताओं का संघर्ष परम्परा से चला आया है। जहाँ देव रहते हैं वहाँ दैत्य भी होते हैं। मेरे प्यारे महानन्द जी! यह कहा करते हैं, कि आधुनिक काल में जो दैत्यों की प्रवृत्तियां बहुत प्रदीप्त होती चली जा रही है। महानन्द जी को कोई वाक्य उच्चारण करने के लिए समय प्रदान नहीं किया जा रहा है। इनकी सदैव इच्छा रहती है कि मैं अपने विचार प्रकट करूं, परन्तु मुझे इनका हृदय सुन्दर प्रतीत नहीं होता।

तो मेरे प्यारे भद्र पुरुषों! जिस वाक् में मानव के हृदय से उद्गार जब उत्पन्न होते हैं यथार्थ तो होते हैं परन्तु यदि यथार्थ वाक्यों से वायु मण्डल में या हृदय में एक वेदना उत्पन्न होती हो तो वह कोई सुन्दर नहीं होता। इसलिए बेटा! श्रवंगति निश्चय शान्तः तो मेरे प्यारे भद्र पुरुषों! आज मुझे इस सम्बन्ध में उच्चारण क्या करना है। संसार में दैत्यों और देवताओं का संघर्ष परम्परा से चला आता है। देवता कौन हैं और दैत्य कौन हैं? हमारे यहाँ कुछ ऐसा माना गया है कि एक समय दैत्य और देवताओं का संघर्ष हुआ। जिस समय सृष्टि का प्रादुर्भाव हुआ, तो उस समय दैत्य और देवताओं ने इस संसार रूपी समुद्र का मन्थन किया और समुद्र को मन्थन करने के पश्चात उसमें से रत्नों की उत्पत्ति हुई मानो उसमें से अमृत की भी उत्पत्ति हुई। ऐसा कहा जाता है कि कुदचि और उदिची दो माताएं कहलाती हैं।

कुदिची दैत्यों की माता और उदिची देवताओं की माता कहलाती हैं परन्तु जब दैत्यों और देवताओं का संघर्ष हो गया, कहते हैं कि उसी काल में देवताओं ने उस अमृत

के कलश को, अमृत के कुम्भ को अपने में अपना लिया। अपना लेने के पश्चात कहते हैं विष्णु भगवान ने मोहनी का रूप धारण करके वह अमृत का कुम्भ मानो देवताओं को अर्पित करके राहु के दो विभाग बनाए और दैत्यों को शान्त करके और देवताओं को कुम्भ अर्पित करा करके उन्होंने अपने आसन से प्रस्थान किया। आज के वेद पाठ में कुम्भान वृणि अस्ती सुज्यागृणामि ऐसा कुछ मन्त्र आता है उसी आधार पर हमारे यहाँ ऋषि मुनियों ने कल्पना की और कल्पना करते हुए कुछ ऐसा कहा है कि वह दोनों माताएं देखो, दैत्य और देवताओं की कुदीचि और उदिची दोनों ने अपना अद्भुत रूप धारण किया और जब वह कुम्भ गरूड को अर्पित किया गया तो अग्रणी देवता उसे ले करके चले गएं और उस इन्द्र को अर्पित कर दिया। इन्द्र जब उस कुम्भाकार को लेकर चले तो और दैत्यों को जब यह प्रतीत हुआ कि वह तो कुम्भाकार अमृत यहाँ से चला गया तो दैत्यों ने उनके पीछे आक्रमण किया। मानो देवता कुम्भ को अर्पित करते चले गएं वहाँ दैत्य पहुंचे और अमृत कुम्भ को शान्त करना चाहा परन्तु वह शान्त न हो सका और देवताओं के समीप इन्द्र लोक में चला गया और दैत्य कोई आक्रमण न कर सके।

तो मेरे भद्र पुरुषों! आज हमें विचार विनियम यह करना है कि जब समुद्र मन्थन किया जाता है तो वह अमृत क्या है जिसको देवता पान किया करते हैं। बेटा! आचार्यों ने ऐसा वर्णन किया है कि वह जो वेद की परम्परा है, वेद रूपी जो अमृत है उस सबको बेटा! देवताओं ने अपना लिया। वेद से विपरीत चलने वाले दैत्य थे उन्होंने देवताओं पर आक्रमण किया। विचारों को नष्ट करना चाहा परन्तु यह जो ईश्वरीय ज्ञान है बेटा! वह किसी काल में नष्ट नहीं होता।

मेरे प्यारे महानन्द जी! ने मुझे एक समय ऐसा वर्णन कराया कि देवताओं ने उस कुम्भ को चार स्थानों में नियुक्त किया तो कहा जाता है कि यहाँ पृथ्वी पर चारों ही स्थानों पर कुम्भ का पर्व मनाया जाने लगा। मुझे तो इसका विशेष ज्ञान नहीं है परन्तु इसके मुखारविन्दों से एक समय मुझे कुछ ऐसा प्रतीत हुआ। आज भी

मुझे इसका शब्द स्मरण आता चला जा रहा है कि यह जो चारों स्थान इस महान ऋषियों की भूमि पर माने जाते हैं तो जहाँ जहाँ कुम्भ को स्थित किया वहीं वहीं देखो, यह पर्वों का एक महाचक्राणी रूपों में इसे प्रदीप्त किया जाता है। यह क्यों किया जाता है? यह क्या है? इसकी लोकोक्तियां ऐसी महान ऋषियों ने क्यों नियुक्त की? तो ऋषि मुनियों ने कहा है कि ऐसे ऐसे अवसरों पर जो तपस्वी महान पुरुष होते हैं, वह आते हैं और वह जो अपना महान अमृत को पान किया हुआ वेद ज्ञान है उसका प्रसारण करते चले जाते हैं। उन सुन्दर नदियों के जल में स्नान करते हुए प्राणी उन महान पुरुषों की वार्ताओं को स्मरण करके हृदयों में ऊँचे संस्कारों की उपलब्धि हो जाती है और वह इस संसार सागर से आगे चलने के लिए तत्पर होते हैं त्याग और तपस्या की जो महत्वता है वह हृदय में प्रदीप्त होती चली जाती है।

तो मेरे प्यारे! भद्र पुरुषों! हमारे यहाँ कुछ ऐसा कहा जाता है कि उन्हीं देवताओं ने मानो यह चार स्थान नियुक्त किए। देवता कौन होते हैं? देवता वह होते हैं जो अच्छाइयों को धारण करते हुए उन अच्छाइयों को मानने के लिए प्रसारण करके चले जाते हैं। आज वह किन रूपों में हैं मुझे तो यह ज्ञान नहीं है परन्तु द्वापर काल में जब महाराजा वेदव्यास, कणाद, गौतम, कपिल इत्यादियों का यहाँ प्रवाह हो रहा था, उनकी ध्वनियां हो रही थी उस काल में इसको निर्धारित किया गया था। हमारे यहाँ उन ऋषि मुनियों को देवता ही कहा जाता है।

आज जहाँ मैं यह वर्णन करूं कि सृष्टि के प्रारम्भ में दैत्य और देवताओं ने समुद्र का मन्थन किया तो मेरा हृदय गद् गद् होने लगता है क्योंकि दैत्य और देवता कौन हैं जो इस संसार रूपी समुद्र को मन्थन किया करते हैं? बेटा! यौगिक प्रक्रियाओं में चले जाओ। जब योगी साधक बनता है वह संसार रूपी समुद्र को अपने हृदय में मन्थन करता है। हृदय रूपी समुद जब मन्थन करता है तो इसमें दैत्य और देवताओं की जो प्रवृत्तियां हैं, संस्कार हैं उन दोनों का जब मन्थन होता है तो कहीं

देवता ऊँचे बन जाते हैं तो कहीं दैत्यों का बहुमत हो जाता है। जब इस प्रकार की प्रक्रियाएं योगी के हृदय में चलती हैं तो योगी उस अमृत को लेने का प्रयास करता है। वह अमृत क्या है? बेटा! वह जो महान त्याग और तपस्या है, वह जो विवेक है, ज्ञान रूपी जो अमृत है उसे योगी पान कर लेता है तो बेटा! उसका हृदय अमृतमय हो जाता है और वह इनद्रपुरी को चला जाता है।

मैंने कल के वाक्यों में बेटा! त्याग और तपस्या के सम्बन्ध में नहीं केवल तप के सम्बन्ध में कुछ अपने विचार प्रकट किये। यह कहा गया था कि मानव को तपस्वी बनना चाहिएं बिना तप के मानव अमृत को प्राप्त नहीं कर सकता जब मानव अपने को ऊँचा बनाता है तो वह प्रत्येक स्थान में कुम्भ को दृष्टिपात करता है। वह कुम्भ क्या है? जैसे कुम्भाकार होता है उसी प्रकार यह जो सर्वस्व ब्राह्मण है जिसमें लोक लोकान्तर समाहित हो रहे हैं यह एक कुम्भाकार जैसा होता है। इसी प्रकार जब माता के गर्भ स्थल में बालक होता है तो कुम्भाकार की भाँति होता है। कमल जैसी पङ्खड़ियां होती है। इसी प्रकार जब सृष्टि का प्रारम्भ होता है तो परमात्मा की इच्छा शक्ति द्वारा होता है। यह जो प्रकृति के सूक्ष्म परमाणु हैं वह सब एक स्थान में सुगठित हो जाते हैं और जब परमात्मा की प्राणमयी शक्ति महत्व चलता है तो उस समय मन और प्राण द्वारा उसके विभाजन होते हैं और नाना प्रकार के लोक लोकान्तरों में विभाजित हो जाते हैं। कुम्भाकार की बहुतसी व्याख्यायें हैं मानव का जो मस्तिष्क है यह भी कुम्भाकार के तुल्य माना गया है क्योंकि इसमें ब्रह्मरन्ध्र है, इसमें त्रिकुटी है। जब इन दोनों का समन्वय हो जाता है तो उस समय हृदय की महानता में लेता चला जाता है और वास्तव में मानव संसार से पार हो लाता है। बेटा! मैं कुछ पर्वों के सम्बन्ध में भी प्रकट कर रहा था और वह यह कि राजा, महाराजा ऋषि मुनि और तपस्वी आ करके अपने निगले हुए अमृत को प्रजा को प्रसारण करके चले जाते हैं। हमें इन वाक्यों को श्रवण करते हुए अपने जीवन को अमृतमय बना लेना चाहिए और तपस्वी बन जाना चाहिए। आज हमें अपने मानवत्व

को वहाँ ले जाना चाहिए यह एक महान प्रश्न मानव के समीप रह जाता है। यहाँ दैत्य और देवता दोनों का संघर्ष होता है परन्तु दोनों का गुरु एक ही माना जाता है। वही प्रजापति विरोचन का गुरु तो वही प्रजापति इन्द्र का गुरु होता है, जो संसार में तप जाता है तपस्या में परणित हो जाता है वही महानता को प्राप्त हो जाता है।

मुनिवरों! मुझे आज एक वार्ता स्मरण आती चली जा रही है। एक समय प्रजापति ने एक घोष कराया कि मैं आत्मा का ज्ञान करा देता हूँ वह घोष दैत्य और देवता दोनों ने ही श्रवण किया। दैत्यों ने अपने स्वामी विरोचन से कहा कि आज प्रजापति के यहाँ से घोष हुआ है कि मैं आत्मा का ज्ञान करा देता हूँ अब आत्मा का ज्ञान को प्राप्त करने के लिए हमें अग्रणी बनाइये। विरोचन ने कहा बहुत सुन्दर उधर देवताओं ने इन्द्र से कहा कि आप आत्मा का ज्ञान प्रजापति से प्राप्त कर हमें प्राप्त कराइये। उस समय इन्द्र ने कहा कि बहुत सुन्दर।

तो मुनिवरों! एक स्थान से इन्द्र और एक स्थान से विरोचन दोनों ने प्रजापति के आसन को प्रस्थान किया। भ्रमण करते हुए एक भयंकर वन में से तीन तीन समिधायें ले करके यह प्रजापति के आश्रम में जा पहुंचे। प्रजापति ने दोनों का बड़ा आदर किया। दोनों ने उनके चरणों को स्पर्श करके कहा कि भगवन! लीजिए यह तीन समिधायें। उनके चरणों में तीन समिधायें अर्पित करके विराजमान हो गए। विरोचन ने कहा, हे भगवन! आपने घोष कराया है कि मैं आत्मा का ज्ञान कराता हूँ आप हमें आत्मा का ज्ञान कराइये। उन्होंने कहा कि बहुत सुन्दर, परन्तु विरोचन जी हमारे यहाँ एक नियम है कि मेरे यहाँ ३२ वर्ष तक ब्रह्मचर्य का पालन करो, तपस्वी बनो। उन्होंने कहा बहुत सुन्दर।

बेटा! विरोचन और इन्द्र दोनों ने बड़े आनन्द पूर्वक आसन में विराजमान हो करके तपस्वी बनने का सङ्कल्प किया कि वास्तव में हम तपस्वी बनेंगे। तो उन्होंने ३२ वर्ष तक का सङ्कल्प लिया और ब्रह्मचर्य का पालन करने के लिए वह तत्पर हो

गए। ब्रह्मचर्य के आश्रम में विराजमान हो करके प्रभु का चिन्तन निद्यासन इत्यादि करते रहे। जब वह ३२ वर्ष समाप्त हो गए तो प्रजापति के द्वार पर आ पहुंचे और प्रजापति से कहा कि हे भगवन! अब हमें आत्मा का ज्ञान कराइये। उन्होंने कहा कि आत्मा का ज्ञान चाहते हो तो यह जो शरीर है इसी को आत्मा कहते हैं, इसी का तुम पालन करो, इसी के ऊपर निद्यासन, इसी का पान करना आत्मा को जानना है। अब विरोचन बड़ा मग्न हो गया। इन्द्र भी मग्न हो गए। दोनों ने आदित्य की वार्ता को स्वीकार करके प्रजापति के यहाँ से प्रस्थान किया। विरोचन तो दैत्यों की सभा में जा पहुंचे और दैत्यों से कहा कि प्रजापति ने कहा कि यह जो मानव शरीर है इसी को हमारे यहाँ आत्मा कहते हैं, इसी को तुम आत्मा स्वीकार करो। दैत्यों ने वह वाक्य स्वीकार कर लिया और मग्न हो गए कि आत्मा का ज्ञान यही है कि शरीर का पालन करो। परन्तु इन्द्र ने मार्ग में भयंकर वन में यह विचारा कि प्रजापति ने ऐसा कहा है कि इसी को आत्मा कहते हैं यह कैसे स्वीकार किया जा सकता है। क्योंकि जब देवता यह प्रश्न करेंगे कि यह जो शरीर है वह तो अपंग होने पर भी जीवित रहता है। एक नेत्र चला जाता है मानव जीवित रहता है दोनों नेत्र चले जाते हैं तब भी जीवित रहता है हस्त चले जाते हैं तो उसके पश्चात भी जीवित रहता है। यह शरीर आत्मा किस प्रकार हो सकता है। क्योंकि आत्मा का विभाजन नहीं होता, आत्मा एक रस रहता है। आत्मा यदि शरीर होगा तो आत्मा के विभाग भी हमें स्वीकार करने होंगे। इसलिए मुझे प्रतीत होता है कि यह जो शरीर है यह आत्मा नहीं हो सकता और मैं प्रजापति के द्वार चलूं।

तो मुनिवरों! उन्होंने प्रजापति के यहाँ प्रस्थान किया और तीन समिधा अर्पण करे प्रजापति से कहा कि भगवन! आपने इस शरीर को आत्मा कहा है परन्तु यह विश्वास नहीं होता क्योंकि मेरे विचार में यह शरीर आत्मा प्रतीत नहीं होता मुझे निर्णय कराइये कि आत्मा क्या है? उस समय प्रजापति ने कहा है इन्द्र! तुम यथार्थ उच्चारण कर रहे हो परन्तु यदि आज तुम आत्मा को जानना चाहते हो तो तुम मेरे

यहाँ ३२ वर्ष तक ब्रह्मचर्य का पालन करो। इन्द्र ने वहीं ३२ वर्ष तक ब्रह्मचर्य का पालन किया, तपस्वी बने। इन्द्रियों पर सयंम करते हुए तपस्या के पश्चात जब ३२ वर्ष समाप्त हो गए, तो प्रजापति के समक्ष नतमस्तक होकर कहा भगवन! आपके कथानानुसार ३२ वर्ष समाप्त हो गएं हैं अब मुझे आत्मा का ज्ञान कराइये। उन्होंने कहा कि हे इन्द्र! आज तुम आत्मा को जानना चाहते हो तो यह जो स्वप्न अवस्था था स्वप्न का जो क्षेत्र है इसको ही आत्मा कहते हैं। इसी को तुम जानने का प्रयास करो। इन्द्र ने प्रजापति के आसन से प्रस्थान किया और भयंकर वन में पहुंचे। विचार विनियम करने लगे कि हम इस स्वप्न को आत्मा कैसे स्वीकार करें। जब भयंकर वन में मनन करने लगे तो उन्होंने यह निर्णय किया कि यदि वास्तव में हम यह स्वीकार कर लेते हैं कि स्वप्न का जो क्षेत्र है यही आत्मा है तो इसमें मानव में कितनी घृणा होती है, कितना ब्रह्मण होता है, इस पर विचार विनियम करना चाहिए। उन्होंने मनन किया कि जब मानव स्वप्न के क्षेत्र में जाता है वहाँ रोग होता है, शोक भी प्रतीत देता है, वहाँ कहीं व्याकुल होते हैं, कहीं द्रव्यपति बन जाते हैं, कहीं द्रव्यपति से निर्धन बन जाते हैं। जिसमें इतना कष्ट हो, जिसमें सङ्कल्प विकल्प का इतना क्षेत्र हो वह आत्मा नहीं हो सकता। बेटा! जब यह विचार क्षेत्र हो वह आत्मा नहीं हो सकता। बेटा! जब यह विचार इन्द्र के द्वारा आए तो वह तीन समिधा ले करके फिर प्रजापति के आसन को प्रस्थान किया। प्रजापति के द्वारा नतमस्तक होकर के वे बोले कि प्रभु! मुझे तो यह प्रतीत हो रहा है कि यह जो स्वप्न अवस्था है यह आत्मा नहीं हो सकता। मुझे आत्मा का ज्ञान कराइये। आत्मा क्या है? मैं आत्मा को जानना चाहता हूँ। जिस समय इन्द्र ने कहा तो प्रजापति ने कहा कि तुम यथार्थ उच्चारण कर रहे हो परन्तु तुम मेरे यहाँ ३२ वर्ष तक का ब्रह्मचर्य का और पालन करो।

तो बेटा! जब प्रजापति ने ऐसा कहा तो इन्द्र ने स्वीकार कर लिया और ३२ वर्ष तक पुनः ब्रह्मचर्य रहने का सङ्कल्प किया। जब वह ३२ वर्ष समाप्त हो गए तो

उन्होंने जाकर प्रजापति से कहा कि प्रभु! मुझे अब आत्म का ज्ञान कराइये। उन्होंने कहा कि बहुत सुन्दर। यह जो सुषुप्ति अवस्था है इसे आत्मा कहते हैं तुम इसके ऊपर निध्यासन करो, विचार करो। तो इन्द्र ने वहाँ से प्रस्थान किया। उसी भयंकर वन में पहुंचे और निर्णय करने लगे कि यह जो सुषुप्ति अवस्था है यह कैसे आत्मा हो सकता है। क्योंकि मुझे यह प्रतीत नहीं हो पा रहा है कि यह जो सुषुप्ति अवस्था है यह क्या है? देखो, पांच ज्ञानेन्द्रिय पांच कर्मेन्द्रिय का जो क्षेत्र है वह मन में लय हो जाता है, मन बुद्धि में लय हो जाता है और बुद्धि का क्षेत्र है और वह चित्त के क्षेत्र में रमण कर जाते हैं। चित्त उस अवस्था को कहते हैं जहाँ मानव के जन्म जन्मान्तरों के संस्कार निहित होते हैं। अब जब वह मन इन्द्रियों का विषय शान्त होने के कारण चित्त में लय हो जाता है तो उसी को सुषुप्ति अवस्था कहते हैं। वह तो केवल उस महान कारण में लय हो करके, महान चित्त में लय हो करके जीवन को पान किया जाता हो एक तो जीवन देने वाला और एक जीवन को पान करने वाला। क्योंकि जीवन शरीर को प्राप्त होता है, शरीर को शक्ति प्राप्त होती है, वह शक्ति चित्त द्वारा आती है। अब तो चित्त के द्वारा शक्ति देता है वह एक और वस्तु है। यह जो सुषप्ति अवस्था है इसको हम आत्मा कदापि भी उच्चारण नहीं कर सकते। जब उन्होंने ऐसा निर्णय किया तो पुनः तीन समिधा ले करके प्रजापति के आसन पर पहुंचे और प्रजापति से कहा कि प्रभु! यह जो सुषुप्ति अवस्था है इसको हम आत्मा नहीं कह सकते, न यह आत्मा हो सकता है आपने वह मुझे क्या निर्णय कराया है। उन्होंने कहा कि हे इन्द्र! तुम यथार्थ उच्चारण करते हो परन्तु मेरे यहाँ पुनः पांच तपस्वी बनो। तो बेटा! वह पांच वर्ष तक तपस्या करने के लिए तत्पर हो गए। तपस्या करने लगे। पांच वर्ष के पश्चात वह नतमस्तक हो करके बोले प्रभु! मुझे आत्मा का ज्ञान कराइये। उस समय प्रजापति ने कहा, इन्द्र! आत्मा वह पदार्थ है जो किसी भी काल में नष्ट नहीं होता। वह सदैव एक रस रहता है मानो वह तपस्या में संलग्न रहता हैं आत्मा वह पदार्थ है जिसमें न मानव को रोग होता है

न शोक होता है न आलोचना करता है एक रस में विराजमान हो जाता है। आज हम अपने को ऊँचा बनाना चाहते हैं आत्मा को जानना चाहते हैं आत्मा को जानने के लिए हमें विचारना होगा कि यह संसार क्या है, संसार में अमृत क्या है और तप क्या है। इसको जाने बिना हम आत्मा को नहीं जान सकेंगे परन्तु मेरे विचार में तो हे इन्द्र! आत्मा वही है जो इस शरीर को क्रियाशील बनाता है शरीर को घृति देता है ज्ञान और प्रयत्न दोनों उसी के द्वार से उत्पन्न होते हैं, उसी को हमारे यहाँ आत्मा कहा जाता है।

तो मुनिवरों! जब आत्मा का उन्होंने निर्णय कराया तो इन्द्र को शान्ति हो गई और यह निर्णय हो गया कि वास्तव में आत्मा और शरीर दोनों भिन्न भिन्न हैं। शरीर तो कणों से उत्पन्न होता है और वह प्रकृति के कण हैं मानो जो क्रिया उत्पन्न होती है वह ज्ञान और प्रयत्न आत्मा के माध्यम से उत्पन्न होती है। जब यह निर्णय उनके हृदय में आ पहुंचा तो आगे चल करके उन्होंने बहुत स्पष्ट शब्दों में कहा कि हे भगवन! मैंने १०१ वर्ष की तपस्या की है।

तो बेटा! वाक्य उच्चारण करने का अभिप्राय क्या है? मानव को तपस्वी बनाने की आवश्यकता है। इन्द्र जव तपस्वी बना उसके पश्चात आत्मा ज्ञान प्राप्त हुआ। बिना तपस्या के मानव न होने के तुल्य माना जाता है। जैसे मानव बीज हीन भूमि में बीज को स्थापित कर देते हैं वह मानव की अति हो जाती है। आज हमें उस गति को नही लाना है। केवल यह विचार विनिमय करना है, चिन्तन करना है, मनन करना है, कि हम आत्मा को जानने का प्रयास करें। आत्मा के उस क्षेत्र में पहुँचे जहाँ आत्मा को जानने के पश्चात मानव सब कुछ जान जाता है और संसार में ऊँचा बन जाता है। महर्षि कपिल के शब्दों में यह उच्चारण करना बहुत अनिवार्य होता है कि वेद का जो अमृत है वह आत्मा ज्ञान के साथ पान के पश्चात बेटा! यदि वह चाहता है कि मैं सम्पन्न विद्याओ का ज्ञाता बन गया हूँ तो यह उसके लिए असम्भव है। वह मिथ्या उच्चारण करने वाला प्राणी कहलाता है क्योंकि संसार के

जो परमात्मा है ऐसे ही परमात्मा का क्षेत्र है जैसे परमात्मा अनन्त है, उसकी रचना भी उतनी अनन्त मानी गई है। आज मानव बिना तपस्या के केवल अक्षरों का बोधी हो करके यह उच्चारण करने लगे कि मैं सम्पन्न विद्याओं को जानता हूँ, सम्पन्न यौगिक क्रियाओ को जानता हूँ तो उसका यह कथन मिथ्या हो जाता है एक काल में। इसलिए प्रत्येक मानव को विचार विनिमय करना है कि आत्मा को जानने के लिए सदैव तत्पर रहना है, आत्मा के क्षेत्र में हमें पहुँचने के लिए तपस्या के क्षेत्र में जाना है। तो यह है आज का हमारा वाक्य। मैं कोई आज अधिक चर्चां तो प्रकट करने नहीं आया हूँ। केवल यह वाक्य प्रकट कर रहा था आरम्भ के शब्दों में कि हमारे यहाँ कुम्भाकार का जो अमृत है उसे पान करना हमारे लिए बहुत अनिवार्य होता है उसे जब आचमन के रूप में हम पान करते है तो हमारा हृदय में महानता आ जाती है, मानवता के विशेष अङ्कुर उत्पन्न हो जाते है वह मानव संसार में, राष्ट्र में भी मानवता को ऊँचा बनाने में अग्रणयि बन जाता है। मुझे बेटा! नाना वार्तायें स्मरण आने लगती हैं जब तपस्वियों की चर्चायें स्मरण आती हैं तो हृदय गद् गद् होने लगता है।

मुनिवरों! महर्षि यज्ञवल्कय तपस्या करने में अग्रणीय रहे। देवता वह होता है जो तपस्वी होता है। वह देवता नहीं होता जिसके द्वारा पक्षपात के अङ्कुर होते हैं, जिसके द्वारा निन्दा स्तुति के अङ्कुर होते हैं, जो अपने स्वार्थ के वशीभूत हो करके एक महान प्राणी को भी कलङ्कित कर सकता है। वह देवता नहीं होता। उस मानव के हृदय में दैत्य प्रकृति के विचार विनिमय करना है। आज हमें विचार विनिमय करना है। आज परमात्मा की सृष्टि में आकर के हमारे लिए अनुसन्धान करना बहुत अनिवार्य है। यदि मानव के जीवन में अनुसन्धान नहीं होगा तो उसका जीवन न होने के तुल्य ही माना जाता है। आज हम अनुसन्धानवेत्ता बनने के लिए तत्पर बनें। कुम्भाकार को भी हम अनुसन्धान की दृष्टि से दृष्टिपात करते चले जाएं। वह कुम्भ क्या है जो प्राणी मात्र के लिए अमृत का कार्य करता है। आज मेरे प्यारे

महानन्द जी! इस वाक्य को विस्तार से प्रकट करते परन्तु समय इतनी आज्ञा नहीं दे रहा हैं। केवल मैं। एक वाक्य प्रकट करने जा रहा हूँ, इन्होंने मुझे संकेत दिया, मैंने उसके अनुसार कुछ अपने विचार प्रकट किए हैं। वास्तव में पूर्णता से तो इन वाक्यों को नहीं दे सकता हूँ परन्तु मेरे पूज्य गुरुदेव कहा करते थे कि न देने से कुछ विचार संसार को देना बहुत ही सुन्दर कहलाया जाता है। तो मेरे प्यारे भद्र पुरुषों! आज हम प्रभु की याचना करते हुए, आत्मा में संलग्न होते हुए आत्मा को जानने का प्रयास करें यही संसार में हमारा सबसे बडा कर्म होता है। आत्मबल को उत्पन्न करें, आत्मा का बल यदि मानव के समीप होगा तो दुराचारी प्राणी भी नतमस्तक हो जाता है। राष्ट्र भी नतमस्तक हो जाता है। राष्ट्र और मानव उस काल में नतमस्तक नहीं होता जब तक उसके द्वारा तपस्या का, आत्मा का बल नहीं होता क्योंकि तपस्या से ही यह संसार ऊँचा वन जाता है।

मुनिवरों! देखो, भगवान राम और रावण में क्या विशेषता थी। राम के द्वारा तपस्या थी, और रावण के द्वारा तपस्या नहीं थी। इतने बड़े साम्राज्य को उन्होंने नष्ट भ्रष्ट कर दिया। इसी प्रकार भगवान कृष्ण में और दुर्योधन में क्या विशेषता थी मुझे स्मरण है बेटा! जब महाभारत का संग्राम होने लगा संग्राम के लिए दोनों पक्ष भगवान कृष्ण से सहायता लेने के लिए चले। एक स्थान से महाराजा अर्जुन चले है और एक स्थान से महाराजा कृष्ण के सिर के आङ्गन में विराजमान हो गए और अर्जुन पश्चात पहुँचा और वह उनके चरणों में नतमस्तक हो गया। भगवान कृष्ण निद्रा में तल्लीन थे। निद्रा से जब जागरूक हुए तो प्रथम अर्जुन को दृष्टिपात किया और पूछा कहो अर्जुन किस प्रकार आए हो। आज क्या कार्य हो गया। दुर्योधन ने कहा कि भगवन! मैं भी आया हूँ आपके द्वारा। उन्होंने कहा कि बहुत सुन्दर। बोलो क्या चाहते हो? उन्होंने कहा कि भगवन! हम संग्राम के लिए सहायता चाहते हैं हमें सहायता दो। उन्होंने कहा कि भाई तुम्हें सहायता प्राप्त होगी परन्तु प्रथम जो मांग है वह अर्जुन की होगी उन्होंने कहा प्रथम आया तो मैं हूँ। भगवान कृष्ण ने

कहा कि यह तो मैं नहीं जानता परन्तु सबसे प्रथम मुझे अर्जुन के दर्शन हुए हैं। देखो, एक स्थान में तो केवल मैं हूँ और एक स्थान में मेरी सर्वस्व सेना है अब जो चाहते हो ले जाओ। महाराजा अर्जुन ने यह विचारा कि मैं सेना का क्या करूंगा जब मेरे द्वारा जनार्धन आ जाएं। तो उन्होंने कहा कि भगवान! मैं तो आपको चाहता हूँ। दुर्योधन बड़ा मग्न हो गया कि सर्वस्व सेना मुझे युद्ध करने के लिए प्राप्त हो गई आज इनका मैं क्या करूंगा। क्योंकि इन्होंने तो शस्त्र भी नहीं उठाना। तो बेटा! जो प्राणी इतना त्यागी और तपस्वी होता है वह महाभारत जैसे संग्राम को बिना अस्त्र शस्त्रों के करा सकता है। जब वह यह विचार कर चले कि पाण्डवों को कुछ न कुछ उनकी जीविका के लिए दिलवा दूं तो उस समय हस्तिनापुर के क्षेत्र में दुर्योधन ने कहा था कि हे ग्वाले! कैसे आए। उन्होंने कहा कि में इसलिए आया हूँ कि तुम पाण्डवों को कुछ अर्पित कर दो। उन्होंने कहाँ कि मैं कुछ अर्पित नहीं करूंगा। पृथ्वी का एक अङ्कुर भी उन्हें प्राप्त नहीं कराया जा सकेगा। मुनिवरों! उन्होंने बहुत कुछ वाक्य प्रकट किया परन्तु वह एक रस रहे। तपस्या का बल कितना महान होता है। राष्ट्र के ऊँचे ऊँचे भोजनालयों को त्याग करके महात्मा विदुर के यहाँ जा करके सुन्दर से पदार्थों को पान कर लिया। यह है तपस्या जब मानव तपस्वी बनता है तो तपस्या का बल होता है। वह एक महान से महान सम्राट को नीचे गिरा देता है और तपस्वी का जीवन संसार में महानता को प्राप्त हो जाता है।

तो बेटा! यह है आज का हमारा वाक्य। हे मानव! संसार में तू अपने जीवन को महान बनाने के लिए आत्मा को जानने को प्रयास कर। आत्मा के बल से राष्ट्र, समाज सभी कुछ तेरे द्वारा नतमष्तिस्क होता चला जाएगा। आज के वाक्यों का अभिप्राय है कि हम प्रभु का चिन्तन करते हुए मानवता के उस क्षेत्र में चलें जाएं जहाँ मानव का वास्तव में कल्याण होता है और मानव अपने ऊँचे पद को प्राप्त कर सकता है। इस संसार सागर से पार होते चले जाएं। यह है आज का हमारा वाक्य। अब वेदों को पाठ होगा इसके पश्चात यह वार्ता समाप्त। बेटा! देखो, जो

विरोचन प्रकृति के होते है दैत्य प्रकृति के, वह शरीर के पालन पोषण में ही लगे रहते हैं, इसी को आत्मा स्वीकार करते है और जो देवता होते हैं वह इस शरीर को आत्मा स्वीकार नहीं करते वह केवल आत्मा कासे जानते हुए देवता पद को प्राप्त होते चले जाते हैं। देवता कौन है? जो आत्मा को जानते है। दैत्य कौन है? जो अपने ही पालन पोषण में लगे रहते है और जिन्हें ज्ञान और विवेक नहीं होता। अब मुझे समय मिलेगा तो शेष चर्चाएं कल प्रकट की जाएगीं। धन्य हो भगवन!। तो मुनिवरों! आज का आपका वाक्य समाप्त। अब वेदों का पाठ होगा।

9.एकादशी व शिवरात्रि का वैज्ञानिक स्वरूप-700306

जीते रहो! देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भान्ति, कुछ मनोहर वेद मन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने, पूर्व से, जिन वेद मन्त्रों का पठन पाठन किया। आज हम उस महामना देव की महिमा का गुणगान गाते चले जा रहे थे, जिसकी चेतना से यह सर्वस्व जगत चेतनित हो रहा है। जितना भी चैतन्यवाद हमें प्रतीत होता है वह किसी चेतना के आधार पर स्थित है। क्योंकि ब्रह्म की चेतना ही मानव को चेतनित करती रहती है, अन्यथा शून्यवत रहता है।

तो मेरे प्यारे ऋषिवर! आज हम अपने प्यारे प्रभु का गुणगान गाते चले जाएं, जो हमारे जीवन का सदैव साथी बना रहता है। उसका आनन्दमयी जीवन है उसे अपनाते हुए हम इस संसार सागर से पार होना चाहते हैं।

आज का हमारे वेद पाठ में, सुन्दर सुन्दर याचनाएं उस महान प्रभु की महिमा में, हम रमण करते चले जाएं। आज का हमारा वेदमन्त्र हमें उस ब्रह्म के लिए, ब्रह्म का याचक बनाने के लिए, प्रेरित कर रहा था। एक नहीं नाना प्रकार के विवरण आते रहते हैं। हमारे यहां जहां और भी चर्चा आती चली आ रही थी वहां ब्रह्म के अनुसार भी, कुछ विवेचनाएं अथवा कुछ जीवन की कृतिभा का विवरण भी आता चला आ रहा था मेरे प्यारे महानन्द जी! सदैव यह चाहते रहते हैं, कि मेरे अनुकूल ही कोई चर्चा होनी चाहिए। इनका एक विषय रहता है, इनके विचारों की एक धारा है, जो मानव को भी मुग्ध बना देती है। परन्तु आज का हमारा वेदमन्त्र उस महान शिव अग्रतम् संकलन में रमण करने वाला है, उसका उच्चारण कर रहा है। आज हम उस महान शिव की शरण में ले जाना चाहते हैं जो संकल्पों में विराजमान रहता है, जिसका वह मुनिवरों! शिव ही सङ्कल्प है, क्योंकि वह जो शिवम् सुन्दरम् वह जो शिव है वह सुन्दर है, क्योंकि वह जटावासी बन करके रहता है।

मेरे प्यारे महानन्द जी! ने कई काल में मुझे प्रकट कराते हुए कहा है कि यह जो

गंगा वृत्तं गम्ये प्रभे कृतानम् यह जो गंगा है यह महाराजा शिव की जटाओं में गमन करने वाली है। परन्तु जब मुझे यह वाक्य स्मरण आता है, इन्होंने कई काल में प्रगट कराते हुए कहा, कि हमारे यहाँ जो शिव है, ऐसा कहा जाता है कि वह महाराजा सुखमञ्जस जो राजा सगर के पुत्र थे जब महात्मा कपिल जी ने, राजा सगर के साठ हजार पुत्रों! को मृत्यु के मुखारबिन्द में अर्पित कर दिया तो महाराजा सुखमञ्जस महर्षि कपिल मुनि के आश्रम में प्रविष्ट हुए और महर्षि कपिल जी से कहा कि महाराज! मेरे इस परिवार का कैसे उत्थान होगा? क्योंकि यह मेरे लिए एक बड़ा कलंक है और मैं कलङ्कित हो गया हूँ कि मेरे विधाता साठ हजार मृत्यु के मुखारबिन्द में चले गये। महाराज कपिल जी ने कहा हे राजा! हे राजपुत्र! तुम बड़े नम्र और उदार हो। एक कार्य करो ब्रह्मे कृतकं प्रभाः इन्होंने गंगा को लाने का प्रयास किया। यहाँ तक कुछ समयाः ब्रह्मे अच्चुतम् तुम्हारी ही परम्परा कुछ काल के पश्चात महाराजा भागीरथ के द्वारा गंगा का अवतरण होगा। जब महात्मा कपिल जी ने ऐसा कहा तो महाराजा सुखमञ्जस अपने राज्यस्थल को आ गये। महाराजा सगर ने कहा कि कहो सुखमञ्जस जी! क्या रहा? उन्होंने कहा कि प्रभु! वह तो मृत्यु के मुखारबिन्द में प्रविष्ट हो गएं हैं। उन्होंने कहा अच्छा! कपिल जी ने ऐसा ही किया है। हां महाराज!।

तो मुनिवरों! कुछ जाता है कि महात्माओं की अनुपमता विचारणीय होती है। कुछ समय बेटा! उसी प्रणाली में महाराजा भागीरथ हुए। जो बेटा! देखो, आकाश से, ब्रह्मपुरी से गंगा को ले आये। परन्तु जब गंगा को लाने का प्रयास किया गया, तो उस गंगा के प्रवाह को कौन शान्त कर सकता था। तो कहा जाता है कि महाराजा शिव के द्वारा, महाराजा सगर प्रविष्ट हो गएं और ब्रह्मे कृत्रं ब्रह्मे सगरथ च प्रमाणे अस्तेः महाराजा सगर ने भी यही याचना की। इसके पश्चात महात्मा भागीरथ जब इनके समीप पहुंचे इन्होंने कहा कि प्रभु! गंगा के प्रवाह को कौन शान्त कर सकता है। कहते हैं महाराजा शिव ने अपने सङ्कल्प के द्वारा अपनी जटाओं में अर्पित कर

लिया। जटाओं में अर्पित करने के पश्चात मानो गो मुख के द्वारा इसी गंगा का अवतरण हुआ। मुनिवरों! ऐसा हमारे यहां मेरे प्यारे महानन्द जी! ने मुझे यह लोक कथा वर्णन कराई। परन्तु इस सम्बन्ध में तो मेरा हृदय बड़ा ही गद् गद् होता रहा है।

आज भी मुझे वह समय प्रायः प्राप्त होता रहता है कि वास्तव में ऐसा ही स्वीकार किया जाएं। परन्तु हमारे यहाँ ऐसा माना गया है कि शिव के नाना पर्यायवाची शब्द होते हैं। शिव नाम परमात्मा का भी है और शिव नाम आत्मा को भी कहा जाता है। शिव नाम की कुछ औषधियाँ भी होती हैं परन्तु यहाँ शिव नाम पर्वतों का उच्चारण करने में कोई किसी प्रकार का दोषारोपण नहीं होगा। क्योंकि शिव नाम पर्वतों का भी कहा गया है। यह जो गंगा का अवतरण है, यह केवल देखो, पर्वतों से हुई मानवीय कल्याण के लिए पृथ्वी के आसन को आकृत करती हुई और सुखद देती हुई, समाज को अपनी प्रतिभा से बेटा! यह अपने मार्ग से चली आ रही है। इसी प्रकार ऐसा कहा जाता है कि महाराजा! शिव हम पर्वतों को कहते हैं, क्योंकि गौमुखम् ब्रह्मे क्योंकि शिव वह पर्वत का जो ऊपरी भाग होता है उसको जटावासी कहते हैं। जटाओं में रहने वाला मुनिवरों! देखो, ऊपरी भाग से जो आ रहा है उसी को हमारे यहाँ जटावासी शिव कहा जाता है। परन्तु जहाँ हम यह स्वीकार करें कि शिवं ब्रह्म रात्राणि गच्छन्त रूद्रोः मेरे प्यारे महानन्द जी! का यह कथन है कि आज वह शिव सुन्दर रात्रि है जिसमें माता पार्वती और शिव दोनों जागरूक रहते थे। उन्होंने अपनी साधना को परिपक्व किया था, उन्होंने योगाभ्यास में अपनी पारायणता को प्राप्त किया। हमारे यहाँ यह कहा जाता है इस सम्बन्ध में जो परम्परागतों से ही, माना गया है कि शिवं ब्रह्मे शिव सुन्दरम् अच्तम ब्रह्मे आक्राति लोकाः ऐसा कहा जाता है कि यह शिव मानो सङ्कल्प को कहा जाता है। आज का जो दिवस है वह केवल गंगा अवतरण का ही नहीं है परन्तु जहाँ गंगा अवतरण का है क्योंकि आज के दिवस परमापिता परमात्मा की प्रतिभा के आधार पर सूर्य

का निर्माण हुआ। सूर्य को भी हमारे यहाँ शिव कहा जाता है। उसकी नाना प्रकार की किरणें हैं वह मानो जटावासी कहलाई गई है। वह जो शिव सुन्दर है, शिव है, शिव उसे इसलिए कहते हैं परमात्मा को क्योंकि वे परमपिता परमात्मा का सङ्कल्प है और परमात्मा का जितना भी सङ्कल्प होता वह सर्व ब्रह्माण्ड को क्रियाशील बना रहा है। जैसे एक मानव का सङ्कल्प होता है मानवीय सङ्कल्प है एक माता का प्रिय पुत्र है परन्तु ऐसा ही पिता का होता है माता के प्रति एक सङ्कल्प है। एक महान शिव सङ्कल्प है उसके मस्तिष्क में क्या यह मेरा पुत्र है परन्तु पुत्र का सङ्कल्प ही तो उसके मस्तिष्क में रहता है और पुत्र के हृदय में यह सङ्कल्प रहता है यह मेरी मातेश्वरी है, इसके उदर से मैंने जन्म को ग्रहण किया है। आदरणीय मातेश्वरी के गर्भ में, मैंने अपनी प्रतिभा को प्राप्त किया है। आज मुझे इसका निरादर नहीं करना है। परन्तु इस प्रकार का सङ्कल्प दोनों के हृदय में होता है। इसी प्रकार पति पत्नी का सङ्कल्प होता है। उसमें भी शिव का एक सङ्कल्प होता है। वाक्य उच्चारण करना यह है कि जितना भी यह जगत है यह सब उस प्रभु का सङ्कल्प है, उस शिव का सङ्कल्प है। मानो देखो, उसी सङ्कल्प के आधार पर बेटा! यह संसार की चेतना चल रही है। संसार अपनी क्रिया में क्रियाशील हो रहा है उसकी जो क्रिया है, मानो उसकी जो चेतनावत है उसी में महान शिव का एक सङ्कल्प है। वह जो शिव का उज्ज्वल सङ्कल्प होता है, वही मानो मानवीयता को पवित्र बनाने वाला है इससे मानवता का एक प्राप्त हो जाता है परन्तु मानवता में ह्रासपन नही आता इसीलिए हमारे आचार्यों ने कहा है कि मानव को सङ्कल्प कर लेना चाहिए। परमात्मा की, माता की प्रतिभा माता का सङ्कल्प है कि मेरा पुत्र मानो परमाणुओं का समूह विराजमान है, आत्मा का ही तो सङ्कल्प है बेटा! यह शरीर परमाणुओं का बना हुआ मानो यह ज्यों का त्यों पिण्ड के रूप में रहता है। जितना भी पिण्डवाद है उसमें प्रभु उस शिव का एक उज्ज्वल सङ्कल्प होता है बेटा!।

मेरे प्यारे ऋषिवर! वह जो सङ्कल्प होता है उसी सङ्कल्प के आधार पर हमें अपने

जीवन, अपनी मानवीयता को विचार विनिमय कर लेना चाहिए। एक मेरी प्यारी माता है, परन्तु उस माता के प्रति एक अपने प्रारब्ध के ऊपर उसे विश्वास होता है, उसमें सङ्कल्प आ जाता है कि वो प्रभु ही रचता है। वह जो सङ्कल्पवाद है, वही मानव को स्थिर करने वाला है, वही जीवन का एक कृत घोष कहलाया गया है। हमारे यहाँ शिव के समय मानो यह जो एकादशी एकदश ब्रह्मे शिवं रात्राणि गच्छन्तम् ऐसी मेरे प्यारे महानन्द जी! प्रेरणा दे रहे हैं। आज मेरे प्यारे महानन्द जी! भी शिव के ऊपर कुछ सूक्ष्म सा अपना प्रकाश देंगे। मैं तो केवल इतना वाक्य उच्चारण करने के लिए तत्पर रहता हूँ कि यह जो प्रभु का महान सङ्कल्प शक्ति के आधार पर यह जो मानो जगत स्थिर हो रहा है। एक पिता के हृदय में यह कल्पना है यह सङ्कल्प है कि यह मेरी पुत्री है परन्तु पुत्री के प्रति उसे कितना सङ्कल्प है। इसी प्रकार मुनिवरों! शिव नाम उस महान प्रभु का है, और प्रभु का ही जो सङ्कल्प है कि यह जगत अपना कार्य कर रहा है। एकादशो जो एकादशम् ब्रह्मे मानो एकादशो हमारी इन्द्रियां हैं यह आत्मा का विशेषण सङ्कल्प कहलाया गया है क्या मेरी इस यज्ञशाला में मानो यह दस पात्र हैं और ग्यारहवां मन होता है मानो पात्रों में आहुति प्रदान करने वाला जैसा हमारी योग की परम्परा में महाराजा शिव और पार्वती दोनों के शब्दार्थों में ऐसा विवरण प्रायः आता रहा है। मुनिवरों! देखो, जैसे हम यह स्वीकार कर लेते हैं कि ब्रह्मे आत्म ब्रह्मे एकादशो का अभिप्राय यह है प्रायः हमारे यहाँ एकादशी व्रत को प्रायः बहुत उज्ज्वल माना जाता है। आज से नहीं परम्परा से ही पवित्र माना गया है। हम भी एकादशो व्रत को सदैव से धारण करते चले आए हैं और भी ऋषि मुनियों का ऐसा सिद्धान्त रहा है। परन्तु एकादशो का अभिप्राय क्या है? अन्नवता ब्रह्मे त्याग्य ब्रह्मे नैत्यं सर्व ब्रहे अस्ताम् ऐसा कहते हैं आचार्य जन कि अन्न को त्यागना ही हमारे लिए एकादशो नहीं। अन्न को त्यागना भी वैज्ञानिक रूपों से परणित और सम्बन्धित किया गया है। हमारे जीवन का जो सम्बन्ध है वह मानो उस महान प्रकृतिवाद से रहता है, अन्न से रहता है। अन्नवाद ब्रहे अन्न में कई प्रकार

के दोष अवृत दोष होते हैं। क्योंकि एकादशी मानो यह जो सूर्य की गति के आधार पर हमारी एकादशी बनती है, जैसे मानो द्वादश बनती है, त्रयोदश बनती है, चतुर्दश बनती है, पञ्चम् बनती है, षटं बनती है, सप्तमी बनती है, अष्टमी बनती है, नवमे बनती है और दशमी बनती है। इसी प्रकार एकादशी का सबसे प्रथम ऐसा महत्व क्यों माना है? वास्तव में जितनी भी तिथियाँ होती हैं उन सबकी जो गति होती है वह सूर्य की गति के आधार पर होती है। जिस समय द्वादश होती है द्वादश का जो प्रभाव है। वह एक महत्वपूर्ण माना गया है। द्वादशी में मानो कृतिका और भानु दोनों नक्षत्रों का दोनो नक्षत्रों की प्रतिभा रहती है। मुनिवरों! देखो, वह जो प्रतिभा है, वह मानव के पिण्ड में भी उसी प्रकार गति करती है। अहा माता के वह जो दिवस होता है वह बड़ा सुन्दर और महान होता है। उसमें गर्भा प्रभेव अचतम् लोकां ब्रह्मे अस्ति इस विज्ञान में मैं अधिक नहीं जाना चाहता हूँ केवल तुम्हें यह विज्ञान का वाक्य प्रकट करा रहा हूँ। अष्टमी में भी दोषारोपणों की वास्तव में प्रकृति में कोई दोषण हो जाता हैं वह चन्द्रमा की गति के आधार पर, क्योंकि पुष्य और जेष्ठाय नक्षत्र दोनों की प्रतिभा इसमें प्रतिष्ठित हो जाती है। इसलिए उनका अच्छी प्रकार स्पष्टीकरण नहीं हो पाता। परन्तु आज का वह जो एकादशो आज मैं सभी तिथियों के सम्बन्ध में अपना प्रकाश नहीं देना चाहता। वेद के ऊपर विचार विनिमय करना हमारे लिए मानो देखो, उतना समय आज्ञा नही दे रहा है वाक् केवल यह है कि एकादशी जो शिवं व्रतं ब्रह्मे वास्तव में देखो, इस एकादशी के दिवस मानव शिव का सङ्कल्प करता है और सङ्कल्प क्या करता है कि मैं संसार में त्रुटियों को त्यागने का प्रयास कर रहा हूँ। अपने जीवन को मानो एक महान सूक्ष्म वेला में लेना चाहता हूँ। बाह्य जीवन सूक्ष्मतम् बन जाएं और आन्तरिक जो जीवन विस्तारवादी बन जाएं। क्योंकि विचार मेरा विस्तार का हो और मेरे जितने दोषण हैं उनमें बहुत संकुचित्तवत होना चाहिए। वह मेरे द्वारा सिमट जाएं इसी प्रकार मुनिवरों! देखो, मेरे मन में एक सङ्कल्प रहा है इस प्रकार का जब मानव का

सङ्कल्प रहता है। तो यहाँ मानव तुच्छवत को प्राप्त नहीं होता।

मेरे प्यारे ऋषिवर! एकादशो का अभिप्रायः क्या है? एकादशी के व्रत का अभिप्राय यह है कि व्रत नाम है सङ्कल्प का व्रत कहते हैं सङ्कल्प को और एकादशो कहते हैं कि पांच ज्ञानेन्द्रियाँ हैं और पांच कमेन्द्रियाँ हैं और ग्यारहवां मन कहलाया गया है। क्योंकि यह मन ही सङ्कल्प की प्रतिभा का एक प्रतीक माना गया है, इसमें प्रायः ऐसा कहा जाता है कि इसमें अन्न को ग्रहण नहीं करना चाहिए। और मुनिवरों! देखो, अन्न को क्यों नहीं ग्रहण करना चाहिए? हमारे यहाँ ऐसा कहा गया है देखो, कृत्तिका और भानु नक्षत्र दोनों का प्रभाव सूर्य की किरणों में होता है। सूर्य की किरणों की जो प्रतिभा है वह अन्न में जाती है क्योंकि अन्न का जो स्थूलवत है मानो वह मानो सूर्य की किरण के आधार पर ही स्थित रहता है। उसी से उसमें एक क्रीड़त गति होती है, उसी गति के आधार पर कुछ वैज्ञानिकों ने कहा है जो वैदिक वैज्ञानिक हुए हैं, परम्परागतों वाले जो वैज्ञानिक हुए हैं उन्होंने कुछ ऐसा माना है क्या वह मानो उसकी तो प्रति ब्रह्म सूर्य की किरणों के आधार पर कुछ ऐसा माना है कि अन्न में किसी प्रकार का एक विषधर हो जाता है। व्रत नाम सङ्कल्प का है और एकादशो का अभिप्रायः यह है कि हम मन, वचन और कर्म से ही हम अपनी इन्द्रियों को संयम में बनाएं।

पांच ज्ञानेन्द्रियाँ, पांच कर्मेन्द्रियाँ, और उनके साथ में लगा हुआ जो मन है जिसे एकादशो कहते हैं, एका यही इन्द्रियों का प्रतीक माना गया है। बिना मन के इन्द्रियों का अपना कोई भी अस्तित्व नहीं होता अस्तित्व नही होता, क्यों नही होता? क्योंकि मानव के नेत्रों की ज्योति चलती है उसमें मनीराम ही विराजमान रहते हैं। मन के आधार पर ही यदि मन नेत्रों के साथ लगा हुआ है तो नाना प्रकार की चञ्चलता, नाना प्रकार का उदारपन नेत्रों के समीप आता रहता है। इसी प्रकार प्रत्येक इन्द्रिय के साथ मन होता है। परन्तु वह जो मन की प्रतिभा है, मन की जो स्थिति है वह जो मन का एक प्रत्येक प्रवाह माना गया है। तो मुनिवरों! मन की वह जो चेतना

है, मन का जो विभाजनवाद है वह इन्द्रियों को ही अपना अस्तित्व दे करके बेटा! इन्द्रियों को विरेक करता रहता है। तो विचार विनिमय केवल यह हमारा है आज के इन वाक्यों का अभिप्रायः यह है आज का दिवस इसलिए हमारे यहाँ परम शोभनीय माना गया है कि आज के दिवस शिव के सङ्कल्प के आधार पर, सूर्य का निर्माण हुआ। क्योंकि सूर्य अपनी सम्पन्न कलाओं से युक्त हो गया था। आज के दिवस, चन्द्रमा की भानकेतु, चन्द्रमा की कृति कान्त अन्वेषणों में उसमें भी एक प्रतीक माना गया है।

तो मेरे प्यारे ऋषिवर! वाक्य के उच्चारण करने का अभिप्राय यह है कि आज के दिवस जो एकादशी व्रतम् ब्रह्मे जिसको शिवरात्रि कहा जाता है इसको शिवः शिवरात्रि को कहते हैं। क्योंकि यह सबसे प्रथम रात्रि संसार में आई। जब संसार की रचना हुई तो सबसे प्रथम रात्रि शिवरात्रि, जिसको एकादशी अकृत कहा जाता है। मेरे प्यारे ऋषिवर! कुछ ऐसा भी माना गया है, हम जब यह स्वीकार करते हैं कि एकादशो व्रत धारण करने से जीवन की प्रतिभा को ले करके ही बेटा! जीवन में एक महानता की ज्योति प्रकट हो जाती है, उससे ही जीवन का एक उज्ज्वल लक्ष्य हमारे समीप आने लगता है।

तो मेरे प्यारे ऋषिवर! आज मैं कोई विशेष चर्चा प्रगट करने नही आया हूँ वाक् यह उच्चारण करने का अभिप्रायः है आज का वह शुभ शोभनीय एक दिवस है, रात्रि है, जिसमें मुनिवरों! देखो, मानव पिण्ड का निर्माण हुआ। सबसे प्रथम मानव पिण्ड रूप में जागरूक हो गया था जागरूक हो जाने के कारण क्योंकि वह शिव का सङ्कल्प था, परमात्मा के सङ्कल्प के आधार पर ही मानव अपनी सम्पन्न कलाओं से परिपक्व हो गया था। उसी को हमारे यहाँ जीवन की एक स्वात धारा कहा जाता है जिसको अपनाने के पश्चात हमारे जीवन में एक आनन्दवत उत्पन्न हो जाता है, जिसको धारण करने के पश्चात, हमारी इन्द्रियों में एक महान सङ्कल्प की पवित्र धारा ओत प्रोत हो जाती है।

तो मेरे प्यारे ऋषिवर! बेटा! आज का यह वाक्य क्या कहा रहा है? हमें विचार लेना चाहिए। आज हम अपने शिव सङ्कल्प को अपनायें क्योंकि वह सङ्कल्प ही हमारे जीवन के साथी है। मानव एक मिथ्यावाद को अपना लेता है, अनायास ही मिथ्या उच्चारण करता है, परन्तु वह उसका शिव सङ्कल्प नही होता, मानव का सङ्कल्प वह होता है जिसमें मानव अपनी प्रतिभा बना लेता है, अपना सङ्कल्प बना लेता है कि जो मैंने कहा है वह मुझे करना है मानो वह क्रियात्मक में लाना है। जब मानव का इस प्रकार का सङ्कल्प हो जाता है तो उस मानव के जीवन में, इन्द्रियों को संयम में करने की शक्ति प्रबल हो जाती है। इन्द्रियों को संयम में करना ही उसका लक्ष्य एक हो जाता है। आज उस लक्ष्यवाद को हमें जानना है। उसी लक्ष्यवाद के आधार पर अपने मानवीय समाज को ऊँचा बनाना है।

जैसा हमारा परम्परागतों से वाक होता रहा है। मेरे प्यारे ऋषिवर! आओ, आज हम तुम्हें उस मार्ग पर ले जाना चाहते हैं, दो वाक्य तुम्हारे समीप प्रगट किए हैं। मानव एकादशी के व्रतों को क्या महत्व देता है एकादशी मानो शिवरात्रि जिसमें शिव का सङ्कल्प भी होता है। शिव का सङ्कल्प मानो देखो, उस रात्रि इस दिवस को मानो आज की रात्रि के दिवस तो मानव का निर्माण हुआ, सूर्य का निर्माण परिपक्व हो गया था इसीलिए मानवीय जाति में शोभनीय माना जाता है। आओ मेरे प्यारे ऋषिवर! एक वाक् तुम्हें और प्रगट कराते चले जाएं। क्योंकि यही दिवस हमारे लिए शोभा ब्रह्मे व्यापनोति सर्वां हमारे संसार के लिए उज्ज्वल कहता रहा है संसार में प्रायः एक महान ज्योति उसमें जब ही प्रविष्ट हो जाती है। जब मानव में व्यापकवाद में सङ्कल्पवाद की प्रतिभा होती है यह है बेटा! आज का हमारा वाक्, मैं कोई अधिक चर्चा करने नही आया हूँ। हमारे यहां शिव पर्वतों को भी कहा जाता है। शिव नाम परमात्मा का भी है। शिव नाम आत्मा को भी कहा गया है। शिव सूर्य को भी कहा गया है परन्तु यहाँ शिव की जो महिमा है वह केवल जैसा हमने अभी अभी कपिल मुनि के वाक्यों को अभी अभी हमने प्रकट कराया था सुखमञ्जस

इत्यादि के आधार पर परन्तु देखो, उसमें जाना हमारे लिए शोभा नहीं देता। वाक्य केवल यह है कि यह कहा जा सकता है कि महाराज भागीरथ इस गंगा को पर्वतों से मुनिवरों! देखो, इस महान पृथ्वी मण्डल पर ले आये। लाने का अभिप्राय क्या था, कि यह संसार सुखद बनें, मेरा राष्ट्र सुखद बने क्योंकि वह जहाँ जहाँ शङ्ख की ध्वनि को करते चले आएं, जहाँ जहाँ अपनी प्रतिभा को लेते चले आये, वहीं गंगा का प्रवाह, पृथ्वी मण्डल पर आता रहा है। मुझे कुछ ऐसा स्मरण है बेटा! जब हमारे यहां राजा सगर की परम्पराओं में ही राजा सगर के साठ हजार पुत्र कहलाए गएं हैं। पुत्र क्या उनके यहाँ साठ हजार सेना का समूह रहता था, वह सब उनके पुत्र के तुल्य था। उनको अभिमान की प्रतिभा आ गई थी। उन्होंने पृथ्वी में गढे बनाएं, प्रधांगगिरि किया, निर्माण किया, नाना निर्माण करने के पश्चात वह महाराजा सुखमञ्जस ने भी वही कार्य किया। मानो इसी प्रकार और भी राजा हुए जैसे सुखमञ्जस के पुत्र रेणुकान्त राजा हुए उन्होंने भी यही किया। रेणुकान्त राजा के पुत्र शोभिन नाम के राजा हुए वह भी यही कार्य करता था। सुगनात नाम के राजा थे परन्तु वह भी यही करते थे। इसी प्रकार यह प्रायः गंगा को पर्वतों से, पृथ्वी पर लाने का नाना प्रयास करते रहे। प्रयास करने का परिणाम यह हुआ कि वह कुछ काल के पश्चात मानो सातवीं प्रणाली में महाराजा सगर जो सौनात नाम के राजा के पुत्र कहलाए जाते थे परन्तु देखो, वह उन राजाओं की परम्पराओं में ऐसा प्रायः प्रयास होता रहा अन्त में राजा सगर को उसका श्रेय प्राप्त हुआ। श्रेय प्राप्त होते हुए, उन्हें गंगा को पृथ्वी पर लाने का श्रेय प्राप्त हो गया क्योंकि वह संसार को जलमय, आनन्दवत में बनाना यह राजाओं का कर्तव्य होता है।

तो मेरे प्यारे ऋषिवर! मैं अब इन वाक्यों को भी विराम देने जा रहा हूँ। अब मेरे प्यारे महानन्द जी! अपने कुछ सूक्ष्म से विचार व्यक्त कर सकेंगे। समय तो इतना नहीं है, जो मेरे प्यारे महानन्द जी! अपनी कुछ विवेचना कर सकें परन्तु चलो कुछ सूक्ष्म समय प्रदान किया जा रहा है।

पूज्य महानन्द जीः ओ३म् यम रथाः यम गताः यौ शिवं मना चरयच्चतं ग्राभं देवो स्वरयी गतामानं ब्रह्मा। मेरे पूज्यनीय गुरुदेव! ऋषि मण्डल! भद्र समाज! मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने यह अमूल्य समय प्रदान किया। जिस समय में मेरे पूज्यपाद गुरुदेव का प्रवाह चल रहा था विचारों का, और शिव सङ्कल्प के सम्बन्ध में भी, इनका विचार विनिमय हो रहा था। मुझे इस सम्बन्ध में कोई विशेष चर्चा नहीं करनी है। केवल विवेचना यही करनी है एकादशो शिव सङ्कल्प प्रव्हे आज का वह पुनीत और उज्ज्वल दिवस है जिसको हमारे यहाँ शिवरात्रि कहा जाता है। शिव रात्रि की प्रायः पूज्यनीय गुरुदेव ने सभी वार्ता प्रकट कर दी है। वैज्ञानिक रूप भी हमारे समक्ष नियुक्त किया है और व्यावहारिक रूप भी हमारे समक्ष नियुक्त किया है। परन्तु जहाँ मैं यह उच्चारण करने जा रहा हूँ कि हमारे यहाँ शिवरात्रि कहते किसे हैं? इसको शिव रात्रि क्यों कहा जाता है? ऐसा भी हमारे यहां पर्व माना गया है, इसको शिवरात्रि क्यों कहा गया है महाराज जो शिव थे, उन्होंने राष्ट्र को अपनाया राष्ट्र को अपनाते समय उसी दिवस एकादशी का दिवस था। इसीलिए राजा ने अपने राष्ट्र में मानो देखो, एकादशी व्रत का पालन कराया था। वास्तव में यह वाक्य परम्परा से ही चला आ रहा था, परन्तु यह वाक् कोई नवीन नहीं था। राजा के लिए एक शुभ अवसर और भी प्राप्त हो गया। इसलिए मानो देखो, मानवीय समाज में हम यह वाक्य भी उच्चारण करने के लिए तत्पर रहते हैं, कि वास्तव में जो शिव सङ्कल्प है, वही मानव का जीवन है, वही राष्ट्र का जीवन है। महाराजा शिव ने अपने राष्ट्र में सङ्कल्प बनाया कि मेरे राष्ट्र में इतने ऊँचे विचारों वाली प्रजा होनी चाहिए, जैसे कैलाश पर्वत होता है। कैलाश पर्वत जितना विशाल है ऐसे ही मानव के विचारों में भी विशालवाद होना चाहिए। उसी विशालवाद से राष्ट्र और समाज दोनों ही उन्नत बना करते हैं। जहाँ मैं यह वाक्य उच्चारण करने जा रहा हूँ क्या मानो देखो, आज की जो शिवरात्रि है वह बड़ी ही महान शोभनीय होती है, परन्तु आज का जो मानव है वह जहाँ शिव रात्रि का व्रत धारण करता है इन्द्रियों पर

संयम नहीं रह पाता है। जहाँ इन्द्रियों पर संयम नहीं रह पाता वहाँ शिवरात्रि उसके लिए और भी हानिकारक हो जाती हैं। हानिवत हो जाती है। हमें विचारना है कि वास्तव में हम शिवरात्रि को अपनाना चाहते हैं, परन्तु हम अन्न को भी त्यागना चाहते हैं, अन्न को त्यागने से पूर्व हमें यह विचारना है कि हमें अपने उदर को भी सुन्दर बनाना है। उदर में किसी प्रकार का रुग्ण नहीं होना चाहिए, विषधर नहीं होना चाहिए, जिससे मानव रुग्ण हो करके ऐसे नष्ट हो जाएं, जैसे सायंकाल का सूर्य समाप्त हो जाता है। इसी प्रकार जब मुझे प्राप्त होता है, मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने मुझे यह समय प्रदान किया है। आज का समाज तो एकादशो का व्रत धारण करता है वह केवल रूढ़िवाद से करता है। रूढ़िवाद क्या है? आधुनिक काल में हमारे मस्तिष्कों में सबसे प्रथम वह विचारधारा रहती है कि मैं सनातनी न कहलाऊं, परन्तु देखो, बहुत से इस व्रत को करते हुए इसलिए लज्जित होते हैं क्या, मैं यह कार्य करूंगा, तो सनातनी बन जाऊँगा। सनातनियों के मस्तिष्क में यह विचारधारा रहती है कि यदि मैं व्रत नहीं करूंगा तो कोई मुझे आर्य व्रत कहेगा काई आर्य समाजी कहेगा। इस प्रकार की विचारधारा उनके मस्तिष्कों में प्रायः आ जाती है। परन्तु देखो, जहाँ सङ्कल्प है, अच्छाइयाँ हैं, वह संसार में मानव के लिए एक ही तुल्य मानी गई है। उसमें किसी प्रकार विवाद किसी भी काल में नहीं होता।

परन्तु जहां एकादशो, शिवरात्रि में जागरूक रहना बहुत अनिवार्य है। ऐसा भी माना गया है परन्तु क्यों माना गया है? क्या एक मानो देखो, इस दिवस में इस कृतिका नक्षत्र में क्योंकि जहां मानो देखो, एकदाशी आती है वहाँ सूर्य की किरणों का सम्बन्ध अधिक होने के नाते ही कृत्तिका और बृद्ध भानु दोनों नक्षत्रों की प्रतिभा रहती है, जो मध्यरात्रि में, उस नक्षत्र की प्रतिभा समाप्त हो जाती है। इस रात्रि में मेरी गर्भवती पुत्रियाँ हैं उनको तो प्रायः जागरूक रहना ही चाहिए, क्योंकि कृत्तिका और वृद्धभानु जो दोनों नक्षत्र हैं इनमें बहुतसी मेरी पुत्रियों के गर्भ में जरायु में किसी प्रकार का दोषारोपण होने की आशङ्का रहती है क्योंकि जो पिण्ड है वही ब्रह्माण्ड

है। इसी प्रकार यह कल्पना शोधनवत की हुई है। जब हम यह विचारने लगते हैं कि वास्तव में प्रायः ऐसा होना चाहिए तो जीवन की प्रतिभाओं में एक महानता की ज्योति जागरूक हो जाती है। तो आज का जो दिवस है वह बड़ा ही महान शोभनीय और विचारणीय सुन्दरवत कहलाया गया है।

तो इसीलिए आज मैं कोई विशेष चर्चा प्रगट करने आया हूँ, आज का समाज तो अन्न को त्यागने को व्रत स्वीकार करता है परन्तु वास्तव में सनातन और समाज में किसी प्रकार का अन्तर्द्वन्द्व नहीं होना चाहिए। यह तो सभी के लिए एक ही तुल्य होता है, जो इन्द्रियों को संयम में बनाना है, सङ्कल्प है, विचारधारा को शोधन करना है, मानो शरीरिक विज्ञान को और इस भौतिक विज्ञान को पान करना है यह सभी के लिए उत्पन्न होता है। जो आज हमारे जीवन में एक महान और सुन्दर वाक्य कहा गया है। जिससे हम यह विचारने लगते हैं कि वास्तव में हमारा जीवन, उन्हीं वाक्यों से सुगठित रहता है, जिन वाक्यों में जीवन की प्रतिभा का, एक नवीन प्रतीक होता है। इससे हमें उसे अपनाने में किसी प्रकार का संकोच नहीं होना चाहिए। यह आज का हमारा वाक्य समाप्त होने जा रहा है। मैंने अपने पूज्यनीय गुरुदेव से याचना की और यह कहा कि भगवन! शिवरात्रि के सम्बन्ध में अपना कुछ प्रकाश दीजिए। मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने शिवरात्रि के पर्व को बहुत ही सुन्दरवत माना है। मैं भी यह स्वीकार करता रहा हूँ कि जो शिवरात्रि है इसमें मानव को जागरूक रहना तो कोई विशेषकर तो नहीं होता परन्तु कुछ होता भी है जो वैज्ञानिक रूपों से इसका सुगठित सम्बन्ध होता है। परन्तु उसमें मानव क्रिया, कर्म और वचन सभी में एक तुल्य रहना चाहिए। जैसे रात्रि में अन्धकार होता है, तो अन्धकार सामान्य होता है, प्रकाश होता है तो प्रकाश भी सामान्य होता है। इसी प्रकार जो शिव का सङ्कल्प है अहा! मानव इसी दिवस अहा! जागरूक रहने का उन्होंने प्रयास किया, क्योंकि यदि वह जागरूक नहीं रहते, तो जीवन की प्रतिभा में प्रकाश नहीं हो सकता था। अब मैं अपने पूज्य गुरुदेव से आज्ञा पाऊंगा। मुझे

केवल इतना ही वाक्य उच्चारण करना था। मेरे वाक्यों का प्रायः यह अभिप्राय रहा है कि मानव को रूढ़िवाद में नहीं जाना चाहिए, केवल एकवाद में रमण करते हुए व्रत को धारण करते चले जाओ। व्रत नाम सङ्कल्प का है। व्रत नाम अच्छाइयों को लाना है, दुरितानि जो है देखो, जो जितने भी दुर्गुण, जितने भी दुर्व्यवहार हैं उनको त्यागना है। यह आज का वाक् मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव से आज्ञा पाऊंगा। अन्न को त्यागना ही कोई व्रत नही कहलाता। केवल क्षुधा को पीड़ित बनाना ही व्रत नहीं कहलाया जाता। व्रत नाम तो सङ्कल्प में रहता है, व्रत तो देखो, मुनष्यों के मस्तिष्कों में, मन में, इन्द्रियों में सब में विराजमान रहता है। उसी सङ्कल्प के आधार पर जीवन एक महानवत को प्राप्त हो जाता है। तो आज का अपना यह वाक्य अब समाप्त। मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव से आज्ञा पाऊंगा। मैंने कुछ सूक्ष्म चर्चायें की हैं। मैं कोई विशेष चर्चा करने नहीं आया हूँ।

पूज्यपाद गरुदेवः मेरे प्यारे ऋषिवर! आज मेरे प्यारे महानन्द जी! ने, शिव के ऊपर अपनी एक विचारधारा प्रकट की कुछ सूक्ष्म से शब्दों में इन्होंने विचार व्यक्त किया कि मानव को रूढ़िवाद में नही जाना क्योंकि रूढ़िवाद मानव को ऐसे गढ़ेले में ले जाता है, ऐसे मार्ग पर ले जाता है, जहाँ उसे प्रकाश नहीं प्राप्त होता। अन्धकार छा जाता है तो इसलिए मेरे प्यारे महानन्द जी! ने बहुत सुन्दर शब्दों में अपने विचार व्यक्त किये। क्षुधा से क्षुधित होना व्रत नहीं है। व्रत नाम अपनी इन्द्रियों को विचारशील बनाना है, इन्द्रियों के ऊपर अनुसन्धान करना है, यह आज के शिव के व्रत का अभिप्राय है। आज का हमारा वाक्य समाप्त। अब वेदों का पाठ होगा।

10. माता दुर्गा एवं अखण्ड ज्योति-720316

जीते रहो! देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भान्ति, कुछ मनोहर वेदमन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेदमन्त्रों का पठन पाठन किया। आज के हमारे इन वाक्यों वैदिक आभाओं में उस परमपिता परमात्मा की महिमा का गुणगान गाया जा रहा था। जब हम उस प्रभु की महिमा उसकी आनन्दमयी ज्योति का चिन्तन करते हैं तो ऐसा प्रतीत होता है कि यह जो सर्व जगत है एक ज्योति के आधार पर स्थित रहने वाला है। क्योंकि संसार में जो चेतना है, वह चेतना उस मेरे प्यारे! प्रभु की है और उसको हमारे यहाँ अखण्ड ज्योति कहा जाता है। क्योंकि ज्योति के रूपों में परणित रहने वाला वह मेरा प्यारा प्रभु है।

अखण्ड ज्योति

बेटा! जब मैं माता के द्वार पर जाने का प्रयास करता हूँ तो ऐसा प्रतीत होता है कि माता के गर्भस्थल में उस अखण्ड रूपमयी ज्योति का प्रकाश हो रहा है, जिस ज्योति के आधार पर माता के गर्भस्थल में जो जरायुज रहता है वह जरायुज उस अखण्डमयी माँ ज्योति के आधार पर स्थित रहने वाला है। आज मैं उस ज्योति के रूपों का वर्णन करने आया हूँ। मेरे प्यारे महानन्द जी! की कुछ प्रेरणा है और कुछ वैदिक पठन पाठन का क्रम भी इसी प्रकार का है। जिससे हमें यह प्रतीत होता है कि हम उस अखण्डमयी माँ ज्योति को जानते चले जाएँ जो अखण्ड रूपों में परणित हो रही है।

बालक के मस्तिष्क का विकास

बेटा! माता के गर्भस्थल की विवेचना कर रहा था। माता के उस ब्रह्मरन्ध्र में सूक्ष्म सूक्ष्म वाहक नाड़ियाँ होती हैं। उन नाड़ियों का सम्बन्ध माता के ब्रह्मरन्ध्र से होता है। ब्रह्मरन्ध्र उसे कहा जाता है जैसे हमारे यहाँ तीन प्रकार के मस्तिष्कों का वर्णन आता रहता है। जैसे मस्तिष्क है, लघु मस्तिष्क है और हृदयकेतु मस्तिष्क है। तीन

प्रकार के मस्तिष्कों का प्रायः वर्णन आता रहता है। माता के इस ब्रह्मरन्ध्र में एक श्वेत्ता नाम की नाड़ी होती है जिस श्वेत्ता नाम की नाड़ी में से लगभग ६४ प्रकार की धाराओं का जन्म होता है। वह जो ६४ धाराएँ हैं। उसमें से ७२ प्रकार की धाराओं का जन्म होता है। उन धाराओं का सम्बन्ध वायुमण्डल से है। द्युलोक तक माना है। उन नाड़ियों का सम्बन्ध पुनः विज्ञान की आभाओं को, परमात्मा की आभाओं को लेकर के बेटा! वह नाड़ियों में नाना मस्तिष्कों में रमण करती हुई वे जो वाहक सुन्दर धाराएँ हैं माता के गर्भस्थल में जब हम जैसे प्यारे पुत्र होते हैं तो मुनिवरों! वह अखण्ड रूप से ज्योति जागरूक हो रही है माता के गर्भस्थल में वे जो सूक्ष्म धाराएं हैं द्युलोक से उस ज्योति को घृत प्राप्त होने लगता है। माता के गर्भस्थल में वह ज्योति जागरूक रहती है।

माता का कर्तव्य है कि अपने ब्रह्मरन्ध्र में उस अखण्ड ज्योति को जागरूक करके गर्भ में स्थित बालक के ब्रह्मरन्ध्र को ज्योतिष्मान करे।

परन्तु विचार यह कि उसी ज्योति के आधार पर बालक का मस्तिष्क बनता है। लघुमस्तिष्क बनता है। हृत मस्तिष्क बनता है। इसके पश्चात ब्रह्मरन्ध्र का निर्माण होता है। तो मुनिवरों! देखो, वह कहाँ से प्राप्त होता है? वह जो ज्योति आनन्दमयी माँ है वह जो ज्योति रूप से अखण्ड रूपों से संसार में परणित हो रही है उस अखण्ड ज्योति को जागरूक करना एक मेरी प्यारी माता का कर्तव्य है। जब माता उस ज्योति का साक्षात्कार कर लेती है तो उस माता का कितना उज्ज्वल सौभाग्य है। वह माता कितना विज्ञान में परणित रहने वाली है। जिस अखण्ड रूप ज्योति को प्राप्त करने वाली मेरी माता का बालक जरायुज में उसी ज्योति में पनपता है, उसी ज्योति में वह ज्योतिष्मान होता रहता है। तो हमारे यहाँ उसको अखण्ड ज्योति कहा गया है।

अखण्ड ज्योति

हे मानव! तेरे इस उदर में जो जठराग्नि अपना कार्य कर रही है जो भी तुम आहार

करते हो, नाना प्रकार के पदार्थों का पान किया जाता है नाना प्रकार के पदार्थों को वही एक अखण्ड ज्योति है, जिसको जठराग्नि अनेक रूपों में परणित कर देती है। जब वह अखण्ड रूपों में मानव के शरीर में परणित रहती है। तो उस ज्योति को पान करने वाला उस ज्योति को अपने में धारण करने वाला एक मानव विज्ञान की रूपरेखा को बनाने लगता है। उस अखण्डमयी ज्योति को अपने में स्वयं धारण करता है।

मेरे प्यारे ऋषिवर! वाक्य क्या कह रहा है? विचार क्या है? कि वह जो मानव के शरीर में अखण्ड ज्योति जागरूक है जब तक मानव जीवित रहता है, अखण्ड ज्योति जागरूक रहती है। जब यह ज्योति अपने विशेषाधिकार को त्याग करके लोक में प्रचलित हो जाती है, उस समय मानव का शरीर ज्योतिष्मान न रहता हुआ शव बन जाता है। उस मानव का अपना कोई अस्तित्व नहीं रहता। तो मेरे प्यारे! विचार क्या है? आज हमें उस अखण्ड ज्योति को जानना चाहिए जो उज्ज्वल रूपों में परणित हो रही है।

नौ रात्र

भूमि कृषक को लालायित करने वाली है। आज मैं उस समय को पुनः से तुम्हें स्मरण करा रहा हूँ। बेटा! आज वह दिवस है जिस दिवस में हमारे पुरातन काल में द्वापर काल में, त्रेता काल में और भी कालों में आज वह पुनः दिवस है जिसको हमारे यहाँ नौ प्रभात कहा गया है। जिस दिवस में कृषक और राजा प्रजा मिलान करते हैं। अपने प्रत्येक गृह में सुगन्धि का सञ्चार किया जाता है। वह जो माँ है उस माँ की पूजा की जाती है जिस माँ ने हमें जन्म दिया है। जो माता हमारे इस मानव शरीर में अखण्ड रूपों से ज्योति प्रदान करने वाली है। उस माँ का पूजन मुनिवरों! देखो, पुरातन काल में बहुत समय हुआ।

सङ्कल्प, अनुष्ठान, योगाभ्यास

मुनिवरों! राजाओं के यहाँ जब अनुष्ठान होते थे इसको एक शब्द में अनुष्ठान कहते

हैं। अनुष्ठान का अभिप्राय सङ्कल्प है। इस सङ्कल्प में जो पृथ्वी की गति है वह धीमी रहती है सूर्य की गति कुछ ऊर्ध्व होती है। हमारे यहाँ ऋषि मुनियों ने इसको नौ रात्र कहा है। नौरात्र का अभिप्राय है कि इस मानव शरीर में नौ द्वार कहलाए गए हैं। इन नौ द्वारों को संयम में करते हुए इसमें योगीजन योगाभ्यास करते हैं। इन नौ द्वारों को संयम के द्वारा एक सूत्र में लाने का प्रयास करते हैं। अष्टचक्रा नवद्वारा, यह वह नगरी है जिसको देखो, महाराजा मनु ने इनके अनुकरण में ही अयोध्या का निर्माण किया। इस मानव शरीर से ही जगत का निर्माण होता रहा है।

नौ द्वार

तो बेटा! हमें विचारना है कि आज हमें नौ द्वारों में उच्चता को लाना है। क्योंकि उनमें जो अखण्ड रूपों से ज्योति जागरूक हो रही है उस ज्योति को पुनः से जागरूक करना है। इसको हमारे यहाँ यज्ञ ही कहा गया है। साधारण पुरुष नौ रूपों में माँ दुर्गा की उपासना करते हुए इस जो दुर्गम ब्रह्मव्यापक प्रवे, ऋषि कहते हैं जो दुर्गुणों को नष्ट करने वाली है। दुर्गुणों को कौन नष्ट करती है। हमारे यहाँ दुर्गा प्रवः अस्तम् दुर्गा का बड़ा सुन्दर वर्णन आता है। वर्णन क्या आता है कि दुर्गा प्रवे इसकी उपासना करो। उपासना का अभिप्राय यह है माँ प्रकृति की उपासना करो जिस प्रकृति के गर्भ में सर्वत्र वनस्पतियाँ लालायित हो रही हैं मानव का और प्रत्येक प्राणियों का अन्न, पृथ्वी के गर्भ में परणित हो रहा है आज इस प्रकृति की हम उपासना करने वाले बने। क्योंकि यह प्रकृति हमारी माँ है, वसुन्धरा है। इस वसुन्धरा को जानने का प्रयास करें। मेरे प्यारे ऋषिवर! वसुन्धरा इसीलिए कहते हैं कि इसके गर्भ में प्रत्येक प्राणी वशीभूत हो रहा है।

दुर्गा माता

तो आज मैं उच्चारण यह करता चला जाऊँ। तुम्हारे समीप हमारे ऋषि मुनियों ने इसको अनुष्ठान माना है। अनुष्ठान का अभिप्राय यह है कि इसमें यज्ञ होते हैं। यज्ञ का नाम ही अनुष्ठान कहा जाता है। मुनिवरों! अनुष्ठान का अभिप्राय यह कि व्रती

रहना। व्रती क्या है? सङ्कल्प सहित रहना, अपने नौ द्वारों को संयम में लाना। ज्ञानेन्द्रिय कर्म इन्द्रियों से हम किसी भी द्वार से किसी प्रकार का अपराध न करें, ऐसा सङ्कल्प बनाने वाला ऐसा नौ व्रत धारण करने वाला ही माँ की उपासना कर सकता है।

यज्ञ के अनुष्ठान

हे माँ! तू कितनी भोली है, तू वास्तव में ज्योति है, तू जागरूक हो रही है संसार को चेतनित बनाने के लिए माँ! तेरा स्वरूप मेरे समीप आता रहता है। विचार क्या कि आज हम उस यज्ञरूप ज्योति को अपनाते चले जाएँ। आचार्यजन कहते हैं कि मानव नाना प्रकार के भोग विलास करता रहता है, भोग विलासों में लीन रहता है परन्तु बिना यज्ञ के संसार के भोग विलासों में कोई सार प्रतीत नहीं होता। तो आचार्य कहते हैं कि यह अनुष्ठान नाम एक यज्ञ जैसे अनुकृति यज्ञ है, नौ दुर्गा यज्ञ है, विष्णु यज्ञ है, ब्रह्म यज्ञ है, शिव यज्ञ है, ऋषि यज्ञ है, कन्या यज्ञ है और वृष्टि यज्ञ है, पुत्रेष्टि यज्ञ है, सोमभूमि यज्ञ है नाना प्रकार के यज्ञों का बेटा! प्रायः वर्णन आता रहता है।

देवर्षि नारद

मुझे स्मरण है, मैंने बहुत पूर्व काल में अपनी विवेचना प्रकट करते हुए कहा था। मुझे वह समय भली भान्ति स्मरण आने लगता है। जब महात्मा ध्रुव इन्हीं नौ द्वारों की उपासना करता हुआ इसी माँ प्रकृति की उपासना करने वाला वैज्ञानिक अपनी आभा को लेकर के जब चलता है तो उसका विज्ञान, उसकी आभा प्रकृति के गर्भ में ओत प्रोत होने लगती है। मुझे स्मरण आता है जब देवर्षि नारद मुनि के यहाँ महात्मा ध्रुव जिन्होंने षोडश वर्ष की आयु में ही ध्रुवमण्डल की यन्त्रों द्वारा यात्रा की थी। बेटा! मुझे वह समय आज भी स्मरण आ रहा है जिस समय को हुए लगभग करोड़ों वर्षों हो चुके हैं। करोड़ों नहीं तो कुछ सूक्ष्म होगा। परन्तु विचार हमारा यह कि आज हम इन वाक्यों को पुनः से स्मरण करने वाले बनें।

महात्मा ध्रुव

देवर्षि नारद के यहाँ अनुष्ठान होता था। वहीं महात्मा ध्रुव ने अनुष्ठान किया और माँ दुर्गे की उपासना की। दुर्गे उसे कहा जाता है जो दुर्गुणों को नष्ट करने वाली है। जो अनुष्ठान करता है माता उसके दुर्गुणों को नष्ट कर देती है। नष्ट किस प्रकार होते हैं? देखो, जब माँ दुर्गा की उपासना दुर्गम् प्रवे अकृतम् जो दुर्गुणों को हनन करने वाली हो दुर्गुण मानव के उस काल में हनन होते हैं जब मानव अपने को उस माता को समर्पित कर देता है। संसार में जो समर्पित नहीं कर सकता वह मानव संसार में योग्य नहीं बन सकता। बेटा! माता अपने गर्भस्थल से बालक को जन्म देती है, पुत्र को जन्म देती है, वह माता बनती है उस काल में जब अपने को समर्पित कर देती है। इसी प्रकार एक योगी है, आचार्य के कुल में जाता है वह अपने को जब समर्पित कर देता है, अपनेपन को त्याग देता है, उस समय वह आचार्य और ऋषि बन जाता है। मुझे वह समय स्मरण आता रहता है जब महात्मा ध्रुव ने अनुष्ठान करके अपने को समर्पित कर दिया माँ दुर्गा को माँ प्रकृति को। इन्हीं प्रकृति के गर्भ में से नाना प्रकार के परमाणु, अणु, महा अणु त्रसरेणु, पंचषेणु नाना प्रकार के अणुओं को एकत्रित करने वाले महात्मा ध्रुव ने ध्रुवमण्डल की यात्रा करना प्रारम्भ कर दिया। मुझे स्मरण है वह कितना बड़ा विज्ञान था। देवर्षि नारद की कितनी विशाल देन थी। माता को अपने समर्पित करने के पश्चात मानव को कितनी शक्ति प्रदान की जाती है। बेटा! वह ध्रुवमण्डल कितना विशाल मण्डल है जो पृथ्वी से अरबों, खरबों योजन दूरी पर है।

संयम, अनुष्ठान, यज्ञ

विचार यह है कि हमारे यहाँ विज्ञान वेत्ताओं ने कहा है कि हमारा यह जो पृथ्वी मण्डल है यह जितना प्रबल है ऐसी ऐसी ३० लाख पृथ्वियाँ सूर्य मण्डल में समाहित हो जाती हैं। जैसा सूर्यमण्डल है, ऐसे ऐसे एक सहस्त्र सूर्य बृहस्पति में समाहित हो जाते हैं। जैसा बृहस्पति है ऐसे ऐसे एक सहस्त्र बृहस्पति आरुणि मण्डल में

समाहित हो जाते हैं। और जैसा आरुणि मण्डल है ऐसे ऐसे एक सहस्त्र आरुणि मण्डल ध्रुवमण्डल में समाहित हो जाते हैं। इतना विशाल मण्डल जहाँ बेटा! माता के अनुष्ठान करने मात्र से वह उस माता को अपने को समर्पित करता हुआ इस पृथ्वी के गर्भ में वसुन्धरा प्रकृति के गर्भ में जो नाना प्रकार के सूक्ष्म सूक्ष्म परमाणु हैं उन्हें जानना प्रारम्भ किया।

अनुष्ठान

अनुष्ठान नाम एक व्रती का है, जो सङ्कल्प धारणा करने वाला हो। सङ्कल्पवादी कौन होता है? जो श्रद्धालु हो। श्रद्धालु कौन होता है? जिसका हृदय पवित्र होता है। बेटा! जब तक हृदय पवित्र नहीं होता, मानव में श्रद्धा नहीं होती वह श्रद्धा वाला व्रती नहीं बन सकता। श्रद्धा से ही सङ्कल्प धारणा किया जाता है। हमारा विचार केवल यह है कि आज मानव को यह विचारना है कि हम उस अखण्ड ज्योति को जानना चाहते हैं जो मानव के हृदय में प्रदीप्त रहने वाली है। वह अखण्ड ज्योति है जो सूर्य लोक में रमणा कर रही है। सूर्य में ही अखण्ड रूप में परिणत हो रही हैं वही अखण्ड ज्योति है जो प्रातः काल उदय होती है, सायंकाल को अस्त हो जाती है। और भी गम्भीरता में जाओ, तो सूर्य कदापि भी अस्त नहीं होता। देखो, यह ज्योति सदैव जागरूक रहती है। यह पृथ्वी का चक्र है चक्र के आङ्गन में पृथ्वी आती रहती है। दिवस और रात्रि बनते रहते हैं। परन्तु देखो, वह सूर्य में ज्योति है, उसका विनाश नहीं होता, उसका अभाव नहीं होता, अव अखण्ड रूपों में जागरूक रहने वाली है। मुनिवरों! मेरे प्यारे महानन्द जी! ने ऐसा मुझे कई काल में प्रकट कराते हुए कहा हैं परन्तु उस उज्ज्वल स्वरूप को जब मैं वर्णन करने लगता हूँ तो ऐसा प्रतीत होता है कि आज हम उस अखण्ड माँ की ज्योति को जानने के लिए सदैव उत्सुक रहते हैं। जिस ज्योति को जानते हुए यह मानव अपनेपन में विचारने लगता है, अनुभव करने लगता है कि वह ज्योति तो मेरे हृदय में प्रदीप्त हो रही है। आज मैं उस ज्योति को लोक की ज्योति को, हृदय की ज्योति को दोनों का

समन्वय करना चाहता हूँ। तो बेटा! वह कितना विशाल विज्ञान में परणित हो जाता है।

महाराजा अश्वपति

तो मुनिवरों! आज का हमारा यह विचार क्या कह रहा है? वैदिक विचार, वैदिक सम्पदा हमें बारम्बार उपासक बनने के लिए प्रेरणा दे रही है। हमें यह आदेश प्राप्त हो रहा है कि हम उस माँ की गोद में जाने का प्रयास करें। हे मेरे प्यारे ऋषिवर! आज मैं अधिक चर्चा प्रकट करने नहीं आया हूँ। पुरातन काल में महाराजा अश्वपति के यहाँ यह ज्योति थी। लगभग उनकी २८५ वर्ष की अवस्था थी और लगभग १२ वर्ष की अवस्था में उनका नाम अप्रवे उपनयन संस्कार हुआ। उसी संस्कार में आचार्यों ने अखण्ड ज्योति को जागरूक किया। वह ज्योति लगभग जीवन पर्यन्त अखण्ड रूपों में प्रदीप्त रही। वह यज्ञमय ज्योति थी। यज्ञ का अभिप्राय है शुभ कर्म। मुनिवरों! देखो, वह जो यज्ञमयी ज्योति है जिसमें सुगन्ध उत्पन्न होती हो, दुर्गन्ध को निगलने वाली हो, आज वह जो अखण्ड ज्योति है वह प्रत्येक मानव के गृह में प्रदीप्त रहनी चाहिए। मुझे वह समय भली भान्ति स्मरण है जब वहाँ ज्योति जागरूक रहती थी।

अखण्ड ज्योति

अहा! मैं उस वाक्य को पुनरुक्ति देने नहीं आया हूँ। विचार केवल यह है कि आज हमें ज्योति के ऊपर विचार करना चाहिए। वह जो हृदय में ज्योति जागरूक हो रही है, वह जो सूर्य में ज्योति है, चन्द्रमा में ज्योति है, पृथ्वी में ज्योति है, आपो में ज्योति है, वायु में ज्योति है और अन्तरिक्ष में जो ज्योति है। प्रदीप्त हो रही है, जो ज्योति द्युलोक को चेतनित बनाने वाली है बेटा! उस ज्योति को प्रत्येक मानव को जानना चाहिए वह ज्योति है क्या? वह ज्योति एक वह चेतना है। जिसको उस अखण्ड ज्योति का प्रकाश प्राप्त हो जाता है। वह अखण्ड ज्योतिमय बन जाता है। मैंने बहुत पूर्व काल में कहा था वह ज्योति मानव के ब्रह्मरन्ध्र में प्रदीप्त रहने वाली

है। वह ज्योति हृदय में हृदय लिंगमयी ज्योति कहलाती है। जिस ज्योति का स्वरूप सर्व ब्रह्माण्ड में पिण्डाकार प्रतीत होता रहता है। मेरे प्यारे ऋषिवर! हमारे ऋषि मुनियों ने कहा है कि जब मानव समाधिस्थ होने लगता है ब्रह्मचर्य, मानव जब ब्रह्म को चरता है तो उसी ज्योति के प्रकाश में चलता है। जैसे भुजंगम् ब्रह्मः जैसे प्रवाहित होता है, सर्प होता है वह मणि के प्रकाश में चलता है, अपने उदर की पूर्ति करता है इसी प्रकार जो योगीजन ज्योति के प्रकाश को जानते हैं, जो ब्रह्मचारी होते हैं, वह उस ज्योति के प्रकाश में ब्रह्म को चरते हैं।

ब्रह्मरन्ध्र

वे कैसे चरते हैं? उस ज्योति को उस समय जागरूक करते हैं, ब्रह्मचर्य की ऊर्ध्व गति बन जाती है। जैसे ज्योति की ऊर्ध्व गति होती है। जब ऊर्ध्व गति बन जाती है तो मानव का जो ब्रह्मरन्ध्र है, ब्रह्मरन्ध्र के पिछले भाग में जैसे पीपल का वृक्ष होता है और उसका जो पत्र होता है उसका जो अर्द्ध भाग होता है उसके समान अष्टकोण रूप एक स्थल होता है उसमें ब्रह्मचर्य की ऊर्ध्व गति हो करके वह ज्योति प्रकाशमयी बन जाती है। उसमें से सुकेत, शृङ्गी, घ्राणकेतु, तीन नाड़ियों का जन्म होता है। एक एक नाड़ी में से ७२ ७२ धाराओं का जन्म होता है। वे धाराएं वायुमण्डल में प्रसारित हो जाती हैं। अब मुनिवरों! देखो, जो योगी उस स्थल को पीपल के पत्र के अर्द्ध भाग का जो स्थल है उसमें जब ब्रह्मचर्य की गति उर्ध्व होकर के सुकेता नाम की नाड़ी ऊर्ध्व गति को जब प्राप्त होने लगती है तो वह योगी उस अखण्ड ज्योति के प्रकाश में सर्वत्र ब्रह्माण्ड का दिग्दर्शन कर लेता है।

तो मेरे प्यारे ऋषिवर! मैं अधिक वाक्य प्रकट करने नहीं आया हूँ। जब मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव के द्वार पर विराजमान होता था तो इस ज्योति के सम्बन्ध में बहुत विचार विनिमय होता रहा। विचार क्या कि आज यह जो लोक में अग्नि है इस अग्नि को प्रकाश में लाने का प्रयास करते हुए अपने हृदय में इसका आचरण करने वाले बनें। आज मैं ज्योति का संक्षिप्त परिचय देने आया हूँ। विचार यह है कि आज

हमें इस अखण्ड ज्योति को जानने को प्रयास करना चाहिए। जिस ज्योति के लिए हमारे ऋषि मुनि, आचार्यजनों का सदा परम्परागतों से ही, जानने का प्रयास होता रहा है और उसे जानना चाहिए क्योंकि उसको जानने वाला जो मानव होता है वह कदापि संसार में अपनी आभा को नहीं त्यागता।

मेरे प्यारे ऋषिवर! आज हमारा विचार यह क्या कह रहा है? आज हमें इस अखण्ड ज्योति के अनुष्ठान के साथ में ज्योति की प्राप्ति का प्रयास करें। अहा! अनुष्ठान योगीजन करते हैं। अनुष्ठान जब करते हैं तो अपने जीवन को महान बनाने का प्रयास करते हैं। अनुष्ठान का अभिप्राय है व्रती रहना। व्रती का अभिप्राय है अपने नौ द्वारो को संयमित बनाना। नौ द्वारों में अशुद्धता का भरण न करना। महत्ता का भरण करना नौ द्वारों को जानना है और जो मानव नौ द्वारों को जानता है, वह प्रभु की आभा का दिग्दर्शन करता है। मेरे प्यारे ऋषिवर! वाक्य क्या है? मुझे वह समय भली भान्ति स्मरण आता रहता है, जब वैज्ञानिकजन इसी ज्योति के प्रकाश में नाना प्रकार के लोक लोकान्तरों में जाने का प्रयास करते थे। हमारे यहाँ आचार्यों को कहा है, अनुष्ठान वेत्ताओं को कहा है हे अनुष्ठानवेत्ताओं! तुम तो यज्ञमान हो, तुम्हारी गति इतनी ऊर्ध्व होनी चाहिए, इतनी व्यापक होनी चाहिए, इतनी विस्तृत होनी चाहिए कि पृथ्वी से लेकर के सूर्य लोकों में भ्रमण करने वाले बनो। ऐसा हमारे यहाँ ऋषि मुनि कहते हैं। आचार्यों ने कहा है कि आज हम उस अखण्ड ज्योति को जानने का प्रयास करते रहें।

जो अखण्ड ज्योति माता के गर्भ में क्या मानव की जठराग्नि में क्या, सूर्य में क्या, चन्द्रमा में क्या, पृथ्वी में क्या नाना प्रकार के लोक लोकान्तरो में वह एक अखण्ड ज्योति जागरूक हो रही है। उसी ज्योति का नाम ब्रह्म कहा गया है। उसी ज्योति के प्रकाश में प्रत्येक प्राणी अपना कार्य कर रहा है। आज के वाक्य उच्चारण करने का अभिप्राय तुमने जान लिया होगा। आज के वाक्य उच्चारण करने का अभिप्राय यह कि हम अखण्ड ज्योति को जानें। देखो, अपना अनुष्ठान करते हुए उस प्रभु की

हमें प्राप्ति होगी। उसी काल में जब कि विज्ञान का स्वरूप हमारे समीप होगा। क्योंकि विज्ञान वेत्ताओं के समीप आने वाले प्राणी के लिए यह ब्रह्म दूर नहीं होता। वह ब्रह्म में समाहित रहता है। ब्रह्म उसमें समाहित रहता है। उनको द्वितीय भाव नहीं होता। वे परमात्मा के गर्भ में क्रीड़ा करते हुए आनन्द और मोक्ष को प्राप्त हो जाते हैं।

आज का वाक् हमारा अब समाप्त होने जा रहा है। आज के वाक् उच्चारण करने का अभिप्राय हमारा यह कि आज हम अनुष्ठान करें, जैसा महात्मा ध्रुव ने किया था। देवर्षि नारद मुनि के यहाँ उनकी कितनी ऊँची उड़ान रही है। क्योंकि यह जो सर्व संसार है यह उस माँ का गर्भाशय है। उसी के गर्भ में हम सर्व प्राणी वशीभूत रहते हैं। उस माँ के गर्भ में हम विराजमान हैं। उसको जानना हमारा कर्तव्य है। यह है आज का वाक्। अब मुझे समय मिलेगा तो मैं शेष चर्चाएं कल प्रकट करूंगा। वाक् उच्चारण करने का अभिप्राय यह कि मैंने कुछ बिखरे हुए पुष्पों को एकत्रित किया है। यहाँ एकत्रित करने का अभिप्राय यह कि कल मुझे समय मिलेगा मैं इस ज्योति के सम्बन्ध में अपनी विवेचना प्रकट करूंगा। मेरे प्यारे महानन्द जी! के दो प्रश्न हैं, उन प्रश्नों का उत्तर भी हम कल दे सकेंगे। आज का वाक् यह कि हम प्रभु की उपासना करते हुए इस संसार सागर से पार होते रहें। क्योंकि वह जो अखण्डमयी ज्योति संसार को प्रकाशमान बना रही है, उस ज्योति को जानने का प्रयास करते हुए इस संसार सागर से पार होने का प्रयास करें। यह है आज का वाक् अब मुझे समय मिलेगा मैं शेष चर्चाएं कल प्रकट करूंगा। अब वेदों का पाठ होगा इसके पश्चात वार्ता समाप्त।

पूज्य महानन्द जीः गुरु जी वाक् तो बहुत ही प्रिय लगा परन्तु समय बड़ा सूक्ष्म।

पूज्यपाद गुरुदेवः हास्य...बेटा! समय मिलेगा तो शेष चर्चाएं कल प्रकट करूंगा अब वेद पाठ होगा।

पूज्य महानन्द जीः अच्छा भगवान! आज्ञा।

पूज्यपाद गुरुदेवः आनन्द मङ्गलम् शान्तिः।

11. राष्ट्र की उन्नति का आधार-730507

जीते रहो! देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भान्ति, कुछ मनोहर वेदमन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेद मन्त्रों का पठन पाठन किया, हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, उस, मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है। जिस पवित्र वेदवाणी में, उस परमपिता परमात्मा का आभामयी जगत माना गया है। जब हम अपने में ये दृष्टिपात करते हैं, कि वह जो मेरा प्यारा प्रभु है, उसका ही ये जगत एक आभा से युक्त बनकर के रहता है। क्योंकि उसी की आभा हमें दृष्टिपात आती है। मेरे प्यारे महानन्द जी! ने बहुत पुरातन काल में नाना वार्ताएं प्रकट कीं। आज मैं उन विचारों को तो व्यक्त नहीं कर पाऊँगा, परन्तु आज मैं कुछ यज्ञ के सम्बन्ध मेंयज्ञ के सम्बन्ध में तो नित्य प्रति ही उच्चारण किया जाता है। हमारे यहाँ यज्ञ रूप, ये जगत है। आज हम जब यज्ञ कर्म करने के लिए तत्पर होते हैं। तो उसके साथ में हमारी मनोनीत भावना होती है, मनोनीत एक विचार होता है। और वह जो संकलन मानव को उत्पन्न होता है उसी संकलन के साथ में मानव की आत्मिक जो प्रतिभा है, वह विचारों के साथ में निहित रहती है। जिन विचारों का बाह्य जगत बनता है, उन विचारों के बाह्य जगत से हम संसार की सुन्दर क्रियाओं में परणित होते हैं।

सृष्टि का मूल

मानो ये जो क्रिया है, वही हमारा कर्मकाण्ड है। वही उस परमात्मा की एक आभा है, जिसको हमें प्रायः विचारना है। जहाँ मैं ये कहा करता हूँ कि यज्ञ हमारे यहाँ देव पूजा मानी जाती हैदेव पूजा का अभिप्रायः देवों को जो हम हवि प्रदान कर रहे हैं। देवताओं को जो हम महत्व देते हैं, तो उस हवि से हमारा अन्तरात्मा प्रसन्न होता है। क्योंकि हमारा जो ये जीवन है, ये देवताओं से सम्बन्धित है। अथवा देवताओं से हम प्रेरणा अथवा सहायता प्राप्त करते हैं और वे देवता जितने भी प्रसन्न होते हैं, जितने भी तृप्त रहते हैं, उतना ही हमारा हृदय, हमारी मानवता नम्र बनकर

के देवताओं की पूजा में संलग्न होते हैं, परन्तु यहाँ प्रत्येक मानव के नाना प्रकार के विचार रहते हैं।

मैं तो परम्परागतों से ये ही उच्चारण करता चला आया हूँ कि हम देवताओं की पूजा करें। देवता हमें उस मार्ग पर ले जाते हैं, जिस मार्ग पर जाने के पश्चात मानव की आन्तरिक ध्वनि पवित्र होती है। मेरे प्यारे ऋषिवर! हम जब आत्मा के सम्बन्ध में अथवा देवताओं के सम्बन्ध में विचार करने लगे, कि हमारा जो मानव शरीर है, इस मानव शरीर में देवता कार्य कर रहे हैं। मानव अग्नि से प्रकाश पाता है। किस से अमृत को पान करता है, वायु से क्रिया का अस्वात होता है। अग्नि से तेज प्राप्त होता है। पृथ्वी से मुनिवरों! देखो, हमें सुगन्ध प्राप्त होती है। अन्तरिक्ष से मुनिवरों! देखो, हमें भरणता की, अवकाशकृति प्राप्त होती है। तो हमें इन सब वाक्यों पर विचार विनिमय करना है कि याग से हम पञ्च महाभौतिक जो जगत है, इस पञ्च महाभूतों को श्रेष्ठ बनाना चाहते हैं। और ये पञ्च महाभूत ही सृष्टि का मूल कारण है, ये ही मानव के शरीर की रचना का मूल कारण है। मेरे प्यारे! इसीलिए हमारे यहाँ ये सर्वत्र जगत एक प्रकार का यज्ञमयी माना गया है और इस यज्ञ को ही हमारे यहाँ, देवपूजा कहते हैं, देवताओं को तृप्त करना है।

आध्यात्मिकता के लिए याग

अब हमारे देवता कौन हैं? बेटा! जो बुद्धमान, बह्मवेत्ता और जड़वत हैं, जड़ से हमें नाना प्रकार की वस्तुएँ प्राप्त होती हैं। तो हम जब एक, एक वस्तु पर अपना विचार विनिमय करते हैं तो हमें प्रायः ऐसा प्रतीत होने लगता है, ऐसा अनुभव होने लगता है कि वास्तव में हम परमपिता परमात्मा की आभा में युक्त हैं। परमात्मा की ही प्रतिभा में हम अपने को दृष्टिपात करे, उसी में हमारा जीवन, उसी में हमारा याग है। मैंने कई काल में प्रकट करते हुए कहा कि संसार में नाना प्रकार के याग होते हैं परन्तु उन यागों में भिन्न भिन्न प्रकार की प्रक्रियाएं होती हैं।

आज मैं अधिक चर्चा नहीं करूंगा, क्योंकि मेरे प्यारे महानन्द जी! अपना कुछ

विचार व्यक्त करेंगे। जैसा इससे पूर्व शब्दों में हम उच्चारण कर आए हैं। केवल आज का विचार तो हमारा ये है, कि हम संसार में याज्ञिक कर्म करने वाले बने, क्योंकि देवपूजा से हम आध्यात्मिक मार्ग को प्राप्त कर सकते हैं। परन्तु जैसे हम बाह्य जगत को रचाते हैं, यज्ञमान होता है, होताजन होते हैं, अध्वर्यु होता है, उद्गाता होता है, मानो ब्रह्मा होता है। ये यज्ञ का एक स्वरूप बन जाता है। इसी प्रकार जब हम आध्यात्मिक याग करते हैं, आध्यात्मिक बेला में जाते हैं, आध्यात्मिकता को जागरूक करना चाहते हैं तो उस समय हमें होता भी चुनने होंगे, हमें अध्वर्यु, उद्गाता भी हमारे समीप होने चाहिए। मुनिवरों! देखो, हम प्रत्येक अङ्ग को अपना अध्वर्यु और अपना यज्ञमान स्वीकार करते रहे और जब हम इस प्रकार की प्रतिभा में रमण करते हैं, तो बेटा! हमें ये प्रतीत होता है कि वास्तव में जितना भी शुभ कर्म कर रहे हैं वो सर्वत्र याग कहलाया गया है। उस याग में हमें वास्तव में परणित होना है। याग का अभिप्राय यागोंऽपि यदृत प्रवाहरुत्तम्, कि ये संसार रूप जो जगत है इसमें एक प्रकार का याग हो रहा है और ये याग होता हुआ, उसी याग में मानो परणित है, उसी से ये कटिबद्ध है। इसीलिए अपने जीवन को, याग में सहकारिता, परणित करते हुए मानो एक सुन्दर याग के हम पथिक बने, हम अपने जीवन को आभा से युक्त बनाए। आज का विचार अब मैं समाप्त कर रहा हूँ, अब मेरे प्यारे महानन्द जी! कुछ अपना वाक प्रकट करें।

पूज्य महानन्द जीः ओ३म् यज्ञाः रथं मनु वाचन्नमाः वस्तकृते। विप्रजा यजूँ गायन्ताः मनो। मेरे पूज्यपाद गुरुदेव! मेरे भद्र ऋषि मण्डल! और ऋषि समाज! मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने, याग की चर्चा प्रकट करते हुए मुझे भी कुछ समय प्रदान किया, कि तुम भी कोई वाक प्रकट करो। परन्तु आज मैं उपस्थित हूँ, उद्यत हूँ और अपने विचारों को कुछ सूक्ष्मता से प्रकट करेंगे। क्योंकि मेरे पूज्यपाद गुरुदेव अभी अभी याग के सम्बन्ध में नाना प्रकार की वार्ता प्रकट कर रहे थे। आज मुझे उन यागों के सम्बन्ध में तो विशेष चर्चा प्रगट नहीं करनी है। विचार विनिमय में ये है कि

आज हम याज्ञिक बनते चले जाएँ, जैसा पूज्यपाद गुरुदेव ने अभी अभी प्रगट करते हुए कहा कि हम याग को क्रिया में लाने का प्रयास करें। परन्तु याग की मीमांसा करते हुए, उन्होंने ऐसा कहा है कि ये जो याग है यह यज्ञमान के द्वारा होता है। परन्तु याग का अभिप्राय तो यही, कि जितना भी शुभ और महान कार्य है, उस सर्वत्र का नाम, एक प्रकार का याग माना है। परन्तु पूज्यपाद गुरुदेव ने अभी नाना वार्ताएँ और नाना विचार देते हुए ऐसा कहा है कि सर्वत्र जितने प्राणी मात्र हैं, वे सब यहाँ याग करने के लिए आ पहुँचे हैं। संसार में जितना भी ये जगत है, समाज है, इसमें सर्वत्र एक प्रकार का याग हो रहा है।

कुवृत्तियों से याग की समाप्ति

पुरातन काल में मैंने अपने पूज्यपाद गुरुदेव को निर्णय कराते हुए कहा, वास्तव में गुरुदेव तो सर्वत्र जानते हैं, पुरातन काल में प्रत्येक मानव का जीवन एक प्रकार का याग बनकर के रहता था। याग का अभिप्रायः ये है कि हम संसार की उन कामनाओं में परणित न हो जाएँ, इस संसार के, उन आवेशों में रमण न कर जाएँ, हमारा आत्मबल नष्ट भ्रष्ट न होता रहे। परन्तु मैंने पुरातन काल में कहा था कि मेरी प्यारी माताओं के प्रत्येक अङ्ग को हमारे यहाँ यागरूप माना है। ऋषि कहता है कि संसार में माता का जीवन, उनका प्रत्येक अङ्ग, याग रूप रहता है, याग करते रहते हैं। परन्तु देखो, उनसे जब हम कुवृत्तियों को धारण कर लेते हैं तो उससे हमारी याग की प्रथा समाप्त हो जाती है। परम्परा समाप्त हो जाती है। नाना प्रकार की रूढ़ियों में, आवरणों में, ये मानव समाज ऐसा कटिबद्ध हो गया है कि वे रूढ़ियाँ इस धर्म और माता को याग रूप स्वीकार नहीं करने देते, मुझे स्मरण आता रहता है संसार के उन आचार्यों की चर्चा, जिन्होंने देखो, धर्म को प्रचलित किया। धर्म को प्रवाह रूप देने का प्रयास किया।

सुयोग्य सन्तान

परन्तु आज का विचार, केवल मैं धर्म की मीमांसा करने नहीं जा रहा हूँ। मैं ये

उच्चारण करने जा रहा हूँ कि माताओं के यज्ञ स्वरूप को नष्ट करना, उनको न जान करके, विवेक न होकर के आज हम उनको भोग विलासों का एक साधन बना लेते हैं। परन्तु देखो, वास्तव में ये साधन नहीं है। मुझे तो स्मरण आता रहता है ऋषि मुनियों का जीवन, मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने कई काल में प्रगट करते हुए ये कहा कि जब पति पत्नी की दर्शनों की चर्चाएँ प्रारम्भ होती हैं। तो वे एक प्रकार का याग करते हैं और कहाँ तक का याग करते हैं कि जब माता पिता एकान्त स्थान में, मध्य रात्रि में, जब अन्धकार छाया हुआ हो, उस समय जागरूक रहकर जब दर्शनों की चर्चाएँ, वेद की चर्चा होती हो, उस गृह में रहने वाला जो समाज है, उस गृह में, उस माता से जो पुत्र, पुत्रियाँ उत्पन्न होने वाली हैं, वे भी उन विचारों को व्यक्त करके, माता पिता के विचारों को व्यक्त करके, अपने में धारण करें, तो वे संस्कार बनते चले जाते। तो वह कितना बड़ा याग, कितना विशाल याग है। मानो कैसा विशाल याग है कि वे स्वयं तो विचार विनिमय करते ही हैं परन्तु देखो, वे बालक, बालिका जो उस गृह में उत्पन्न होने वाले हैं वे एक प्रकार के याग का फल है। आह, वे भी माता पिता के संकलन को, उन विचारों को अपने में धारण करने वाले बना करते हैं।

नारी का पूजन

मेरे पूज्यपाद गुरुदेव तो आत्मा की विवेचना करते रहते हैं। मैं आत्मा की विवेचना अधिक नहीं करने आया हूँ। केवल विचार विनिमय यह कि आज हम माताओं के शरीर को याग रूप स्वीकार करें। परन्तु ये याग रूप क्यों नहीं होने दिया। इसका मूल कारण है कि रूढ़ियों में, आवरणों में छाया हुआ ऐसा जगत है कि इसमें ये भी उच्चारण किया जा सकता है, कि इस संसार का क्या बनेगा, इस जगत का क्या बनेगा? आचार्यों ने तो सुन्दर सुन्दर हृदय ग्राही शब्दों का प्रतिपादन किया है। मुझे स्मरण है कोई सम्प्रदाएँ माताओं को एक दृष्टि से स्वीकार कर रहा, दूसरा सम्प्रदाएँ माताओं के अस्तित्व को स्वीकार नहीं कर रहा है। परन्तु यहाँ वेद कहता

हैं माता प्रभां कृतं पूजन्नं ब्रो कृति आस्ताः कि माता पूजनीय होती है, माता का पूजन करो, ऋषि कहते हैं, मनु महाराज ने कहा स्वाति प्रहा कृत्स्यनं वेदां मह कृति अत्युहि देवाः वेद का ऋषि तो बहुत ऊँची ऊँची उड़ान उड़ता है और ये कहता है कि जिस गृह में माता के नेत्रों से अश्रुपात होता है वह गृह नारकीक बन जाता है। परन्तु यहाँ ऋषि मुनियों ने कितनी ऊँची विचारधारा दीं, ये विचारधाराएँ हमें केवल वैदिक साहित्य में प्राप्त होती है। ये वार्ता हमें मानो मोहम्मद से प्राप्त नहीं होती, ये ईसा से प्राप्त नहीं होती, ये बुद्ध से प्राप्त नहीं होती, ये मानो देखो, हमें महावीर से प्राप्त नहीं होती, परन्तु ये सब वार्ताएँ हमें वैदिकता से प्राप्त होती हैं। हमें उन विचारों को प्रायः धारण करना चाहिए, जो आर्ष पोथियाँ हैं। जैसा याज्ञवल्क्य मुनि ने माताओं को सर्वत्रता में एक प्रकार का याग माना है। यहाँ कन्या याग माना है मानो देखो, यहाँ देवीयाग भी माना है।

देवी याग

देवीयाग का अभिप्रायःमेरे पूज्यपाद गुरुदेव इससे पूर्व के शब्दों में विवेचना कर रहे थे, देवी याग का अभिप्राय है कि देवी की पूजा करना। देवी के पूजा का अभिप्राय है, प्रकृति की पूजा करना। प्रकृति की पूजा का अभिप्राय है, प्रकृति के जो अवशेष हैं उनका सदुपयोग करना, उनको क्रिया में लाना। वही उनकी पूजा कहलायी जाती है। आज हम माता की पूजा करना चाहते हैं। आज हम कन्या को याग बनाना चाहते हैं। मानो देखो, हम देवी याग की रचना चाहते हैं। परन्तु उन यागों में क्या है? याग की मीमांसा केवल संक्षिप्त रूप में पूज्यपाद गुरुदेव ने की है कि याग का अभिप्राय है, धारण करना, याग का अभिप्राय है पालन करना। उसके सदुपयोग करने का नाम याग माना है।

आज मैं इन वाक्यों में अधिक नहीं जाना चाहता हूँ, परन्तु यहाँ रूढ़ियों ने माताओं के अस्तित्व को नष्ट करते हुए, आज संसार में जो कुरीतियाँ दृष्टिपात आती है, आज माता के श्रृङ्गार को भ्रष्ट होता हुआ दृष्टिपात किया जाता है। आज मानव

यागों की प्रथा को समाप्त करके, अपनेपन में अभिमानी बनकर के और ये स्वीकार करके कि ईश्वर कोई वस्तु नहीं, ये सब पाखण्ड है। परन्तु मैं आज नाना प्रकार की वार्ता प्रकट करने नहीं आया हूँ। मैं जब ये प्रश्न करता हूँ कि अरे, भाई! तू ये तो जानता है अस्वात प्रति ब्रह्मा, ये संसार कोई वस्तु नहीं है। परन्तु तुम्हारा भी कोई अस्तित्व है क्या? तुम्हारी भी कोई महानता है क्या? परन्तु देखो, उस समय कोई उत्तर प्राप्त नहीं होता। तो परिणाम केवल यही कि हम संसार के अवशेषों पर विचार विनिमय करें। जिन अवशेषों से मानो हमारा कल्याण होता है। हम वास्तव में वेद की पवित्र ध्वनि को अपनाते हुए, याग में रमण करते चले जाएँ।

आज मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव से वाक प्रकट कर रहा हूँ कि जहाँ हमारी ये आकाशवाणी जा रही है, वहाँ सामगान का पारायण हुआ, उसकी पूर्ण अस्वाति अध्र्हे समाप्त हुआ। परन्तु देखो, मैं एक वाक अवश्य प्रगट किया करता हूँ, कि संसार में मृत्यु दिवस कदापि, अवशेषों में नहीं आना चाहिए। क्योंकि हमारे वैदिक साहित्य में मृत्यु कोई शब्द नहीं होता, जब मानव की मृत्यु नहीं होती, तो मृत्यु दिवस का मनाना भी, मानव के लिए एक प्रकार की विडम्बना है। उस विडम्बना को कदापि भी लाना नहीं चाहिए। हमारा आत्मबल ये कह रहा है, वेद का ऋषि कहता है आत्म ब्रह्मा प्रथम सूर्यलोकं ब्रह्मा कृति उधानो आस्ताः कि संसार में किसी भी काल में मृत्यु नहीं होती। जब आत्मा की मृत्यु नहीं होती, परमाणुवाद भी नष्ट नहीं होता तो मानो देखो, मृत्यु दिवस का भी अपना कोई अस्तित्व नहीं होता। इसीलिए यह मानव की विडंबना है।

ब्रह्मा का जन्म दिवस

जन्म दिवस मानव का सदैव होना चाहिए। हमारे वैदिक साहित्य में जन्म दिवस की महान से महान प्रथा आयी है। किसी काल में हमारे पड़पिता का जन्म हुआ था, जमदग्नि ऋषि का जन्म हुआ, किसी काल में हमारे पिता, महापिता का जन्म हुआ, तो हम जन्मदिवस मनाते रहे। मैं परम्परागतों से ही अपने पूज्यपाद गुरुदेव

से प्रेरणा लेता रहता हूँ। जब हम आश्रमों में रहते थे तो ब्रह्मा जी के जन्मदिवस की प्रथा को प्रायः मनाते रहते थे। आज भी वो परम्परा चली आ रही है मानो जिसको हम वसंत ऋतु में, वसंतम्वसंत पञ्चादशी (वसंत पञ्चमी) कहा करते हैं। उस दिवस संसार में ब्रह्मा का जन्म हुआ था। इसी प्रकार हमारे ऋषि मुनियों ने जन्म दिवस को उत्सव माना है। मृत्यु दिवस का अपना कोई अस्तित्व नहीं माना है। क्योंकि जब मृत्यु होती ही नहीं, तो उसका अस्तित्व भी क्या है। एक आत्मा गृह से चली गई, सूर्य मण्डल में, उस आत्मा की प्रतिभा, उसके कर्मों का तारतम्य, उसके साथ में रमण करने लगा। वह आत्मा किसी न किसी लोकों में रमण करता चला गया, अपना आनन्द मना रहा है, जीवन की आभा में रमण कर रहा है।
परन्तु देखो, उसके मृत्यु दिवस का अस्तित्व हमारे जीवन में, नहीं होना चाहिए। जन्म दिवस अवश्य मनाना चाहिए। वह जो जन्मदिवस है, वही मानव को अपने उस बाल्यकाल की आभा में पुनः से अवृत्त करता है और वह जो जन्म है, क्योंकि संसार में जीवन ही जीवन है मृत्यु, अन्धकार, तो है ही नहीं। ज्ञान में अन्धकार नहीं होता और अज्ञान में अन्धकार होता है। इसीलिए हम अन्धकार को लाने का प्रयास क्यों करें। परन्तु मैं इस सम्बन्ध में अधिक विवेचना प्रगट करने नहीं आया हूँ। केवल ये वाक प्रकट करने आया हूँ कि संसार में अपने मानवीय जीवन को सदैव ऊँचा बनाना चाहिए, ऊर्ध्वा गति में ले जाना चाहिए। आज ऐसे अवशेषों में परिणीत, जिस आत्मा का पुत्रां यज्ञे ब्रह्मे वर्धा हम्ब्रहे कृत जन्म दिवस की आभा में कल्पना करते हैं, हम ये विचारते रहते हैं कि पुत्रों गत्प्रहवास्ति ऐसे पुत्र मानो संसार में सर्वत्र प्राणियों के होने चाहिए। जिनके हृदय में वेद की प्रथा, वेद की परम्परा लाने का प्रयास किया जाए, परन्तु इसमें संशोधन केवल इतना अवश्य करना चाहिए कि मृत्यु दिवस के पश्चात हम इनके आसन पर जन्म दिवस की प्रथा को, अपने गृह में लाने का प्रयास करें, जन्म दिवस पर याग की प्रथा को लाने का प्रयास करें, क्योंकि वह आत्मा न यहाँ मृत्यु में था, न सूर्य मण्डल में, न किसी

लोकों में जाने के पश्चात मृत्यु को प्राप्त हुआ है। इसीलिए आज जीवन को उस महान वेदी पर लाने का प्रयास करें। आज मैं अधिक विवेचना तो देने, नहीं आया हूँ। केवल आज का विचार हमारा ये कि हम वैदिक साहित्य और वैदिक परम्परा पर विचार विनिमय करने वाले बनें और वैदिकता को लाने के लिए हम सदैव अपने जीवन में आभा से युक्त होते हुए, इस संसार सागर से पार हो जाएँ।

कुप्रथाओं का कारण

परन्तु समाज में नाना प्रकार की कुप्रथाएँ तब प्रारम्भ हो जाती हैं जब बुद्धिमान ब्राह्मण नहीं रहते। तब रूढ़ियों का प्रचलन हो जाता है तो यथार्थ पृथा, परम्पराएँ समाप्त हो जाती हैं। यहाँ समाज में जब मैं दृष्टिपात करता हूँ तो नाना प्रकार की कुप्रथाएँ हैं और ऐसी प्रथाएँ हैं जिनको दृष्टिपात करके हमारा अन्तरात्मा बड़ा दुखित होता है और हम ये कहा करते हैं, प्रभु! तू कहा चला गया? वेद के आचार्यों को तू संसार में क्यों नहीं जन्म देता। जिससे मानव वेद का पठन पाठन करके कुसमाज, कुरीतियों को नष्ट करने वाला, और मानो शुद्धता को धारण करने वाले पण्डित होने चाहिए। जिससे हमारा जीवन पवित्रता में परणित होता हुआ महानता की वेदी पर रमण करता हुआ, इस संसार में मानवता का प्रसार कर सके।

तो आओ, मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव को ये प्रगट कराने आया हूँ, मैं यज्ञमान को अपना आशीर्वाद, उनको ये उच्चारण करने आया हूँ कि उनका जीवन सदैव पनपता रहे, उनका द्रव्य शुभकार्यों में परणित होता रहे, वे देवीयाग करते रहें, सामगान गाते रहें, जिससे उनके गृह में, द्रव्य की किसी प्रकार की हानि न हो सके। क्योंकि द्रव्य की प्रायः उन मानवों के द्वारा हानि हो जाती है, जो द्रव्य में परणित हो करके, उसमें इतने लिप्त हो जाते हैं कि अन्त में वह आत्मा की पिपासा को भी पूर्ण नहीं कर पाते। आज जब मैं संसार को दृष्टिपात करता हूँ, जिन राष्ट्रों में, जिस समाज में देखो, याग इत्यादि आत्मिक कर्म नहीं होते, वे अपनी आत्मा में पिपासी रहते हैं। वे प्रीति चाहते हैं, प्रभु की महानता चाहते हैं, करुणा चाहते हैं परन्तु वह करुणा

तो मानव में होनी ही चाहिए।

आत्मा की पिपासा

तो विचार क्या अभ्यागतं मनुवाचा कर्मणां ब्रव्हे वेद का ऋषि कहता है, आचार्य कहा करते हैं, पूज्यपाद गुरुदेव ने भी कई काल में प्रगट कराते हुए कहा है, कि वे सदैव आत्मा की पिपासा को शान्त करते रहते हैं अहाद्रव्य से जिस गृह में याग होते हैं, परमात्मा के निष्काम कर्म में परणित होते हैं, उस गृह में, द्रव्य की हानि नहीं हो पाती। परन्तु हानि कहाँ होती है जहाँ द्रव्य रहते हुए भी मानव हानि में रहता है। एक मानव द्रव्यपति है, आत्मा की पिपासा को शान्त नहीं कर पाता, आत्मा की पिपासा बनी ही रहती है। परन्तु वह द्रव्य आत्मा की पिपासा को शान्त नहीं करेगा। आत्मा की पिपासा, जैसे मन की पिपासा, भौतिकवाद की पिपासा, शरीर के पालन पोषण की पिपासा, द्रव्य से समाप्त हो जाती है। परन्तु देखो, आत्मा की पिपासा ज्ञान और प्रकाश से समाप्त होती है। इसलिए ज्ञान और प्रकाश होना चाहिए। धर्मता होनी चाहिए और द्रव्य का सदुपयोग होना चाहिए। तो जहाँ सदुपयोग होता है उसके द्वारा द्रव्य की हानि नहीं होती। हानि वहाँ होती है जहाँ द्रव्य का दुरूपयोग किया जाता है। चरित्र को द्रव्य से भ्रष्ट किया जाता है। इसी द्रव्य के कारण नारकिकता में परणित हो जाता है, मादक वस्तुओं का पान करके ऐसी स्थिति पर चला जाता है। कि मानो इसका शरीर ही नहीं रहता और उसका अन्तरात्मा, पिपासी रहकर के उसको धिक्कारता रहता है। तो ऐसे जो द्रव्य का दुरूपयोग किया जाता है तो वह नारकीय बनता है और अगले जन्मों में वह मानव, उन लोकों में जाता है जहाँ प्रकाश का एक अङ्कुर भी प्राप्त नहीं हो पाता।

तो इसीलिए आज का विचार हमारा क्या कि हम सदैव अपने जीवन को ऊँचा बनाने वाले बनें। मुझे अपने पूज्यपाद गुरुदेव के चरणों में ओत प्रोत होकर के नाना प्रकार की आभाओं को सदैव धारण करने का सौभाग्य प्राप्त होता रहा है। मैं यागों की प्रशंसा में सदैव रमण रहा हूँ। याग से ही हमारा उत्थान होता है क्योंकि इस

बाह्य, भौतिक याग के साथ में जब हम आध्यात्मिक याग करते हैं, आध्यात्मिकवाद में रमण करते हैं तो हम आध्यात्मिक याग, ज्ञान और प्रकाश में रमण करते हुए, परमात्मा के समीप चले जाते हैं। ऋषि मुनियों ने कहा है कि ये जो संसार है, ये एक प्रकार का याग है। इसमें व्यापकता का नाम ही याग कहलाता है जितना मानव का वाद विचित्र और व्यापकवाद में रमण करता रहेगा उतना ही देखो, ये यागों में परणित होता रहेगा।

याग में कुप्रथाएँ

परन्तु वाम मार्ग समाज ने यागों की प्रथा को मानो देखो, कुप्रथा में परिवर्तित कर दिया। उनमें देखो, मांस की स्थापना जैसे अजामेघ याग अजामेघ में बकरी के मांस की आहुति देना, गो मेध याग में गो नामक के पशु की आहुति देना, नरमेघ याग में मानव की बलि प्रदान करना, इसी प्रकार यहाँ देखो, अश्वमेध याग में घोड़े जैसे पशु की बलि देना, ये मानो देखो, कुप्रथायें इस समाज में, महाभारत काल के पश्चात आयीं। अहा! देखो, उन कुरीतियों का परिणाम ये हुआ कि यागों की प्रथा समाप्त होने लगी और समाज ने संघर्ष कर दिया।

गो और अजामेघ याग

परन्तु देखो, गो मेघ का अभिप्राय है गो कहते हैं ब्रह्मचारी को मेघ कहते हैं विद्या को, जो बालक को, पशु को प्रकाश में लाता है अथवा मेघ में लगा देता है उसका नाम गो मेघ कहते हैं। उसी के आधार पर साकल्य से याग किया जाता है अजा नाम बकरी को भी कहते हैं और अजा नाम प्रकृति का भी है मानो देखो, प्रकृति को जब हम अजा में परणित करते, प्रकृति के विज्ञान को जानें, और विज्ञान को जानने का नाम अजामेघ याग है। मानो, याग के परमाणुओं से हम यन्त्रों का निर्माण करें, उनसे लोक लोकान्तरों की यात्रा करें, तो वो हमारे यहाँ अजामेघ याग कहलाता है।

अश्वमेध याग

देखो, अश्व नाम राजा का है। राजा और प्रजा दोनों मिल करके राष्ट्र को ऊँचा बनायें, और संसार को विजय करके अश्वमेध याग करें। परन्तु संसार में वाममार्ग अर्थ का अनर्थ करके यज्ञों की प्रथा को समाप्त करने लगा। मानो देखो, समाप्त क्या? मानव के हृदय में एक विडम्बना जागी, महात्मा बुद्ध ने कहा कि मैं ऐसे वेद को स्वीकार नहीं करता, जिस वेद में हिंसा हो, जिस यज्ञ जैसे शुभ कर्मों में बलि की प्रथा हो। ऐसा याग मैं कदापि स्वीकार नहीं करता। चाहे वह कितना भी महान कर्म हो, परन्तु बुद्धि नहीं कह सकते इस वाक को, हम भी उच्चारण कर सकते हैं। परन्तु बुद्ध की इतनी सूक्ष्मता रही कि उन्होंने वेद का अध्ययन, तार्किक रूपों से नहीं किया उनके वेद के अध्ययन को गम्भीरता से न करने का परिणाम क्या हुआ, कि बुद्ध परम्परा ने मानो देखो, समाज को और भी अन्धकार में परणित कर दिया।

माता की पूजा

परिणाम क्या, हम वाममार्ग को, कुप्रथावादियों को समाप्त करना चाहते है तो हमारे द्वार ज्ञान और विवेक होना चाहिए। हमारे द्वारा एक ऊँची प्रथा होनी चाहिए। हमारा प्रयास कुविचारों को समाप्त करके, हमारे सुविचार होने चाहिए। जिससे हम समाज को अग्रणीय बना सकें। परन्तु इसी प्रकार नाना आचार्यों ने कहा कि हमारे यहाँ समाज में देखो, पुत्रियों का और पत्नियों का अस्तित्व नहीं है। ईसा ने और मोहम्मद दोनों ने ही एक अस्थि से माता के शरीरों को स्वीकार किया। एक अस्थि से शरीर को स्वीकार करने वालों से यदि हम ये प्रश्न करते हैं और कहते हैं कि तुम्हें लज्जा नहीं आयी इन वाक्यों को स्वीकार करते हुए, जिस माता के गर्भ से हम उत्पन्न होते हैं, उस माता का अस्तित्व न करेंगे तो हमारा समाज और हमारा धर्म, हमारी मानवता कुछ काल में समाप्त हो जाएगी।

इसीलिए आज का विचार क्या कि वेद कहता है कि हम माताओं का पूजन करें, माताओं के प्रति हमारी निष्ठा होनी चाहिए परन्तु देखो, जिनके गर्भ से ऋषि मुनियों का जन्म होता है, जिनसे जीवन उद्गम और ऊर्ध्वा बना करता है हम सदैव उनके

पुजारी बनें।

हम सदैव वेद के साहित्य को अपनाने वाले बनें। आज मैं अधिक विवेचना नहीं दूंगा, मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव को ये निर्णय देना चाहता हूँ कि जितनी कुप्रथायें हैं, इन कुप्रथाओं को समाप्त करना है। तो हमें एक महान मार्ग को अपनाना होगा और वह मार्ग है याग का, याग करते हुए उस पर हमारी एक क्रान्ति होनी चाहिए, ज्ञान और विवेक होना चाहिए। जिससे हम राष्ट्र और समाज को ऊँचा बना सकें। आज मैं इन शब्दों के साथ में अधिक विवेचना प्रगट करने नहीं आया हूँ। विचार विनिमय में ये कि आज ये जो समाज में, आधुनिक काल में त्राहि त्राहि हो रही है, उसका मूल कारण है, कि हमने धर्म और मानवता को जाना नहीं। यदि आज का राष्ट्र और मानव धर्म और मानवता को जान जाएं तो ये मानो कुप्रथायें समाप्त हो जायेंगी और राष्ट्र को एकोकी चरी करते हुए मानो देखो, हम उससे समाज को ऊँचा बनाएं।

अहा! ये न रह करके, कोई समय आ रहा है जब मैंने बहुत पुरातन काल में कहा है कि वो समय निकट है जब यहाँ देखो, एक एक स्थली पर संग्राम की प्रतिभा और अग्नि प्रचण्ड होती चली जाएगी। परन्तु वो समय दूरी नहीं है जब मानव मानव के रक्त का भक्षण करने वाला बनेगा। तो वह समय दूरी नहीं, वह समय निकट आ रहा है और आता रहता है। परन्तु देखो, मैं ये विचार केवल इसीलिए व्यक्त करने जा रहा हूँ कि आज यदि मानव ने अपनी मानवीयता को ऊँचा नहीं बनाया, तो समाज में वह समय निकट आ रहा है।

परन्तु इन वाक्यों को मुझे उच्चारण करना नहीं है, मैं तो केवल ये वाक प्रकट करने आया हूँ अपने पूज्यपाद गुरुदेव से आज्ञा पाता हुआ, यज्ञमान को अपना आशीर्वाद तो क्या, मैं ये उच्चारण करना चाहता हूँ कि आयु दीर्घ होनी चाहिए, जिससे धर्म और मर्यादा की रक्षा होती रहे। हे यज्ञमान! मैं केवल अपनी इस वाणी से यही उच्चारण कर रहा हूँ कि तेरा हृदय उदार और महानता में परणित होता रहे,

गृह में कुप्रथा समाप्त होनी चाहिए और वेद और ज्ञान के द्वारा प्रत्येक मानव को महानता में परणित होना चाहिए। परन्तु जिससे हमारी मानवता, हमारा जीवन ऊँचा बने, गृह में सदैव किसी प्रकार की भी हानि न हो पाए, धर्म की और धर्म के साथ में श्री लक्ष्मी की भी हानि न हो पाए।

इन वाक्यों के साथ मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव से आज्ञा पाऊँगा। विचार क्या कि आज यही आशीर्वाद कहो परन्तु सदैव मेरी ये उद्गमता रहती है कि जिन ब्राह्मणों के द्वारा वेद का पठन पाठन होता है उनका आयु दीर्घ हो, होताजन अपनी त्रुटियों को समाप्त करके, ऊँचे से ऊँची गति को प्राप्त होते रहें। ये मेरा सदैव एक वाक रहता है, इन वाक्यों के साथ हे यज्ञमान! तू सपत्नी विराजमान होकर के यज्ञवेदी पर देखो, जैसे अर्द्धभाग और दिग्ध उत्तर प्रश्नों में परणित होते रहे, जैसे प्रजापति के यहाँ मैं तो अपने पूज्यपाद गुरुदेव का वो समय कितना विचित्र था, मानो जहाँ उत्तर, प्रश्न होते थे, महा भयंकर वनों से लाया जाता, मैं तो जब संसार को, कर्म की प्रथा को, कर्म के उस विचित्र दृश्य को दृष्टिपात करता हूँ तो मेरा हृदय तो किसी काल में दुखित हो जाता है और किसी काल में हर्ष ध्वनि करने लगता है। परन्तु मैं इन वाक्यों को अधिक उच्चारण करना नहीं चाहता हूँ। विचार विनिमय में ये, मेरा अन्तरात्मा बड़ा प्रसन्न रहता है कि समाज में जब ऐसे ऐसे उत्तम कर्म होते रहें, याग होते रहें, परन्तु कुप्रथा से नहीं, केवल मृत्यु दिवस नहीं, जन्मदिवस की प्रतिभा होनी चाहिए, जिससे हमारी संस्कृति में, हमारे वैदिक साहित्य में, मृत्यु का कोई शब्द नहीं है। केवल जीवन ही जीवन को स्वीकार किया है ऋषियों ने। तो इसके साथ मैं, यज्ञमान को सदैव यही कि उनका जीवन दीर्घ बने, उनके हृदय से शोकाकुल की भावनायें, शोकाकुल की तरंगें न आयें, सदैव प्रकाश ही प्रकाश रहे। इसके साथ मैं अपने वाक्यों को यही विराम दे रहा हूँ।

पूज्यपाद गुरुदेवः आज मेरे प्यारे महानन्द जी! ने कुछ परम्परा की वार्तायें प्रगट कीं, कुछ आधुनिक काल की प्रतिभा भी थी। परन्तु ये कोई वाक नहीं, महानन्द

जी की कुछ ऐसी प्रेरणा है कि आप भी कुछ उच्चारण करें। मेरे प्यारे महानन्द जी! ने यज्ञ की कुछ चर्चायें कीं। परन्तु हम भी इनके साथ यज्ञमान को यही उच्चारण करने आए हैं, यही उच्चारण करेंगे कि स्वाति द्रष्व्दे सौभाग्यं ब्रह्मस्ते मानो इनका सौभाग्य और जीवन की ज्योति सदैव जगती रहे, वह मानो सुषुप्ति में न जाएं, उनका जीवन सदैव महान, सुदृढ़ और मानवता की, मानवीयता में देववत बनता रहे। इनके व्यापक विचार, संकीर्णता में न आये, व्यापकता में सदैव परणित रहे, ये वाक अब समाप्त होने जा रहा है। आज का वाक समाप्त, अब वेदों का पठन पाठन, होगा इसके पश्चात वार्ता समाप्त होगी।

12. राष्ट्रवाद की पवित्रता-851030

जीते रहो! देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भान्ति, कुछ मनोहर वेद मन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया। आज हमने पूर्व से, जिन वेदमन्त्रों का पठन पाठन किया। हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है। जिस पवित्र वेदवाणी में, वे महामना यज्ञोमयी स्वरूप माने गएं हैं। उस महान देव की हम उपासना करते चले जा रहे थे मानो उसके गुणों का वर्णन गाना ही उसकी पूजा करी जाती है। प्रत्येक मानव के हृदय में, ये आशङ्का बनी रहती है कि हम पूजन किसका करें? कौन संसार में पूज्य है?

प्रभु की पूजा

तो हमारे यहाँ वेदमन्त्र यह कहता है। कि उस परमपिता परमात्मा के गुणों का गुणवादन करना मानो उसकी रचना कर अपने को उसमें करने का नाम प्रभु की पूजा कही जाती है। मानो बाह्य और आन्तरिक दोनों जो जगत है उन दोनो में प्रभु की प्रतिभा को दृष्टिपात करना है। मानो एक एक वस्तु गान के रूप में गाई जा रही है, मानो हम वेदों का उद्गीत गाते है अथवा गान गाते है तो वो गान भी मानो प्रभु की आभा में रत्त रहता है। प्रत्येक मानव परम्परातों से ही, नाना प्रकार का अन्वेषण करता रहा है। विचार विनिमय में करता रहा है, कि वे परमपिता परमात्मा यज्ञोमयी स्वरूप माने गए हैं। यज्ञ ही उसका आयतन मानो गया है। कोई भी मानव अपने में विचार विनिमय में करने लगता है कि आयतन किसे कहते हैं? मानो आयतन कहते है गृह को, जिसमें वो वास करता है। वासालय को ही आयनत कहा जाता है उसी में वह वास कर रहा है।

कर्तव्य

तो मानो देखो, आज हम उस परमपिता परमात्मा को, निहारते रहे और उसके ऊपर अन्वेषण, मनन और चिन्तन करना हमारा कर्तव्य कहलाता जाता हैं। मानो

एक एक परमाणु के ऊपर अन्वेषण, विचार विनिमय में करते रहते हैं। परन्तु यागों का चयन करने वालों में, बड़े विचित्र रूपों में बेटा! यागों का आयोजन, यागों की रचना के ऊपर उन्होंने अन्वेषण किया है। मानो बहुत गम्भीररता में जब ले जाते हैं, तो उड़ान उड़ते रहते है। प्रायः वैसे तो वास्तविक वेदां ब्रह्माः वरुणाः सम्भवाः रुद्रो गतप्रवाह वरुणोस्ते।

क्रियाकलाप रूपी याग

वेद का वाक यह कहता है कि संसार का, जितना भी क्रियाकलाप हो रहा है, चाहे वह इस पृथ्वी मण्डल पर हो रहा है, चाहे मङ्गल में हो रहा है, चाहे वह बुध में हो रहा है, चाहे वह स्वाति में हो रहा है, किसी भी लोक लोकान्तरों में जो भी क्रियाकलाप है वह एक मानो यागों के रूप में दृष्टिपात आता है। इसीलिए हमारा जीवन भी एक यज्ञोमयी स्वरूप माना गया है, यदि इससे पूर्व महान क्रियात्मक क्रियाकलापों को करता रहता है और विचारता रहता है। माता, पालन करना, शासन करना, उत्पन्न करना मानो जब तक सीमा में बद्ध रहती है तो वह भी मानो एक याग में ही माना गया है।

तो आज का हमारा वेदमन्त्र मानो बड़े गम्भीर वाक्यों में ले जा रहा है जिससे मानो परम्परागतों से अपना अन्वेषण, अपना विचार विनिमय में करता रहा है। मानो देखो, आज हम, उस परमपिता परमात्मा का जो ये ब्रह्माण्ड है अथवा ये जो अमूल्य जगत है जो एक दूसरे में, ओत प्रोत होता हुआ, माला के सहस्र समय दृष्टिपात आता है, मानो जब हम साधना में योगारूढ़ में रमन ब्रह्माः आरूढ़म होते है। तो मेरे प्यारे! हम यही दृष्टिपात करते है कि परमपिता परमात्मा का जो अनूठा जगत है, ये जो अनुपम है मानो एक प्रकार की प्रतिक्रियाएँ यागों के रूप में परणित हो रही हैं।

मालाओं की चर्चा

मेरे प्यारे! मालाओं की चर्चाएँ मैंने कई काल में तुम्हें प्रगट की हैं, मालाएँ मानो

देखो, एक प्रकार की अस्तित माला है, जैसे माता का पुत्र, माता की माला बना हुआ है। माला का अभिप्राय यह है कि इसमें हमें अपने को लगन, संलग्न कराना है। मानो जैसे ये माला बन जाती है। पुत्र पुत्रियाँ माला है, उनकी माता पिता कहलाते है अथवा माता कहलाती है। आचार्य के कुल में आचार्य का शिष्य एक माला है और शिष्यों के आचार्य माला है। यह कैसी पवित्र माला एक दूसरे में पिरोई हुई हैं। विचार यह है जिसके ऊपर हम परम्परागतों से विचारते रहते है। परन्तु जब हम और ऊर्ध्वा में जाते हैं, गति करने लगते हैं, तो बेटा! ये जो पृथ्वी है, ये पृथ्वी आपो में पिरोई हुई है। बेटा! ये पृथ्वियों की एक पृथ्वी नहीं, दो नहीं, अनन्य पृथ्वियों की बेटा! एक माला बनी है। किसी काल में बेटा! माला बनी थी पृथ्वियों की।

तीस लाख पृथ्वियों की माला

मुनिवरों! वेद के आचार्य, वैज्ञानिक तो ये कहते हैं कि तीस लाख पृथ्वियों की माला बनी। तीस लाख पृथ्वियों की माला बनकर के बेटा! इन मालाओं को कौन धारण कर रहा है? सूर्य कर रहा है। बेटा! सूर्य इस माला को धारण कर रहा है और एक सहस्र सूर्य। मुनिवरों! जब दृष्टिपात हुए तो उनकी एक माला बनी। उसको कौन धारण कर रहा है? बृहस्पति धारण कर रहा है। बृहस्पति उस माला को अपने में पिरो रहा है। परन्तु देखो, एक सहस्र बृहस्पतियों की माला बनी तो बेटा! देखो, उसको कौन धारण कर रहा है? बेटा! उसको देखो, आरुणि मण्डल अपने में धारण कर रहा है, वह उस माला को अपने में सूत्रित कर रहा है।

लोकों की ओत प्रोतिता

मेरे प्यारे! एक सहस्र आरुणि मण्डलों की माला बनी तो उसको ध्रुव ने धारण कर लिया। ध्रुव इतना विशाल है, मेरे प्यारे! एक सहस्र ध्रुवों की माला बनी, तो मूल नक्षत्र ने उसको धारण कर लिया। एक सहस्र मूल नक्षत्रों की माला बनी तो बेटा! उसको मानो स्वाति मण्डल ने अपने में धारण कर लिया। एक सहस्र स्वाति मण्डलों

की माला बनी। तो बेटा! देखो, उसको अंचग लोक ने अपने में धारण कर लिया। एक सहस्र अंचग मण्डलों की माला बनी तो बेटा! देखो, उसको रेणकेतु मण्डल ने अपने में धारण कर लिया एक सहस्र रेणकेतु मण्डलों को मानो मृचिका मण्डलों ने अपने में धारण कर लिया। एक सहस्र मृचिकाओं को कृतिमण्डल ने अपने में धारण कर लिया। एक सहस्र कृतिमण्डल को मेरे प्यारे! देखो, गन्धर्व लोकों ने धारण कर लिया। ये प्रभु का कैसा अमूल्य जगत बेटा! माला के रूप में दृष्टिपात आ रहा है। जब बेटा! इसके ऊपर अन्वेषण करते हैं, विचार करते हैं, तो ब्रह्माण्ड हमारे समीप आ जाता हैं, वेद के आचार्यों ने समाधिष्ट होकर के, साधना में परणित हो करके मन और प्राण को एकाग्र करके आत्मा के प्रकाश में, इस सर्वत्र ब्रह्माण्ड को दृष्टिपात करने का उन्होंने बेटा! प्रयास किया।

समाधि में ब्रह्माण्ड की कल्पना

आगे मेरे प्यारे! ऋषि कहते है, आख्यायिका कहती है कि इतने मण्डलों का एक सौर मण्डल बन जाता है। मेरे प्यारे! इस प्रकर के ८५ लाख सौर मण्डलो को, धारण करने वाला। मानो देखो, एक आकाशगंगा कहलाती है। मेरे प्यारे! देखो, ९० करोड़ ८५ लाख ४९ हजार ९२ आकाशगंगाओं को मानो एक अपने में पिरो रही है, अपने में धारण कर रही है। मेरे पुत्रो! देखो, ऋषि मुनियों ने ये समाधि के द्वारा इस ब्रह्माण्ड की कल्पना की। तो मुनिवरों! देखो, एक सहस्र क्या? मानो देखो, ९० करोड़ ५५२ अवन्तिकाओं को बेटा! एक निहारिका अपने में धारण कर रही है।

तो विचार क्या? मेरे पुत्रो! कैसी ये माला है? ये कैसा अनूठा जगत है? जिसके ऊपर मानव चिन्तन करता करता उसमें मौन हो जाता है और विचारता है। सम्भवः देवं ब्रह्माः द्वितीयां भवितां लोकं ब्रह्मा मेरे प्यारे! देखो, ऋषि मुनि यहाँ आकर के मौन हो जाते हैं, विचारते रहते हैं, माला को अपने में धारण करते रहते। तो बेटा! ये कैसी विचित्र माला, निहारिका, अवन्तिका, आकाश गंगाएँ, सौरमण्डल मानो देखो, एक दूसरे में ये कैसे पिरोए हुए है? कैसे सूत्रित हो रहे है? एक दूसरे में

माला को धारण कर रहे है, जैसे माता अपने पुत्र को धारण कर रही है, मानो अपनी माला बनाकर के उसका कृत्तियों में अपना रूप धारण करा देती है। तो मेरे प्यारे! देखो, जैसे राजा की प्रजा माला है और देखो, प्रजा की राजा माला है ये सूत्र में प्रतीत होता हुआ जगत दृष्टिपात आता है। तो आओ, मेरे प्यारे! मैं विशेष विवेचना तो आज देने नहीं आया हूँ। अब मेरे प्यारे महानन्द जी! दो शब्द उच्चारण करेंगे।

पूज्यपाद महानन्द जीः ओ३म् सर्वं भदंर मनुः वाचनं ब्रह्माः राचतं रथा। मेरे पूज्यपाद गुरुदेव! मेरे भद्र ऋषिमण्डल! और भद्र समाज अभी अभी मेरे पूज्यपाद गुरुदेव एक ऐसी चर्चा कर रहे थे जिन चर्चाओं में बहुत अनुसन्धान की आवश्यकता रहती हैं क्योंकि आधुनिक काल का जो विज्ञान है, वह विज्ञान मानो तेरह लाख पृथ्वियों की गणना कर पाया है और मेरे पूज्यपाद गुरुदेव तीस लाख पृथ्वियों की गणना करा रहे है। परन्तु एक दूसरे में पिरोई हुई ये माला, जिसे ऋषि जन समाधि के द्वारा मानो इसको अपने में धारण करते रहे है, ये क्रियात्मक जीवन, प्रायः ऋषि मुनियों का होता है, जो लघुमस्तिष्क में, समाधि के द्वारा प्रकृति के मण्डल को जानते है और परमपिता परमात्मा का जो अनूठा ये ब्रह्माण्ड है, जिस ब्रह्माण्ड की कल्पना करता करता मानो अन्त में शान्त हो गया है। अतीत का जो विज्ञान है, वो बड़ा विचित्र रहा है।

वर्तमान काल का परिचय

आज मैं अतीत के विज्ञान में या प्रभु के वाक्यों पर अपनी टिप्पणी करूँ तो ये मुझे सुशोभनीय नहीं है, न मेरा इतना सामर्थ्य हैं कि आज मैं पूज्यपाद गुरुदेव के वाक्यों पर, क्योंकि इनका जो विचार है, इनकी जो धारणा है वो बड़ी विचित्रतम रही है, वो विज्ञान से ओत प्रोत रहती है। मानो मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव को बारबार अपना कुछ परिचय कराता रहता हूँ, महाभारत काल के पश्चात जो भी इस संसार में जो भी इस पृथ्वी मण्डल पर क्रियाकलाप हुए हैं, कर्म हुआ है, उसके ऊपर में

पूज्यपाद गुरुदेव को अपना वाक प्रकट कराता रहता हूँ, आज जो ये हमारी आकाशवाणी है। ये मानो देखो, पृथ्वी मण्डल पर ये उस स्थली पर जा रही हैं जहाँ साम याग का मानो समापन हो रहा है, ये हमारा बड़ा सौभाग्य रहा है, मेरी जो मनोनीत धारणा रहती हैं, यज्ञमान के साथ रहती है।

वर्तमान की दुर्दशा

मैंने अपने पूज्यपाद गुरुदेव को अभी अभी कुछ काल हुआ ये वर्णन कराया कि आधुनिक काल का जो जगत है। मानो ये वाममार्ग के आधार पर अपने जीवन को व्यतीत कर रहा है। मानो देखो, प्राणियों का भक्षण करने वाला है, सुरा का पान करने वाला है। ये जो आहार है ये जो मानो क्रियाकलाप है, ये सब वाममार्ग की प्रथा कहलाती है। मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव को ये निर्णय कराता रहता हूँ। हे यज्ञमान! तेरा जीवन मानो कितना महान है, कि तू इस काल में जहाँ वाममार्ग की देखो, ऊर्ध्वा में पुकार हो रही है, जिस भी राष्ट्र में जाते है तो एसा प्रतीत होता है और जिस भी विज्ञानशाला में प्रवेश करते हैं, तो वह विज्ञानशाला भी वैज्ञानिकों के वांगमय में सिमटी सी दृष्टिपात होती है।

धर्म की अनेकता के दुष्परिणाम

परन्तु देखो, ये जो राष्ट्रवाद है। जब ये विचारता है तो नाना धर्मों की चर्चा करता है। राष्ट्रवाद जब नाना धर्मों की चर्चा करता है तो ये मानो देखो, राष्ट्र की धृष्टता है। ये राजा का तो शब्द नहीं होता। ये मानवता का भी शब्द नहीं होता। मानवता एक अपनी मानवीय वेदी पर सदैव नृत्य करती रही है। सृष्टि के प्रारम्भ से लेकर और ये नाना धर्मों में इस समाज का विभक्त होना। ये राष्ट्र और समाज का देखो, दुर्भाग्य कहलाता है। ये समाज विभक्त नहीं होना चाहिए। ये नाना धर्मों में विभक्त होने वाला, समाज है, इसमें मैं मानवता का एक ह्रास स्वीकार करता हूँ। ऋषि मुनियों की पद्धति में, ऋषि मुनियों के विचारों में, वैदिक सम्पदा में, हमें प्रायः देखो, नाना धर्मों की विवेचना नहीं प्राप्त होती।

याग त्याग के दुष्परिणाम

मुझे स्मरण हैं मेरे पूज्यपाद गुरुदेव मुझे बहुतसा निर्णय कराते रहते हैं। मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव को भी आधुनिक काल का परिचय देता रहता हूँ। मैंने अपने पूज्यपाद गुरुदेव से कहा कि ये जो समाज इतना तिरस्कृत हो रहा है ये स्वार्थ में परणित हो रहा है। आज जो संसार चिन्तित है उसके मूल में उन्होंने याग को अपने से पृथक कर दिया। याग को जिस भी काल में पृथक किया जाता है उसी काल में, समाज में अज्ञानता और नाना प्रकार की ईश्वर के नामों पर, नाना प्रकार की रूढ़ियाँ बन जाती है, उसे धर्म नहीं कहते, उसे अज्ञान कहते हैं। जो एक को नाना रूपों में विभक्त करते हैं वह मानो देखो, विचार वह समाज नहीं होता और न वह राष्ट्र ही विचारशील होता है।

कर्तव्यवाद के लिए राष्ट्र निर्माण

हमारे यहाँ एक पद्धति आती है कि राष्ट्र का निर्माण क्यों होता है? एक समय मानो देखो, वेदाध्ययन करने वालों एक समय एकत्रित होकर के उन्होंने एक प्रसंग लिया। वेद का कि राष्ट्र का निर्माण क्यों होता है? राष्ट्र की पद्धतियों का निर्वाचन क्यों होता है? गो राष्ट्र को क्यों प्रदान की जाती है? तो उस समय ऋषि मुनियों ने वेद के मन्त्रों का अध्ययन करते करते ये कहा कि समाज को मानो कर्त्तव्यवाद में लाने के लिए, राष्ट्र का निर्माण होता है। यदि मानो देखो, राष्ट्र, समाज को कर्तव्यवाद की वेदी पर नहीं ला सकेगा, कर्त्तव्यवाद में नहीं ला सकेगा तो ये समाज देखो, वह त्रुटियों में परणित हो जाता है, ये अज्ञान में परणित हो जाता है, इसीलिए राजा के राष्ट्र में बुद्धिजीवी प्राणी होने चाहिए। बुद्धिमान, तपस्वी होने चाहिए। जिससे राष्ट्र को अपनी वार्ता प्रकट करा करके, कुछ धर्म की और राष्ट्र को उज्ज्वल वेदी पर निर्धारित करने वाले हो।

द्रव्य की सदुपयोगिता

इसीलिए मेरा जो विचार है वह यज्ञमान के साथ रहता है जो यज्ञशाला में विद्यमान

होकर के अपने विचारों का और द्रव्यों का सदुपयोग करता रहता है और वह स्वाहा कहकर के देवताओं को हवि प्रदान कर रहा है, वो गूँज कर रहा है, वो अग्नि को देवताओं का मुख बनाकर के मुखारबिन्द में मानो अपने स्वाहा अपनी कामना प्रकट कर रहा है, अपनी कामना, मानो देखो, त्यागनिष्ठ होकर के वह अपने में परणित हो रहा है। हे यज्ञमान! मेरा अन्तर्हृदय तो मानो तेरे समीप रहता है। तेरे जीवन का सौभाग्य अखण्ड बना रहे। तेरे जीवन की प्रतिभा मानो देखो, प्रतिभाशाली बनकर के मानवीयता में मानो निहित होकर के तू अपने द्रव्य का सदैव सदुपयोग करता रहे।

याग का अभिप्राय

इसी प्रकार मैं राष्ट्र को कहता हूँ। हे राजन! तू अपने राष्ट्र में मानो देखो, सर्वत्र राष्ट्र में जितना द्रव्य है तू सबका याग कर्म कर। मानो देखो, याग का अभिप्राय अग्निहोत्र तो है ही, परन्तु यागों का अभिप्राय यह है कि तेरे राष्ट्र में, समाज को उद्बुद्ध कराने के लिए, समाज को कर्त्तव्यवाद का देखो, विचार देने के लिए तेरे राष्ट्र में देखो, बुद्धिमानो का सम्मेलन होना चाहिए और बुद्धिजीवी प्राणी मानो देखो, बुद्धिजीवी, प्राणी तेरे राष्ट्र की उज्ज्वलता का प्रसार करें। मानो देश की सेवा कर्त्तव्यवाद माना गया है और प्रजा तेरे साथ होकर के तेरे गुणों का गुणावधान करें। तू प्रजा के गुणों में गुणावधान करा और एकोकी मानो देखो, धनवन्तरी बन करके तू प्रजा को धर्म और कर्तव्य के मार्ग पर चलाने वाला बन।

महाभारत काल के बाद विकृतियाँ

मानो मैंने अपने पूज्यपाद गुरुदेव को पुरातनकाल में कहा था। कि महाभारत काल के पश्चात इस समाज की मानो देखो, विकृतियाँ प्रारम्भ हुई हैं। यहाँ इस पृथ्वीमण्डल पर नाना प्रकार के देखो, रूढ़िवादी प्राणी बने हैं। देखो, कुछ अज्ञानता के वश मानो कुछ राष्ट्रीयता अपनाने के वश देखो, रूढ़ियों का जन्म होता है। रूढ़ियों की उत्पति उस काल में होती है जब समाज में अज्ञान आ जाता है। समाज की

जातियता के नाते पर मानो देखो, वृत्तियाँ समाप्त हो जाती है।

विजयदशमी पर्व का प्रारम्भ

अभी कुछ समय हुआ है, एक पर्व गया है हमारे यहाँ, जिसको विजयदशमी कहते हैं। विजयदशमी को समाज ने यह स्वीकार कर लिया कि रावण का इस दिवस मानो वध हुआ है। रावण का देखो, निधन हुआ था, ऐसा समाज स्वीकार कर गया है। परन्तु मेरा विचार, मैंने जो इस संसार को पूज्यपाद देव की अनुपम कृपा से इस समाज को दृष्टिपात करने का या संसार को दृष्टिपात किया तो मुझे ऐसा प्रतीत हुआ है कि ये पर्व की उपलब्धि है कहाँ से? मानो देखो, भद्र और, अस्त्रों शस्त्रों का पूजन होता है। अस्त्रों शस्त्रों का विजय दशमी के दिवस पूजन होता है। हमारे यहाँ यह प्रार्थना की जाती है कि हमारी दसों इंद्रियाँ मानो संयम में रहकर के अपने जीवन को विजय करने वाले बने। जब हमारा जीवन विजयी हो जाएगा तो हम संसार को विजयी कर सकते है।

राजा रघु से गुरु के लिए दक्षिणा

जैसे मानो विजयदशमी के दिवस ही मानो देखो, हमारे यहाँ राजा रघु के यहाँ व्रतेन्तु ब्रह्मचारी ने विजयदशमी के दिवस ही मानो देखो, उनका याग सम्पन्न हुआ था। महाराजा रघु ने जब याग सम्पन्न किया। इसी दिवस जब महाराजा व्रतेन्तु ने अपने पूज्यपाद को स्वतः ही मानो देखो, दक्षिणा स्वीकार करने के लिए देखो, कहा कि मुझे दक्षिणा दो, मैं गुरु को दक्षिणा देना चाहता हूँ। तो यही वो दिवस था मानो देखो, उस समय राजा रघु ने रात्रि के काल में ये नियमावली बनाई। हे क्षत्रियों! जाओ, हे बलिष्टं ब्रह्म! अस्त्रों शस्त्रों से जाकर के कुबेर के धन को विजय करके लाओ। जिससे मैं एक ऋषि ब्रह्मचारी का पूजन कर सकूँ। यदि में इसका पूजन नहीं कर सका तो मेरा जो यज्ञ जो कुछ ही काल हुआ है, समाप्त हुआ है। ये मेरा मानो देखो, यज्ञ सम्पन्न नहीं होगा।

महाराजा कुबेर द्वारा स्वतः धन देना

तो उसी समय, रात्रि समय में देखो, योजना बनी और महाराजा कुबेर को ये प्रतीत हो गया था उनके गुप्तचर विभाग के द्वारा सम्भवां लोकां बह्मेः कि मानो देखो, रघु उन पर आक्रमण करेगा। रघु के देखो, वरिष्ठ सेनापति तुम पर आक्रमण करेंगे। महाराजा का द्रव्य, वाहनों में, राजा रघु के यहाँ लाया गया। महाराजा रघु बड़े प्रसन्न हुए। महाराजा रघु ने जब वह द्रव्य मानो ब्रह्मचारी को प्रदान किया तो ब्रह्मचारी ने कहा प्रभु! मैं उतना ही द्रव्य लूँगा, जितना मुझे गुरु को अर्पित करना है। मुझे मानो देखो, चौदह लाख मुद्राओं की आवश्यकता है। वही मुझे गुरु को प्रदान करनी है। मैं अधिक मुद्रा नहीं लूँगा।

धन न लेने के लिए विवाद

मानो देखो, राजा रघु का और ब्रह्मचारी दोनों का विवाद हो गया और विवाद में यह हुआ कि ब्रह्मचारी यह कहता है मैं इस द्रव्य को नहीं लूँगा और राजा रघु कहता है कि मैं इस द्रव्य को अपने कोष में अर्पित नहीं करूँगा। दोनों का विवाद हुआ। मानो देखो, राजा रघु और ब्रह्मचारी दोनों के विवाद को श्रवण करके महर्षि वशिष्ठ मुनि महाराज और मानो देखो, त्यागी, मुनि दोनों और महर्षि वैशम्पायन ये तीनों ऋषि, महाराजा रघु के आश्रम में पहुँचे। उन्होंने कहा राजन! क्या विवाद हो रहा है?

उन्होंने कहा ये ब्रह्मचारी! इस द्रव्य को स्वीकार नहीं कर रहा है। जो मानो कुबेर के यहाँ से आया। मेरे यहाँ तो द्रव्य नहीं था। मेरे यहाँ तो देखो, कांस्य तत्त्व के एक पात्र रहते थे केवल। मैं ये सब द्रव्य इसको प्रदान कर रहा हूँ, लेकिन ये ले नहीं पाता। ये कहता है कि मैं चौदह लाख मुद्रा ही लूँगा। ये करोड़ो की गणना में मुद्रा है। उन्होंने कहा प्रभु! इसको न दीजिए। इसको उतना ही दीजिए क्योंकि इसकी यह प्रतिज्ञा है। यह ब्रह्मचारी है, प्रतिज्ञा है, उसकी प्रतिज्ञा को नष्ट न कीजिए। आप देखो, ये जो द्रव्य है, ये आपके राष्ट्र में जो धेनु गऊएँ है। मानो देखो, ये द्रव्य उनके लिए क्रिया में उनका आहार बनकर के रहेगा।

मेरे प्यारे! देखो, यह वाक रघु ने स्वीकर कर लिया। जब रघु ने स्वीकार कर लिया तो व्रतेन्तु उस द्रव्य से, चौदह लाख मुद्रा लेकर के अपने आचार्य को प्रदान कर गए।

विजयदशमी पर्व का उद्देश्य

तो परिणाम क्या है। ये विचार देने के लिए, मेरे पूज्यपाद गुरुदेव कई समय से मानो देखो, उद्गीत, गान और वशिष्ठ का वर्णन करते चले आए हैं। मैं ये उच्चारण कर रहा हूँ कि ये जो विजयदशमी है ये परम्परागतों का एक क्रियाकलाप एक मानो देखो, उत्सव चला आ रहा है या क्षत्रियों का जो देखो, मानो अस्त्रों शस्त्रों की पूजा होती है, आधुनिक काल कुछ काल ऐसा बना महाभारत के काल के पश्चात कि विजयदशमी के दिवस मानो देखो, ब्रह्मे वाच्प्रवाह ब्रह्मेः कृताम्। देखो, वह न होकर के एक रावण का पर्व स्वीकार कर लिया कि रावण का इस दिवस निधन हुआ था। मानो देखो, इस दिवस रावण का निधन का प्रसंग भी हो सकता है। मैं यह नहीं कहता हूँ परन्तु देखो, यह पर्व अस्त्रों शस्त्रों की पूजा का एक पर्व माना गया है। विजयदशमी के दिवस मानो देखो, साधक अपनी दसों इन्द्रियों से साधना करता है और ग्यारहवें मन को इसमें प्रतिभाषित कर देता है।

तो ऐसा मेरा विचार मानो परम्परागतों से होता रहा है। समाज में क्रियात्मक क्रियाकलाप होता रहा है। ये मध्यकालीन महाभारत के काल के पश्चात मानो देखो, साहित्य में विकृतता आने के कारण मानो देखो, रावण के वध का एक पर्व स्वीकार कर लिया। रावण का निधन किया गया। मैं तो ये कहता हूँ कि ये राष्ट्र का बड़ा दुर्भाग्य कहलाता है। एक मानो देखो, राजाओं की परम्परागतों से समाज के हित के लिए एक राष्ट्र दूसरे राष्ट्र को परास्त भी कर देता है, एक राष्ट्र दूसरे को विजय कर लेता है। परन्तु देखो, जैसे राम जो राजा थे मानो उनके द्वारा जो अभिमान नहीं था उनके द्वारा उस पर्व के मानने का प्रसंग भी कदापि हमारे समीप नहीं आया हम इसको स्वीकार नहीं कर पाते हैं।

विचार यह आता है कि रावण का निधन हुआ, रावण के निधन में दोनो का संग्राम हुआ। दोनों में मानो देखो, साम्राज्य को लक्ष्य किया। राम ने अपनी संस्कृति का प्रसार किया। मानो वह संस्कृति लंका में विद्यमान हुई और वह लकां ब्रह्माः व्रहे देखो, वही देखो, एक पर्व बनकर के रही। देखो, हम सदैव इसका पूजन करते रहे है, पूजन कराते रहे हैं।

आज मैं इन विचारों पर न जाता हुआ केवल यह वाक उच्चारण कराने जा रहा हूँ कि, महाभारत काल के पश्चात ये नाना प्रकार की जो रूढ़ियाँ बनी है, इन रूढ़ियों में एक मानो देखो, वैदिक पर्वों की रक्षा करने के लिए मानो देखो, इन पर्वों की रचना हो सकती है। इसमें रचनाकार बन सकते है। कुछ बुद्धिजीवी प्राणी मानो देखो, रचना करके अपनी मानवीयता की रक्षा या आर्यत्व या वैदिकता की उसमें देखो, एक वृत्तियाँ बना सकते है। ऐसा भी हमारा विचार बन सकता है या समाज का विचार भी बना है और मानो देखो, रक्षा हुई।

देखो, यहाँ मोहम्मद के मानने वालों ने विकृत्तियाँ प्रारम्भ की। उन्होंने न ये जाना है न जानकर के ही मानो देखो, यहाँ अपनी सम्प्रदा में दक्ष बन करके उनका राष्ट्र बना। उनके मानने वालों ने धर्म और मानवता का ह्रास करना प्रारम्भ किया जिससे राष्ट्र में, ह्रासता आती चली गई।

वायुमण्डल का प्रभाव

परन्तु देखो, आधुनिक काल का जो राष्ट्र है, वह तो उससे भी दूरी चला गया है। जो जान नहीं पा रहा है। परन्तु देखो, मैं कई काल में राष्ट्रीयता के निवारण करने के लिए ये विचार देता रहता हूँ। मेरा विचार प्रायः कोई से स्वीकार न करे, परन्तु मेरे विचार वायुमण्डल में तो भ्रमण अवश्य करेंगे। मेरे विचार मानो देखो, वायुमण्डल में और कोई समय आ सकता है उन विचारों पर विचार विनिमय हो सकता है और वह विचार क्या हैं? मैं यह कहता हूँ, हे राजन! तेरे राष्ट्र में मानो देखो, याग होना चाहिए। महाभारत काल के पश्चात यागों का जो तिरस्कार हुआ है वाममार्ग

के द्वारा। देखो, मानव अंगों की आहुति दी। आहुति से माँस का प्रारम्भ चला है, उसका परिणाम यह हुआ कि माँस का प्रारम्भ होतेहोते यहाँ तक आ गया कि आज देखो, जहाँ राम की अयोध्या थी। भगवान मनु ने राष्ट्र का निर्माण किया था, अयोध्या का देखो, गठन किया और ब्रह्मेः मानो देखो, उसी राष्ट्र में जहाँ मानवता का प्रसार करते करते राजा चले गए।

परन्तु देखो, आधुनिक काल का जो समाज है इस पृथ्वी मण्डल का है। मानव है वह देखो, लगभग कुछ ही प्राणियों को त्याग करके वह माँस का भक्षण करता है, वह सुरा पान कर रहा है। देखो, वह माँस और सुरापान में लगा हुआ है। इसके मूल में क्या है? इसके मूल में है, यागों का तिरस्कार। याग का तिरस्कार होते होते कहाँ तक आ गया। प्रत्येक प्राणी मानो देखो, माँस का भक्षण करने लगा। वह करता हुआ सम्भोती ब्रह्मा वाचः मैं ऐसा प्रतीत, अपने में दृष्टिपात करता रहता हूँ। प्रायः ये यागों का तिरस्कार नहीं होना चाहिए। माताओं के, श्रृङ्गार को भ्रष्ट किया जाने लगा जबकि यागों का तिरस्कार हुआ, मेरी पुत्रियों का तिरस्कार होने लगा, मानो देखो, जहाँ इनका पूजन होना चाहिए था। वहाँ तिरस्कार हुआ।

अशुद्ध पुत्रों की उत्पत्ति

मेरी प्यारी माता श्रृङ्गार में संग्रहित हो गई परिणाम यह हुआ कि विद्या का अध्ययन न करना। देखो, उन्हें विद्या का अध्ययन करना था सन्तान को ऊँचा बनाने के लिए। मानो देखो, अपने में संग्रहित हो गई। उसका परिणाम यह हुआ कि माताओं के गर्भ से अशुद्ध पुत्रों! का जन्म हो करके उन्हीं के श्रृङ्गार को अपने में मानो ध्वस्त करने के लिए मानो देखो, समाज बन गया।

कर्त्तव्यवाद के लिए राजा

जब मैं यह दृष्टिपात करता हूँ, आधुनिक काल के समाज में मानो देखो, राष्ट्र ऊँचा न होने से, राष्ट्र का कर्तव्य है, राजा का जो निर्वाचन होता है वह समाज को कर्तव्यवाद में लाने के लिए होता। देखो, भगवान मनु से पूर्व राष्ट्र नहीं था। सृष्टि

का क्रम, अपने अपने कर्तव्यों का पालन कर रहा है। जब मानव अपने अपने कर्तव्यों का पालन कर रहा है तो वहाँ राष्ट्रवाद की आवश्यकता नहीं। राष्ट्रवाद वहाँ बनता है जहाँ राष्ट्र अपने कर्तव्य से विहीन हो जाता है। समाज को कर्तव्यवाद में लाने के लिए एक राजा का निवार्चन होता है। वह वशिष्ठ कहलाता है और वह अपने को बनाता है सबसे पूर्व, जो तपस्वी बनता है तो समाज को तपस्वी बना देता है।

बुद्धिमानो का सम्मेलन

मेरे पूज्यपाद गुरुदेव तो राष्ट्रवाद के सम्बन्ध में बहुत चर्चा करते हैं। आधुनिक काल के राष्ट्र का जो निवारण है वह इस प्रकार का हो सकता है। राजा का कर्तव्य है कि वह मानो जितने भी रूढ़िवाद है इस समाज में जितने भी रूढ़िवाद है इस पृथ्वी पर, उन सबका एक सम्मेलन होना चाहिए। मानो उनकी विचार धाराओं को स्वीकार करें। तर्क मानो देखो, दर्शनों के आधार पर उसकी मध्यस्थता राजा करें या बुद्धिमान करें। मानो देखो, जो वेदों का मर्मज्ञ हो। वेद की आभा में ले जाता हुआ समाज को विचार दे। जहाँ यज्ञ, विज्ञान और मानवीयता मानो जिसमें धारित होती हो, वही विचार मानो राजा के राष्ट्र में होना चाहिए। वे जब विचार होते है तो समाज में, एक दूसरे के रक्त का पिपासी प्राणी नहीं बनेगा। रक्त का पिपासी उस काल में बनता है जब नाना प्रकार की रूढ़िया हो।

राष्ट्र की सूक्ष्मता

आधुनिक काल में तो प्रायः ऐसा ही है। देखो, वह मोहम्मद के मानने वाले कहते है कि यहाँ ये आर्य नहीं रहने चाहिए। मानो मोहम्मद के मानने वाले कहते है कि हम रहने चाहिए, ये क्यों है? क्योंकि राष्ट्र की सूक्ष्मता है। राष्ट्र की धृष्टता है। यदि राजा इस राष्ट्र का निवारण करना चाहता है। तो जो धर्म है पहले उसका निवारण करना चाहिए और जब तक धर्म का विभक्त बना रहेगा तब तक समाज में शान्ति की स्थापना नहीं हो सकती।

जब तक समाज मानो कितनी ही विद्या अध्ययन करें। मानो देखो, किसी आधार पर रहें। वह अपने में देखो, अपना ही बना रहता है। वैज्ञानिक यह जानता है कि मुझे विज्ञान के आधार पर अपने जीवन को, राष्ट्र को वैज्ञानिक बनाना है। परन्तु विज्ञान की धाराओं का जन्म होते हुए जब वह धर्म को आता है तो धर्म वही हैं जिसे माता पिता से जिसने जन्म लिया।

राष्ट्रवाद में स्वार्थवाद

उसे भी मानो इतना त्रासित कर दिया गया है कि वह भी अपनी मानवता की चर्चा नहीं कर सकता। ऐसा आचार्य विद्यालय में अध्ययन रहा है। परन्तु सात्विकवाद को ले करके अध्ययन करा रहा है। वह जब एकान्त स्थली पर विद्यमान होता, तो वहीं होता है जहाँ उसके माता पिता की प्रतिभा रही होती है। यह क्यों हैं? ऐसा इसलिए है क्योंकि राष्ट्र ने राष्ट्रवाद का पालन नहीं किया। राष्ट्रवाद में अपने स्वार्थवाद का पालन कर रहा हैं और यह जो स्वार्थवाद है उससे एक समय वह आएगा जब स्वार्थवादी प्राणी मृत्यु का आहार बनकर के रह जाता है।

स्वार्थवाद में मृत्यु

आज मैं विशेष विवेचना न देता हुआ अपने पूज्यापाद गुरुदेव के लिए वर्णन करा रहा हूँ। हे प्रभु! यज्ञ के कर्मकाण्डों का ह्रास होने से, पद्धति ह्रसित होने से, मानो देखो, उसका तिरस्कार होने से, ये संसार दूषित बन गया। विज्ञान दूषित बन गया। राष्ट्र का विचार दूषित बन गया। समाज में मानो एक दूसरे के प्रति रक्त के सञ्चार की प्रतिभा बन गई। इसका मूल क्या है? उसके मूल में मानो देखो, अज्ञान हैं, अज्ञान से और स्वार्थवाद में ही प्राणी मृत्यु को प्राप्त होते हैं।

तो विचार विनिमय क्या? मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव को यह परिचय देने के लिए आया हूँ। मेरे पूज्यपाद गुरुदेव तो ऐसी आत्म चर्चाएँ करते रहते है। जिस आत्म चर्चा की उड़ान मानो सतयुग के काल में गान रूपों में गायी जाती थी। त्रेता के काल में गायी जाती थी, जब राष्ट्र महान ऋषियों का मानो देखो, उनका पालन

पोषण राष्ट्र करता था। बुद्धिजीवी प्राणी यागों के ऊपर अनुसन्धान करते रहते थे। राम की घोषणा आज का समाज करता है। पुरातनकाल में राष्ट्र को मानो एक खिलवाड़ स्वीकार करके राम और भरत ने अपने कर्तव्य का पालन किया। जब मैं विचारता हूँ, देखो, उनका विचार, उनका जीवन कितना मर्मज्ञ है, कितना महान, कितना पवित्र है और कितना वह विद्या से गुथा हुआ माना गया है। यहाँ नाना प्रकार की सम्प्रदा महाभारत के काल में उपलब्ध हुई और उन सम्प्रदायों में याग को भी तिरस्कार करते चले आ रहे है।

संसार रूपी यज्ञशाला

परन्तु याग का तिरस्कार नहीं हो सकता। क्योंकि यह एक सुगन्धि है यह अपने में सारस्वत है। ये मानो देखो, जब परमात्मा ने सृष्टि का प्रारम्भ किया था तो ये संसार रूपी यज्ञशाला का निर्माण उसी की कल्पना ऋषि मुनियों ने बाह्य जगत में लाकर के उसका अन्तरिक्ष जगत से समन्वय किया है। इसीलिए ये मानो देखो, उसका ह्रास होते होते कोई न कोई महापुरूष आते रहते है। इसको पुनः से देखो, ऊर्ध्वा बनाते रहते हैं। जागरूक, नवीनता देते रहते हैं। अतीत को मानो देखो, वह वर्तमान में लाते रहते हैं। ये मानो प्रायः देखो, ईश्वर की विभूतियाँ, ईश्वर की अनुपम देन कहलाती हैं।

पुरातन अनुसन्धान

परन्तु आज मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव के लिए उच्चारण कर रहा हूँ, आधुनिक काल का विज्ञान मानो देखो, तीस लाख पृथ्वियों को नहीं जाना अब तक। अब तक केवल तेरह लाख पृथ्वियों तक पहुँचा है आधुनिक समाज। जब मैं पुरातन काल की चित्रावलियों में जाता हूँ, तो पुरातन काल के वैज्ञानिकों ने यज्ञ के ऊपर इतना अनुसन्धान किया था कि यह जो यज्ञमान होता और उद्गाता विद्यमान है। वह उनका चित्र बनकर के द्यौलोक को जाता था। उनकी चित्रावलियों के यन्त्र को ऋषि मुनियों के मानो देखो, वैज्ञानिकों के कक्ष में विद्यमान थे। इनका चित्र आ रहा हैं, शब्द के

साथ में चित्र है। शब्द ही विद्यमान है। वही मानो देखो, जाता हुआ द्यौलोक को प्राप्त होता है। इस प्रकार का विज्ञान, इस याग के ऊपर रहा है।

गौघृत का प्रभाव

आधुनिक काल मानो देखो, जिसके ऊपर वैज्ञानिकजन विचार कर रहे हैं कि आधुनिक काल का जो ये जगत दूषित हो रहा है। विज्ञान के वांगमय से दूषित हो रहा है, मुझे कुछ ऐसा प्रतीत होता है कि आधुनिक काल का वैज्ञानिक कहता है कि गौघृत में यह क्षमता है कि वह अग्नि में प्रवेश करने से वायु को शुद्ध बना सकता है। वायुमण्डल के अशुद्ध परमाणुओं को देखो, निगल सकता है। ऐसा देखो, आधुनिक काल के वैज्ञानिकों का कुछ मत बन रहा है। मैं ये कहता हूँ कि मत ही नहीं है यह शाश्वत मानो यथार्थ है। इस क्रिया को मानव को करना चाहिए। राष्ट्र में, राजा के गृह में, याग होने चाहिए।

जैसे भगवान राम जिसकी आज हम पूजा करते हैं। देखो, राम ब्रह्म की आभा लगे रहते थे। परन्तु देखो, जब भगवान राम के जीवन को मैं दृष्टिपात, पूज्यपाद गुरुदेव के साथ मुझे ये सौभाग्य मिला परन्तु मैं अपनी आभा में ये उच्चारण करता रहा हूँ। सम्भूति ब्रह्माः मानो उनके राष्ट्र में प्रत्येक गृह में याग हो रहे हैं। वहाँ द्रव्य की सूक्ष्मता तो नहीं है। परन्तु आधुनिक काल का राजा तो पूज्यपाद ऐसा है कि समाज के द्रव्य को लेकर अपने उदर की पूर्ति करना चाहता है। परन्तु वह याग में लग जाए तो उदर की पूर्ति कैसे होगी। उदर की पूर्ति तो तभी हो सकती है जब मानव शुभ देखो, राष्ट्रवाद की अर्थ तभी पूर्ण होगा जब कि वह देखो, शुभ कार्यों का करेगा।

जिस काल में वह शुभ कार्यों का करेगा तो राष्ट्रवाद देखो, उनका महान बन जाएगा। ऐसा कामना राष्ट्र करता रहता है। जब यह शुभ कर्म करने लगोगे, तो हम रामराज्य किसे कहेंगे? जब यह विचार राष्ट्रीयता में बन जाते हैं। तो विचार विनिमय में क्या, मेरे पूज्यपाद! इसके बाद मैं यह विचार, मैं राष्ट्रीयकरण याग का निवारण

करने के लिए मेरा एक ही मत रहा है...।